



किया था, परिणाम उसका शुभ नहीं निकला।”

सारे सामन्तों की राय यही थी कि तुगलक और जेसा को मृत्यु-दण्ड दे दिया जाय।

हम्मीर ने अन्त में उठकर कहा, “प्रियजनो और मेवाड के रक्षको ! आपकी राय के विरुद्ध नहीं जा सकता हूँ। लेकिन मुझे चारण जी की एक बात स्मरण हो आई है। व्यर्थ का रक्तपात ही हिंसा होती है। जो शत्रु आहत है अथवा हमारे वन्दीगृह में है, उन्हें मृत्यु का दण्ड देना, न्याय-संगत प्रतीत नहीं होता। राजपूत सदा धर्म-युद्ध करता आया है। वह उसे भी क्षमा कर देता है जो उसका घातक होता है। मैं चाहता हूँ कि चित्तौड़ की स्थिति निरन्तर युद्ध के कारण अत्यन्त क्षीण हो गई है। मेरी आपसे विनती है कि आप मुहम्मद तुगलक को मृत्यु दण्ड न देकर अर्थ-दण्ड दें। जिससे हम चित्तौड़ और समस्त मेवाड का पुनर्न्याय कर सकेंगे। उसके विकास और निर्माण में हमें बहुत बल मिल जाएगा। प्रियम जौहर और हमारा चित्तौड़ से अलग रहने का कारण उसका हर अंग दुर्बल हो चुका है। अब हमें नए सिरे से इसे बसाना है। इसकी कृषि का विकास करना है। शत्रु का सामना करने के लिए नए शस्त्र बनाने हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि इसे अर्थ का दण्ड दिया जाय।” और जेसा को मुक्त नहीं किया जाय। वह घर का भेदी है, कभी न कभी अवश्य लका को ढाएगा।”

हम्मीर ने देखा कि बारूकी और पवनसी के अतिरिक्त कोई भी उस से सन्तुष्ट नहीं है। कामदार भी नहीं। तब उसने खड़े होकर कहा, “अन्तिम निर्णय देखो माँ बरवडी करेगी। हम सब उसी के पाम चलें। उसकी आज्ञा और सहायना से हम आज इस स्थिति को पहुँचे हैं, अब उसका परामर्श आवश्यक है।”

सब माँ बरवडी के पास पहुँचे।

नारी स्थिति उसके समक्ष रखी गई। माँ बरवडी ने कहा, “देख को तुगलक के सिर की नहीं, घन की आवश्यकता है। मेरा भी ऐसा विचार

# खून का टीका

[राणा हम्मीर के जीवन पर आधारित उपन्यास]

लेखक

यादवेन्द्रेशर्मा 'चन्द्र'



सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण १९६०

मूल्य रु० ४०० न० पै०

प्रकाशक

विद्या प्रकाशन मन्दिर

मुद्रक

१६८१ दरियागज, दिल्ली—६

हरिहर प्रेस दिल्ली ।

राजस्थान के छद्म इतिहास को प्रकाश में लाने  
वाले महान इतिहासवेत्ता

\* श्री कर्नल जेम्स टॉड

\* गौरीशंकर हीराचन्द श्रोत्रा

\* भूता नैणसी

\* कविराजा श्यामल दास

को श्रद्धा सहित सादर भेंट

# मैं इतना ही कहूँगा

प्रस्तुत उपन्यास चित्तौड़ के राणा हम्मीर के जीवन पर आवा-  
रेत है।

राणा हम्मीर के जीवन की कुछ घटनाएँ बड़ी विवादास्पद हैं।  
फिर भी मैंने भरपूर सच्चाई के साथ उन घटनाओं का चित्रण करने  
का प्रयास किया है तथा सभी इतिहासवेत्ताओं के वर्णन के सत्य को ग्रहण  
करने की चेष्टा की है।

अनगसिंह, पवनसी और शेरा-मेरा, काल्पनिक चरित्र हैं, हालांकि  
हम्मीर के पास ऐसे कई योद्धा थे पर उनके सही नाम न मिलने पर मैंने  
इन चरित्रों की उन्हीं के आधार पर काल्पनिक सर्जना कर दी।

उपन्यास में तत्काल की प्रभावशाली घटनाओं का वर्णन आज के  
पाठकों, छात्रों और देश की भावी पीढ़ी के सामने कुछ नए प्रश्न रखेगी  
कि प्राचीन भारत के महान शासक अत्यन्त दूरदर्शी थे और आज जिन  
साधनों से देश का पुनर्निर्माण हो रहा है, वे पहले भी यहाँ प्रचलित थे।

उपन्यास की श्रुतियों के लिए मैं विज्ञ जनों से क्षमा के साथ परामर्श  
भी चाहूँगा। ऐतिहासिक उपन्यास है, वह भी प्रथम, अतः क्षमा का अधि-  
कारी हूँ ही।

इस उपन्यास में उन्हीं की सामग्री का उपयोग किया गया है जिन्हें  
यह उपन्यास समर्पित है।

साले की होली ।  
वीकानेर—  
(राजस्थान)

}

—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'



## राजस्थान के बारे में

There is not a petty state in Rajasthan that has not had its THERMOPLYAE and scarcely a city that has not produced its LEONIDAS

अर्थात् राजस्थान में कोई छोटा-सा राज्य ऐसा नहीं है, जिसमें थर्मो-पोल (यूरोप का एक स्थान) जैसी रणभूमि न हो और शायद ही ऐसा नगर मिले जहाँ लियोनिडास जैसा वीर पुरुष उत्पन्न न हुआ हो ।

—कर्नल जेम्स टॉड



“मुझे बलिदान दो, मुझे बलिदान दो ।” एक परिचित-सी ध्वनि सिसोदिया वंश के स्वाभिमानी एवं धर्मपरायणी, एकलिंगेश्वर दीवारण राणा रत्नसिंह के विश्वसनीय योद्धा सामन्त लक्ष्मणसिंह “लाखा” के कण-कुहरो में ध्वनित प्रतिध्वनित हुई । वे उन्मत्त हो उठे । अपने कक्ष में जहाँ वे रात्रि के नीरव-निस्पन्द क्षणों में मेवाड़ की विकट समस्याओं में उलझे निद्रा की अराधना करने आए थे, एक परिचित ध्वनि में गुन उलझ गए ।

दीपक उनके सज्जित कक्ष में ज्वलित था । मखमली शय्या पर वे अर्ध-शायित थे । अभी उन्होंने लम्बी अचकन और घोती पहन रखी थी जो हिम-सी श्वेत थी ।

बाहर एक भृत्य हाथ में खड्ग लिए पहरा दे रहा था ।

“मुझे राज-बलि चाहिए ।” लाखा उठ खड़े हुए । उन्माद-ग्रस्त प्राणी की भाँति उन्होंने कक्ष को देखा । कोई नहीं था ।

उनके गढ़ के बाहर कोई श्वान लम्बे स्वर में भोक उठा । पवन का तीव्र भोका वातायन से आया और दीपक की लौ लील कर चला गया । लाखा के अंग-प्रत्यंग में पसीना छूट गया । उन्होंने आकुल हो कुछ बोलना चाहा । तभी झुम्मा के भयावह हिलोरें आने प्रारंभ हो गए । उनका काँपता स्वर उन हिलोरो में इस भाँति लुप्त हो गया जिस तरह पगली के अट्टहास में सब साधारण का स्वर खो जाता है ।

‘ प्रचंड तिमिर ! भयानक शांति !

“मुझे रक्त चाहिए ।” लाखा ने देखा—कुलदेवी साक्षान् उनके समक्ष खड़ी है । विकराल मुद्रा और विशाल रक्तिम नेत्र ।

लाखा का सारा तन जड़ हो गया ।

कठिनता से वे इतना ही रह पाए, “माँ ।”

“चित्तौड़ की रक्षा चाहते थे लाखा तो मुकुटधारी राज-पुत्रों का बलिदान दो । अपने आपको महाराणा के लिए बलिदान कर दो ।”

देवी अर्न्तर्ध्यान हो गई ।

करुण सिसकियाँ एवं घोर तिमिर देखकर सेवक ने कक्ष में प्रवेश किया और उसने पुनः प्रकाश किया । लाखा जी को अचेत देख वह भय-भीत हो उठा और शीघ्रता से वह वहाँ से भागा ।

लाखा जी बारह पुत्रों के गौरवशाली पिता थे । सभी पुत्र पराक्रमी और त्यागी । महाराणा के लिए सबस्व बलिदान करने वाले ।

ज्येष्ठ पुत्र अरमी ने आकर अपने पिता को नँभाला । उपचार किया गया । थोड़ी देर में उन्हें चेतना लौटी । वे अर्थ मरी ऋषि से अरसी की ओर देखकर बोले, “अरसी, विगत ममर में आठ सहन वीरों के प्राणों की आहुति से माँ की प्रचंड तृष्णा शांत नहीं हुई है । वह मुझे बार-बार कहती है—जब तक राजमुकुटधारी राजकुमार चित्तौड़ की रक्षार्थ सम-राग्नि में स्वाह न होंगे तब तक सिसौदिया-वंश का प्रचंड मार्तण्ड यवन के कोप-रूपी वादलो से मुक्त नहीं होगा ।”

अरमी कुछ बोले कि अजयमिह व अन्य पुत्र गए तथा दाम-दासियाँ भी आ गए । सभी लाखा के चारों ओर बैठ गए । एक भृत्य इन की सुगन्धि वातावरण में फैला रहा था । कुछ दासियाँ मोर पक्ष के बने पखों से हवा कर रही थी । सज्जित वक्ष की प्राचीरो पर लटकती तलवारे दीपकों का तीव्र प्रकाश पाकर दीप्त हो उठी । क्षणिक गभीर मौन छाया हुआ था ।

अरसी गभीर स्वर में बोला, “आपको भ्रम हो गया है पिताश्री ।”

“नहीं अरमी । केवल आज नहीं, सदा माँ मुझसे बलिदान माँगती

रहती है। अरसी तुम नहीं जानते—भगवती की आज्ञा को पूर्ण नहीं किया गया तो मेवाड जल कर भस्म हो जाएगा। यवन मेवाड़ियों की मान-मर्यादा को ध्वंस कर हमारे गौरव के चिह्न तक मिटा देंगे।”

लाखा के सारे पुत्र मौन हो गए।

अब वे गाव-तकिए के सहारे बैठते हुए बोले, “खिलजी चित्तौड़ को विजय करके ही साँस लेगा। राणा जी अब शक्तिहीन हो गए हैं। निरंतर का यह घेरा हमारे लिए भूख-प्यास का कारण बन गया है। चित्तौड़ के महाबली अपना शौर्य दिखलाकर स्वदेश अनुराग का अविस्मृत उदाहरण छोड़ गए हैं। इतना विपुल-बलिदान लेकर भी विजयश्री हम पर प्रसन्न क्यों नहीं है? तुम नहीं जानते मेरे पुत्रो—इस शोकातुर वातावरण में, रात्रि के नीरव-निस्तब्ध क्षणों में माँ का विकराल मुख मुझे कहता है—“मैं भूखी हूँ—मैं भूखी हूँ।”

‘आप शांत रहिए ठाकुर सा।’

लेकिन लाखा शांत नहीं रहे। वे तन्द्रिलावस्था में आतुर व उद्विग्न होकर चौंक उठते और आतंकित दृष्टि से यत्र-तत्र देखकर कह उठते, “चित्तौड़ के भविष्य की रक्षा करनी है तो माँ को बलि दो।”

सम्पूर्ण रात्रि इसी तरह व्यतीत हुई।

प्रभात हुआ।

महाराणा के सम्मुख लाखा जी हाजिर हुए।

समस्त सामन्त व सरदार उपस्थित थे। लाखा जी ने अपनी बात पुन दोहराई। अस्त्र-शस्त्रों से सज्जित चित्तौड़ के सारे वीर स्तब्ध से खड़े थे। लाखा जी कह रहे थे—“चित्तौड़ के सम्मान को बचाना है तो देवी के वचनों का पालन किया जाय। देवी ने मुझे स्वप्न में कहा है कि मैं राजबलि चाहती हूँ लाखा। जब तक राजमुकुटधारी राजकुमार मेवाड की रक्षार्थ रणभूमि में उत्सर्ग नहीं होंगे तब तक मेवाड पर शत्रुओं का आक्रमण होना वन्द नहीं होगा।”

राणा रत्नसिंह जी बोले, “यह भ्रम भी हो सकता है।”

“भ्रम नहीं है एकलिंगेश्वर दीवाण जी, यह सत्य है। वीरो के स्वप्न सत्य में सदा परिणित होते आए हैं। हमारा धर्म में अपनी कुल-देवी में आस्था और विश्वास है। यह भ्रम भी है तो कितना गौरवमय भ्रम है। जो व्यक्ति अपनी जननी जन्म-भूमि के लिए उत्सर्ग होगा, वह कितना भाग्यवान् कहलाएगा। आज हमारे समक्ष एक ही जलता प्रश्न है— मेवाड़ की रक्षा।

दरबार के अन्तिम छोर पर अरसी बैठा था। निरन्तर तीन रात-दिवस से वह चिन्तित था। उसके पिताश्री निरन्तर एक बात पर अड़े हुए हैं। उनके कथन में गहरी आस्था है। क्या पता उनकी कल्पना सत्य का आधार लिए हुए हो, क्या पता पिताश्री का आग्रह में प्रभु का कोई आदेश हो? आस्तिक सत्कारी अरसी के मन में निम्ना जागी। पिताश्री के निरन्तर आग्रह ने उसके अन्तराल में विश्वास जगा दिया।

अरसी ने अभिवादन करके अपने पिता के स्वप्न को बल प्रदान किया। वह समथन करता हुआ बोला, “राणा जी, पिता के वचनों पर गौर करें। हम सब ईश्वर पर बड़ी आस्था रखते हैं, अतः हमें उनके कथन को व्यर्थ या स्वप्न समझ कर सवथा निर्मूल नहीं समझना चाहिए। आज मेवाड़ के चारों ओर विपत्तियों के बादल मँडरा रहे हैं, इस अवसर पर हमें देवी-देवताओं को सर्वोपरि सत्य मानकर नए ढंग व नए उत्साह से युद्ध का श्री-गणेश करना चाहिए।”

राणा जी सिंहासन से एक क्षण के लिए उठ खड़े हुए। अशान्ति-जनित-म्लान मुख को एक पल के लिए दोनों हाथों की हथेली में छुपा कर वे दीर्घ-निश्वास छोड़कर बोले, “क्रुद्ध समझ में नहीं आता है।”

सिंहासन के दोनों ओर दो सेवक मयूर परो के पखे भल रहे थे। मार अधिकारी विस्मय विमुग्ध-से बैठे थे।

लाखा जी पुनः खड़े हुए। पक्ति वद्ध पदानुसार बैठे वीरो के मध्य एक चक्कर लगाकर वे गम्भीर भारी स्वर में बोले, “मैं भूठ नहीं बोलता हूँ। राणा जी, मैं देवी का सच्चा भक्त हूँ। उसने जब कभी

मुझे स्वप्न या प्रत्यक्ष मे दर्शन दिए, किसी प्रयोजन को लेकर ही दिये हैं। वह प्रयोजन सत्य के आधार से हीन नहीं होता है। हमारे अनेक शूरमा इस रण मे काम आ चुके हैं। दिन-प्रतिदिन हमारी शक्ति क्षीण होती जा रही है, इस पर भी हमने देवी की आज्ञा का पालन नहीं किया, तब हमे भीषण परिणाम से टकराना होगा।”

लाखा जी अपने आसन पर आकर बैठ गये। सारे दरवार मे सन्नाटा छाया रहा। चित्तौड़ के विशाल गढ़ के चतुर्दिक खिलजी की अपार सेना पड़ी थी। अलाउद्दीन रूपासक्ति के वशीभूत होकर पद्मिनी को लेने के लिए अपना सारा रण-कौशल चित्तौड़ हथियाने मे लगा रहा था।

एक अन्य सरदार ने उठकर कहा, “लाखा जी झूठ नहीं कहते।” और देखते-देखते लाखा जी की बात को सब समर्थन प्राप्त हो गया। माँ को राज-बलि दी जाएगी—इस बात पर सब का एक मत हो गए।

समस्या जटिल थी। कौन सामन्त अपने वारह पुत्रों का एक साथ बलिदान करना चाहेगा। मेवाड़ में बहुत से ऐसे सामन्त थे जिनके कई-कई पुत्र थे, लेकिन लाखा जी के स्वप्न पर इस तरह अपने वश को क्यों कोई मिटाने को तत्पर होता? जब राणा जी ने पूछा कि कौन अपने पुत्रों का उत्सर्ग करेगा तो दरवार मे गहरा मौन छा गया, जैसे वहाँ कोई प्राणी उपस्थित ही नहीं है।

तब लाखा जी के चेहरे पर ग्लानि और सकोच दोनों भाव एक साथ आए और मिटे। उन्होंने विनती भरी दृष्टि मे अपने पुत्रों की ओर देखा। पुत्रों मे निमेष उत्पन्न हो गया। बाप की आन की रक्षा का प्रश्न लाखा जी के दोनों बड़े पुत्रों के सम्मुख नाच उठा। अरसी आगे बढ़ा। क्षण भर के लिए उसकी आँखों मे जोश स्फूर्तिग सा ज्वलित हुआ और वह पितृ-सम्मान-रक्षा-हेतु बोला, “मैं सबसे पहले मुकुट धारण करूँगा।”

अरसी का यह उद्घोष सुनकर सभी सरदार स्तब्ध हो गए। सब की अभिप्राय भरी दृष्टि अरसी पर केन्द्रित हो गई। अरसी कहे ही जा

रहा या—“माँ की धुद्धा शात करने के लिए इतनी देर नहीं करनी चाहिए। हमारी अधिष्ठात्री प्रचंड प्यास में आकुल होकर रक्त की बलि माँग रही है। मेवाड हेतु राणा जी को महप इस उत्सर्ग के लिए तत्पर हो जाना चाहिए और मुझे राणा घोषित करके मैन्य का संचालन सौंप देना चाहिए। अरसी की अजानुबाहुओं का रक्त इस उष्णता में दौड़ा कि उसका हाथ खग की मूठ पर चला गया। नेत्र अगारों से दीप्त हो उठे। तनिक गम्भीर स्वर में सब पर दृष्टिपात करता हुआ बोला “यह भावानी साक्षी है राणा जी, एकलिंगेश्वर की आज्ञा से आपका यह चाकर अपना सवस्व विसर्जन करके मेवाड के गौरव को अधुष्ण रखेगा। माँ का स्वप्न हो या पिता का भ्रम किन्तु यह सत्य है कि मुझे उत्सर्ग अपनी जन्मभूमि के लिए होना है। एक वीर दुष्टों का दलन करता हुआ वीर-गति को पा जाए, यही उसके जीवन के श्रेय की उपलब्धि है।”

युवराज का यह उद्घोष उपस्थिति में आन्दोलन मचाने के लिए पर्याप्त था। अन्य पङ्कक्तियों के हाथ भी अपनी-अपनी तलवारों पर चले गए। लाखा जी का द्वितीय पुत्र अजयसिंह गज करके बोला, “नहीं मेरे होते हुए आपको देश के लिए बलिदान नहीं होना पड़ेगा। आप ज्येष्ठ-पुत्र हैं, पिताजी के बाद आप वंश-रक्षक के रूप में रहेंगे इसलिए यह नाय मुझे मापा जाय। आप विश्वाम रख, मैं ममरभूमि में यवन सेना को चिन्नीड के पावन-प्रासादों का स्पर्श भी नहीं करूँगा।”

आदचय की एक तन लहर सभी सरदारों के हृदय-छोरो को स्पर्श करती हुई वायित हो गई। उत्सर्ग की यह होड मुद्दा में जान फूँकने के लिए काफी थी।

एक सरदार आगे उठकर वाला, इस उत्सर्ग को मैं पूरा करूँगा, जन्मभूमि मेवाड की रक्षा के लिए कुछ प्राणों को त्याग करके मोक्ष का भागी बनूँगा।”

राणा जी भी जोश में भर उठे। खड़े होकर बोले, “राजमुकुटधारी राजकुमार की बलि ?”

अरसी अब राणा जी के मन्त्रिकट था। उसकी सुन्दर गहरी विशाल आँखों में दृढ़ निश्चय की अरुणिमा स्पष्ट लक्षित हो रही थी। आश्रत्यग में एक प्रकार की जडता आ गई थी। म्यान में से तलवार निकाल कर वह बोला, “वाद-विवाद में समय नष्ट मत कीजिए। आप जितनी देर करेंगे, शत्रु को सँभलने का उतना ही अवसर मिलेगा, अतः आप से मेरी प्रार्थना है कि मुझे यह भार सौंपा जाय। मैं ज्येष्ठ-पुत्र हूँ इस पद का अधिकारी हूँ, आपको मेरी शक्ति का परिचय भी है।”

“फिर भी ।”

“वप्पा रावल का यह मुकुट मुझे पहना दिया जाय, मिसौदिया कुल के सूर्य को सौंपा जाय, मुझे मेवाड की मान-मर्यादा की रक्षा दी जाए। मैं जीते जी पगड़ी को नहीं गिरने दूँगा।”

अन्त में निश्चय हुआ कि लाखा जी का भ्रम हो या देवी की आज्ञा, इसे अडिग आस्था के साथ पूर्ण की जाय और प्रथम महाराणा अरमी को बनाया जाय। मेवाड की सकट-स्थिति देखकर यही शुभ होगा कि सारे मेवाडवासी लाखा जी की बात स्वीकार कर लें और चित्तौड़ पर उत्सर्ग हो जाए। पता नहीं, उनका यह स्वप्न, स्वप्न न हो, देवाज्ञा हो।”

शत्रु की पावन ध्वनि और मंगल मन्त्रों के मध्य अरमी ‘अरिसिंह’ के सम्मान सूचक नाम के साथ ‘महाराणा’ बना दिया गया और वह मेवाड की शेष शक्ति को एकत्रित करके चित्तौड़ की रक्षा हेतु ममर भूमि में उतर पड़ा। उस दिन भास्कर की भीषण उष्णता में घमासान नग्नान हुआ। मानवी शोणित की प्रवाहित हुई मरिनाएँ तथा यत्र-तत्र-मवंत्र विगरे ऋण्ड-मुण्ड भयावह प्रतीत हो रहे थे। निर्दयी वनचरो द्वारा उजड़े खेतों की तरह वह भूमि नर-पिशाचों द्वारा खडित मौन्दर्यमयी मानव-देहों में भरी थी।

रात्रि का उन्मन आँचल मानवीय मर्मन्तिक क्रन्दन एव चीत्कारो के सग विशाल मसृति पर आच्छादित हुआ। मारु का उन्माद भरा स्वर जो वीरो के कर्ण-कुहरो में रुक जाने पर भी मुनाई पड़ रहा था, अब आन्तनादो में परिवर्तित हुआ जान पड़ा।

राणा अरिसिंह श्रात-कालात से अपने खेमे में मुख-प्रक्षालन करके शय्या पर अधशायित थे। सेवक भोजन का थाल उनके सम्मुख लाया। उन्होंने अस्वीकृति सूचक सिर हिला दिया। पुन विचारमग्न होकर, हथेली का सम्बल लेकर बैठ गए।

एकात व गहरा मौन।

मन में विचारो का अविराम आन्दोलन।

मोच रहे ये, “युद्ध क्यों होता है? मनुष्य मनुष्य को इतनी निर्दयता से क्यों मारता है? हम सब सभ्य कहलाने वाले प्राणी दुर्बुद्धि के पक्ष पर आरुढ़ होकर नगर के नगर क्यों ध्वश कर देते हैं?”

अरिसिंह अगात हो, उठ खड़े हुए।

उल्का पवन के झोके से हिल उठी। उसके कापते प्रकाश में सारा का मारा खेमा डोलता हुआ प्रतीत हुआ मानो घरती पर भूकम्प आ गया हो।

क्षण भर के लिए वे स्वयं भयभीत हो उठे। क्षणिक विचार मन में आया कि विनाश पर विनाश हो रहा है। अपने विशाल भाल पर हथेली फेर कर वे मन ही मन उडबडाए—उमका मूल कारण है—मनुष्य की अविचार लिप्ता।

रूप और अर्थ की चिरन्तन भूख।

यवनपति गिलजी मेवाड के विपुल मौन्दय के पीछे उन्मत्त होकर उसको त्रिन्ष्ट करने पर तत्पर हो गया है। उसकी काम-नृणा नगरशय के आवरण में आच्छन्न होकर विवश पर केन्द्रित हो गई है। वासना में आवृत्त इवा वह मानवीय सवेदनाओं में परे होकर मद, दभ, अहकार, ईर्ष्या, द्वेष अनाचार और हिंसा की प्रतिमूर्ति बन गया है। पश्चिमी नहीं



मिली तो खिलजी की काम-लिप्सा अतृप्ति की बीचियो मे लघु-तरणी सी सम्बलहीन होकर डोल उठी । वह सैन्य-बल से अपने वचनों को विस्मृत कर चित्तौड़ को खँडहर के रूप मे देखना चाहता है, चित्तौड़ की मान-मर्यादा पद्मिनी को अपनी वेगम के रूप मे अपने हरम । यह असम्भव है, असम्भव । सूर्यवशी आहुतियो का अम्बार लगा देंगे, पर अपनी आन नहीं देंगे ।”

सैन्य-संचालन का भार पवनसी को सौंपा गया । वह तलवार हित मस्तक नवा कर बोला, “दीवारण जी की जय ।”

“पवनसी ।” अरिर्षिह सावधान होते हुए बोले ।

पवन सी तरुण-अरुण था । उसके अग-अग से रक्त टपकता हुआ दीख रहा था । सिर झुकाकर बोला, “हुक्म सा ।”

“सूर्य-देवता से दर्शन के साथ यवनों पर भयकर आक्रमण किया जाय ।”

“पर महाराज यवन सेना असंख्य है ।”

“पराक्रम सख्या पर नहीं आका जाता । मेवाड का योद्धा किमी का घर नहीं उजाड रहा है, वह किसी की बहू-बेटी की आबरू से नहीं खेल रहा है, वह किमी के अधिकारों को राहू की भांति नहीं अस रहा है ।” एक सास मे इतना लम्बा वाक्य बोलने से अरिर्षिह का साँस झूल गया । वे रुककर पुन बोले, “मेवाड का योद्धा अपने चित्तौड़ की रक्षा कर रहा है, वह अपने देश की आन और वान के लिए बलिदान हो रहा है, वह अपनी माँ का गौरव और बहिन की राखी की लाज रख रहा है । उसका प्रतिरोध करना अत्यन्त दुष्कर है ।”

पवनसी सिर नवा कर खेमे से बाहर हो गया ।

×

×

×

प्रभात हुआ ।

प्राची-प्रागण मे उषा की अरुणिमा प्रस्फुटित हुई । क्षितिज पर विस्तृत रक्तिम आभा रणदेवी के अधरो पर लगे शोणित सी जान पड़ी ।

आकाश में गिद्ध मड़गान लगे थे। चतुर्दिक अम्य-अम्यो की झका-मुनाई पड़ रही थी।

रगभेरी का निनाद आरम्भ हुआ।

मार का गगन-भेदी स्वर के साथ राजपूतों के नरग उठ आर बढ़े। जय एर्कलिगेडवर के साथ हर-हर महादेव के उद्घोष में राजपूतों सेना अग्रसर हुई। उधर यजनार्थपति भी अत्रिक सैनिका के साथ रग-प्रागण में अवतरित हुआ। गुप्तचर ने अरिर्मह को समाचार सुनाया कि आज यवना की ओर से गढ़ पर प्रचंड आक्रमण होगा।”

‘हम भी प्रत्याक्रमण उसी जोश में करना चाहिए।’

पवनसी की हथेली में कल धार तग चुका था, अत वह तनिक निरुत्साहित सा बोला, “किन्तु शक्ति।”

अरिर्मह ने एक हृवार भरी। पवनसी के कंधे पर हाथ रखकर वे गभीर स्वर में बोले, “हममें अजेय शक्ति है। चित्तौड़ की रक्षा हम करग। जब मैं रगभूमि में बहुत आगे बढ़ जाऊँ और शत्रु की सेना मुझ परग्न की चष्टा कर तब तुम जोर का आक्रमण कर देना उस पद्धति में उन्हें अन्धन हानि उठानी पड़ेगी।”

पवनसी अपने स्वामी की आज्ञा मानना ही अपना प्रम समझता था।

मार रग अत अपन भरपूर जोश में था।

संधप की भीषण वल्लि तिय मवात्तामी चित्तौड़ की रक्षा में आग ध। हर हर महादेव की प्रगत राणी अनित प्रतितनित हा रही।

राता पनाथा के म ध धमागान पुट हुआ।

राता निरुत्तरित आवन मानसी रत में निराहित हा गया। तारतीय भयात निर्भीकता प्राणिया के समन साक्षान हा रही। शान्त हा पुट यनिर्गमन रहा। जब अरिर्मह नेमे का आर दाट रहा तब एक आवन अनित अवतर रहा था। युद्ध को रोता—पुट का जाता। यह पुट मनुष्या का विनाश कर देगा, उन्हें रात में पना

देगा ।”

भोजन और अमल-पानी करके अरिसिंह उल्का के सम्मुख आकर खड़े हो गए । आज युद्ध में वे मृत्यु के मुँह से बाल-बाल बचे थे । ढग भर के लिए उन्होंने कुलदेव एकलिंगेश्वर की अभ्यर्थना की । गव्या पर नेत्रोन्मीलन करके वे अवग से उठे—“महालोक की महायात्रा । नहीं, नहीं उससे भेंट पूर्व मृत्यु का आलिङ्गन ? नहीं-नहीं । वे अपनी पत्नी देवी के दर्शनसे पूर्व मृत्यु नहीं चाहते । अपने आपको समाप्त करना नहीं चाहते ।

मधुर कल्पना के वितान बुनते गए ।

उन्हें लगा—ग्रामवाला लावण्यमयी देवी अपने अप्रतिम रूप चद्रिका से कण-कण को आह्लादित कर रही है । कमनीय अग-सौष्ठव आकर्षण के केन्द्र बिन्दु बने हुए हैं । अनन्तर उन्हें लगा कि मारा खेमा रूप-यौवन मद से सुवासित हो उठा है । विलास-वैभव से परिपूर्ण युगल मृणाल मम सुडोल बाँहे उन्हें अपने में आवेष्टित किए हुए हैं ।

अतीत स्वप्न सा उन्हें स्मरण होने लगा—

अश्व का तीव्र वेग से भागना और सूअर का पीछा करना ।

अरसी उस दिन आखेट हेतु निकला था । वन्य-पशु सूअर का सर्व-प्रथम सामना हुआ । सूअर तीर से आहत होकर द्रुतगति से घने लह-लहाते खेतों की ओर भागा ।

अरसी ने उसका पीछा करना नहीं छोड़ा । वह खेतों को गँदता हुआ सूअर का पीछा कर रहा था । ज्वार की बालियाँ पवन के भकोरों में हिल रही थी । अश्व के पाँवों की खड़खड़ाहट मुनकर एक ग्राम-वाला ने गर्ज कर कहा, “ओ श्वारोही, ठहर, खेत को मत उजाट ।”

सगीत-सा मधुर स्वर ज्यों ही अरसी के कानों में पड़ा, उसने लगाम थाम ली और चकित-ना वह उस युवती को निहारने लगा । युवती सकोच से स्तब्ध सी हो गई । कला की अधिष्ठात्री नारी-सौन्दर्य की अजेय अभेद्य रूप, अतुल किन्नरी-सौन्दर्य ।

आकाश में गिद्ध मँडराने लगे थे। चतुर्दिक अम्र-अम्रों की म्का-मुनाई पड़ गयी थी।

रगभेरी का निनाद आरम्भ हुआ।

मारु का गगन-भेदी स्वर के साथ राजपूतों के चरण उठ आगे बढ़े। जय एकलिंगेश्वर के साथ हर हर महादेव के उद्घोष में राजपूती सेना अग्रसर हुई। ऊपर यवनाधिपति भी अधिक सैनिकों के साथ रग-प्रागण में अवनति हुआ। गुप्तचर न अरिसंह को समाचार सुनाया कि आज यवना की ओर से गढ़ पर प्रचंड आक्रमण होगा।”

हमें भी प्रत्याक्रमण उम्मी जोश में करना चाहिए।”

पवनसी की हथेली में कल धाव तग चुका था, अतः वह तनिक निरुत्साहित या बोला, “किन्तु शक्ति।”

अरिसंह ने एक हुकार भरी। पवनसी के कंधे पर हाथ रखकर वे गभीर स्वर में बोले, “हममें अजेय शक्ति है। चित्तौड़ की रक्षा हम करेंगे। जब मैं रगभूमि में बहुत आगे बढ़ जाऊँ और शत्रु की सेना मुझ घेरन की चूँक करे तब तुम जोर का आक्रमण कर देना इस पत्रिका में उन्हें अन्याय हानि उठानी पड़ेगी।

पवनसी अपने स्वामी की आज्ञा मानना ही अपना उस समय का था।

मारु राग अग्र अग्र भरपूर जोश में था।

संधप की भीषण उद्भि तिय मवादवामी चित्तौड़ की रक्षा में आगे बढ़े। हर हर महादेव की प्रबल गायत्री चरित प्रति चरित हा उठी।

दानों नाना के मय घमामान युद्ध हुआ।

य। ता निरालकित आनन मानवा रक्त में निरोहित हो गया। नायकीय भयानक विभीषिता प्राणिया के समक्ष साक्षात् हा उठी। शान भी युद्ध अनिश्चित रहा। जब अरिसंह वेम की ओर पीछे हटने पर एक आहत चित्त उजड़ रहा था। युद्ध को रोका—युद्ध को रोका। यह युद्ध मनुष्य का विनाश कर देगा, उन्हें राक्षस बना

देगा ।”

भोजन और अमल-पानी करके अरिर्मिह उल्का के सम्मुख आकर खड़े हो गए । आज युद्ध में वे मृत्यु के मुँह से बाल-बाल बचे थे । क्षण भर के लिए उन्होंने कुलदेव एकलिंगेश्वर की अभ्यर्थना की । शय्या पर नेत्रोन्मीलन करके वे श्रवण से उठे—“महालोक की महायात्रा । नहीं, नहीं उससे भेंट पूर्व मृत्यु का आलिङ्गन ? नहीं-नहीं । वे अपनी पत्नी देवी के दर्शनसे पूर्व मृत्यु नहीं चाहते । अपने आपको समाप्त करना नहीं चाहते ।

मधुर कल्पना के वितान बुनते गए ।

उन्हे लगा—ग्रामवाला लावण्यमयी देवी अपने अप्रतिम रूप चद्रिका से कण-कण को आह्लादित कर रही है । कमनीय अग-सौष्ठव आकर्षण के केन्द्र बिन्दु बने हुए हैं । अनन्तर उन्हें लगा कि सारा खेमा रूप-यौवन मद से सुवासित हो उठा है । विलास-वैभव से परिपूर्ण युगल मृणाल सम सुडोल बाँहे उन्हें अपने में आवेष्टित किए हुए हैं ।

अतीत स्वप्न सा उन्हे स्मरण होने लगा—

अश्व का तीव्र वेग से भागना और सूअर का पीछा करना ।

अरसी उस दिन आखेट हेतु निकला था । वन्य-पशु सूअर का सर्व-प्रथम सामना हुआ । सूअर तीर से आहत होकर द्रुतगति में घने लह-लहाते खेतों की ओर भागा ।

अरसी ने उसका पीछा करना नहीं छोड़ा । वह खेतों को रौंदता हुआ सूअर का पीछा कर रहा था । ज्वार की बालियाँ पवन के झकोरों में हिल रही थी । अश्व के पाँवों की खड़खड़ाहट सुनकर एक ग्राम-वाला ने गर्ज कर कहा, “ओ ग़वारोही, ठहर, खेत को मत उजाड़ ।”

सगीत-सा मधुर स्वर ज्यों ही अरसी के कानों में पड़ा, उसने लगाम थाम ली और चकित-सा वह उस युवती को निहारने लगा । युवती सकोच में स्तब्ध सी हो गई । कला की अधिष्ठात्री नारी-सौन्दर्य की अजेय अभेद्य रूप, अतुल किन्नरी-सौन्दर्य ।

अरसी ने अपने अश्व को उस सुन्दरी के समीप किया । उसके कमल-नयन एवं तन्द्रिल पलकों को अनिमेष दृष्टि से देखा और केसर की सुरभि-सन्ध महकते गात की सौरभ से मुग्ध होता हुआ वह दीर्घ-निश्वास सहित बोला, “मेरा शिकार ।”

युवती चतुर गिल्ली द्वारा प्रिग्वित मौम्य-शांत प्रतिमा की तरह स्थिर होकर बोली, “कैसा शिकार ?”

“मेरा शिकार यानी मेरा सूअर ।”

‘ओह !’ कहकर युवती मुड़ी और बोली, “श्रीमन् कृपको की आत्मा को कुचलने की चेष्टा न कीजिएगा ? ये खेत हमारे जीवन हैं, इन पर आपका अश्वारूढ होकर दौड़ना हमें अति पीडाजनक लग सकता है । कदाचित् उसका प्रतिशोध रक्त-रजित भी हो सकता है ।” युवती ने क्षण भर के लिए वक्र-दृष्टि से अरसी को देखा और गागे बढ़ती हुई बोली, “आप मेरी प्रतीक्षा कीजिए मैं आपका शिकार अभी लाई ।”

अरसी विस्मित सा खड़ा रहा ।

मन ही मन उसके बारे में सोचता रहा । तभी वह युवती उस सूअर को रज्जु से बांधकर ले आई । अरसी हतप्रभ सा देखता रहा ।

युवती न दभ से अरसी की ओर देखा फिर विनत हो उसने अपनी गदन भुका ली । उसके मुख पर मौम्यता भलकने लगी थी ।

“तुम बड़ी वीर हो ।”

“क्या आप से भी !” सत्वरता से वह युवती खेतों की भुरमुट्ट में ओभल हो गई । युवती अपने पीछे एक मुक्त अट्टहास छोड़ गई । उस अट्टहास में प्रयत्न प्रतिक्रिया ने अरसी को विचलित कर दिया ।

अरसी के दो चार मायी आ गए थे ।

वृत्त की टाया के नीचे वे विचार विमिश्र करने लग । अरसी बार-बार वार्तानाप में प्रमग रहित प्रश्न पूछ लिया करता था । उसके एक मायी ने अप्रत्यागित पृष्टा, “क्या जान है अरसी, तुम क्यों बयो जाते हो ?”

“नही-नही ।”

खेतो से गीत की मादक ध्वनि आने लगी थी । कृषक-कन्याएँ अल-कारों को धूप में झलकाती, रग-विरगे वस्त्रों में सज्जित एकाग्र होकर गा रही थी ।

तभी अश्व हिनहिनाकर उछला ।

अरसी ने भाग कर देखा कि उसके मित्र के अश्व की एक टाँग में चोट आ गई है । उसके साथी ने तुरन्त अपनी पगड़ी से घोड़े की टाँग को बाँधा । इधर-उधर देखा तो वही युवती अपनी ओर आती हुई दीख पड़ी । इस बार वह उदास थी ।

अरसी ने अपने मित्र से कहा, “यही है वह युवती ।”

युवती ने विनीत स्वर में कहा, “मैं आपसे क्षमा माँगती हूँ श्रीमद, पक्षियों को उड़ाने के लिए गोफन चला रही थी, उसके एक ककर से आपके अश्व की एक टाँग • ।”

अरसी उतावली से बोला, “कोई बात नहीं ।”

युवती अपने गुलाबी-कोमल अघरों पर मुस्कान बिखेरती हुई पुनः उनकी दृष्टि से ओझल हो गई ।

“इन्द्रसिंह, यह युवती मेरे मन मन्दिर में बस गई है ।”

“छि, आज शिकार के हाथों तुम स्वयं शिकारी हो गए ।

एक जोर का अट्टहास उस वन में गूँज पड़ा ।

सध्या हो गई थी ।

नर-नारियाँ खेतो से घर की ओर आ रहे थे । सम्पूर्ण ग्राम चहल-पहल से भर गया था ।

अरसी युवती के पुनः दर्शन के लिए व्यग्र हो उठा ।

साथी कह रहे थे कि घर चला जाए ।

अरसी भावावेश में कह उठा, “नहीं इन्द्र, वह युवती ।”

बीच में ही इन्द्रसिंह बोला—“ठाकुर सा को जानते हो । सिसौदिया ब्रह्म में उसकी प्रतिष्ठा अनुकूल ही कुलवधू आ सकती है ।”

वश-गौरव को स्मरण करके अरसी भी विवश हो गया। सभी अश्व पर अरूढ़ होकर चले। जिसके अश्व की टांग में चोट आई थी, वह माथी धीरे-धीरे आ रहा था।

पथ में ही उन्हें वही युवती फिर मिल गई। इस बार उसने अपने सिर पर बड़ा 'मटका' रख 'गोला' गा। दोनों हाथों से उसने दो पांडियो (भैम के बच्चों) को पकड़ रखा था। पांडिए, उछल-कूद रहे थे, पर क्या मजाल दूध का मटका गिर जाए। अरसी डमसे बहुत प्रभावित हुआ।

उसके उपरान्त प्रतिदिन अरसी अकेला वहाँ से आता था और शनं शनं उसने उस युवती को अपने प्रेम की ओर आकर्षित कर लिया। वह युवती स्वयं चन्दानी राजपूत की कन्या थी। मयोग समझिए—अरसी ने जब उसके वृद्ध पिता के समक्ष अपनी इच्छा प्रगट की तो उस वृद्ध ने उसे सूर्यवर्षी समझ कर अपनी कन्या का व्याह उमसे कर दिया। न्याह के उपरान्त इस रहस्य को कौटुम्बिक मर्यादा के प्रतिकूल समझकर अरसी ने किसी के समक्ष प्रगट नहीं किया। कदाचित् लाखाजी इस विवाह की स्वीकृति भी नहीं देते। उस कन्या 'देवी' ने, कभी भी अरसी से आग्रह-अनुग्रह भी नहीं किया। वह कृपक कन्या तारुण्य के विपुल उन्माद में भी अरसी को अपना आराध्य मानकर विवेक पूर्ण कदम उठाया करती थी।

जब अरसी को बाप होने के समाचार सुनाया गया तो वह अपरिशील आनंद में डूब गया।

हम्मीर का जन्म हुआ—गाव की मुक्त हवाओं के बीच।

उसकी माँ दानी हम्मीर को सिमौड़िया कुल की प्रतिष्ठा के अनुरूप उसे थोड़ा बनान लगी।

जब अरसी ने मृत्यु का सह्य गले लगाया, तब इस रहस्य को उसने लाखा जी के समक्ष प्रगट कर दिया। लाखाजी ने उस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। गावाराण घटना की तरह उन्होंने इतना ही कहा, ठीक है।

राणा अरसी को इसमें आघात लगा।

आज निगीथ के नीरव क्षणों में उन्हें देवी की स्मृति रह-रह कर आ



रही है। प्रभु की भाँति निश्चल व करुण उसका फूल-सा नन्हा-मुन्हा हम्मीर क्षण भर के लिए भी उसके स्मृति-पट से नहीं हट रहा था।

बाहर प्रतिहारी तीव्र-स्वर में पहरा लगा रहा, “सावधान ?”

अरसी ने अपने अश्रुपूरित नेत्रों को पोछा।

सँभल कर वड़वड़ाए—“मुझे निर्वल नहीं होना चाहिए, निशक वनराज की भाँति मुझे अपने मन को बना लेना चाहिए। स्वजनो का सम्मोह वीरत्व के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। आज मुझे पत्नी पुत्रके लिए व्यग्र न होकर आक्रमण के लिए नूतन पथ-पाथेयों का निर्माण करना चाहिए।” तब अरिसिंह ने युद्ध की कला पर निपुण मेनानी की भाँति विचारना प्रारम्भ किया। कहाँ से शत्रु पर धावा बोला जाय। किस प्रपञ्च द्वारा शत्रु को परास्त किया जाय। उन्होंने विचारा कि यवन सेना को इस भ्रम में डाला जाय कि चित्तौड़ की सेना आज युद्ध-भूमि में अवतरित नहीं होगी। जब यह भ्रम शत्रुओं पर पूर्णतया छा जाय तो अप्रत्यागित आक्रमण कर देना चाहिए। इसी प्रकार की उधेड़वुन में अरिसिंह विचलित हो उठे। उल्का के प्रकाश से एक दीप्ति मुख उभरा। देवी का उदाम-उन्मल मुख। उनके मुख पर अपार कल्याण का सागर उछल रहा है। एक नारी की चिरन्तन चाह भलक रही है। समीप ही उसके हम्मीर खड़ा-खड़ा क्रीड़ा कर रहा है। उसके हाथ में छोट-सा तीर-कमान है। अरिसिंह भावाभिभूत हो गए। उन्हें लगा कि उनकी प्राण-प्रिया विगलित स्वर में कह रही है—‘नाथ, आपने प्रतिज्ञा की थी—कभी न कभी मैं तुम्हें अपने स्वजनो से मिलाऊँगा, पिता और माता के दर्शन कराऊँगा। क्या आप वचन ।”

बीच में ही तड़प कर अरिसिंह ने उल्का को बुझा दिया।

घोर अन्धकार छा गया।

प्रतीची-प्राण के तिमिर-राक्षस की जैसे ही मृत्यु हुई वैसे ही प्राची में स्वर्णिम घटों को उडेलती हुई एक राजकुमारी का आगमन हुआ।

चराचर में हल्का हल्का गुजन उठा।

युद्ध के नगाड़े बजे ।

अरिसिंह ने समस्त पौरुष के साथ आक्रमण बोल दिया ।

मनुष्य-मनुष्य का रक्त-पिपासु बना रणभूमि में जूझ रहा था ।

२

अरिसिंह के देहान्त होने के समाचार में सारे चित्तौड़ में विपाद छा गया । लाखाजी व राणाजी के हृदय पर भी बड़ा आघात लगा । किन्तु भगवती अभी और वलिदान चाहती थी । अतः अजयसिंह जी राणा वनन के लिए उद्धत हुए । लाखाजी अपने अन्य पुत्रों की वजाय अजयसिंह से अधिक स्नेह करते थे । उसे राणा बनाने के लिए वे राजी नहीं हुए । वंश-परम्परा की रक्षा और सिसौदिया कुल को सर्वनाश के पश्चात् वर्षावारल के पितृजनो को पानी देने वाला इत्यादि वाक्य सुना कर उसे अपने में विचलित करा दिया । लाखाजी ने बड़े साहस भरे स्वर में कहा, "तुम जीवित रहकर चित्तौड़ के पुनर्द्वार का प्रयास करना । गुहिलोत्त वंश को पुनः प्रतिष्ठा दिलाना, जो दीपक बुझ गया है, उसे पुनः जलाना । तब अजयसिंह गोपनीय मार्ग में कैलवाड़ा चला गया । वह चित्तौड़ को सदा सदा के लिए छोड़ कर चले गए ।

महासेनापति पवन सी आहत हो गया था अतः उसे भी अजयसिंह के साथ भेज दिया गया ।

इस प्रकार महावली सिसौदिया वंशज सामन्त लाखाजी ने अपने शेष पुत्रों को वारी-वारी से राज्य-सम्मान प्राप्त कराके जन्मभूमि की वलि-वेदी पर न्योछावर कर दिया । उनके सभी पुत्रों ने अपने शौर्य के विशेष उदाहरण छोड़े ।

राणा जी और लाखा जी ने जब इतनी बड़ी शान्ति के बाद भी

विजय श्री को अपने पक्ष में नहीं देखा तो उन्होंने निश्चय कर लिया, "अब हमारा समय समाप्त हो गया, अब हमें भी समरान्ति में आहुति दे देनी चाहिए ।"

युद्ध के सकेत विपरीत चल रहे थे । विजय की कोई आशा नहीं शीख रही थी । तब सभी सरदारों एवं सामन्तों ने केसरिया बाना पहन कर अन्तिम बार प्रबल आक्रमण करने का निश्चय किया । इधर जब पुरुषों ने केसरिया बाना पहनना निश्चय किया तो उधर वीर राजपूत ललनाएँ अपने सतीत्व की रक्षार्थ अपने आपको अग्नि-माँ की गोद में सौंपने को तत्पर हुई । जौहरव्रत की तैयारियाँ शुरू हो गई । महाराणी पद्मिनी के नेतृत्व सहस्र क्षत्राणियों ने अपना अन्तिम श्रु गार किया । एक बहुत बड़ी चित्ता तैयार की गई । देखते-देखते ज्वालाएँ धी की आहुतियाँ पाकर प्रचंड रूप से प्रज्वलित हो गई । रनवास शून्य हो गया । अगणित ललनाएँ जीवन के महानतम क्षणों के लेकर चित्ता के चतुर्दिक ईश्वरोपासना की मुद्रा में खड़ी हो गई । सौन्दर्य की प्रतिभा महारानी पद्मिनी के अधरोपर एक उज्ज्वल मुस्कान थी । चित्तौड़ के वीर अपने हृदय को पत्थर के समान कठोर बना कर इस भयंकर किन्तु गौरवशाली जौहरव्रत को देख रहे थे । हृदय-विदारक संगीत प्रारम्भ हुआ । चित्तौड़ की प्राचीरों को कंपाती हुई ज्वाला और उग्र हुंर । सव-प्रथम चित्तौड़ की अधिष्ठात्री पद्मिनी ने आग का आलिङ्गन किया । तत्पश्चात् चित्तौड़ की सभी ललनाएँ उन लपटों में कूद गई । किसी की भी आँखों में अश्रु नहीं था । अश्रु की जगह आज उनमें रक्तभा थी और था गौरवपूर्ण तेज ।

जौहरव्रत समाप्त हो गया । रूप, गौरव और प्रतिष्ठा एक साथ अग्नि-अक में समा गई ।

वीर निश्चिन्त हो गये । यवन सेना पर प्रत्याक्रमण के लिए अब वे द्विगुणित उत्साह से उद्भूत हुए । रण-मारु प्रबल वेग से बजा । वीर केसरिया बाने पहनकर मस्ती में झूम उठे । चित्तौड़ दुर्ग का सिंह द्वार

खोल दिया गया। क्षुब्धित मृगराज की तरह राजपूत यवनो पर टूट पड़े। उन्होंने यवनो का तृणमम सहार करना प्रारम्भ कर दिया। पृथ्वी मृतको से भर गई। आज उसका आंचल खून में लाल विलकुल लाल था मानो वह सदा मुहागिन को जोड़ा ओढ़ हुए है।

सिसौदियो का एक-एक वीर उत्सग हो गया पर विजय श्री अल्ला-उद्दीन खिलजी के हाथ लगी। यवनो ने अपनी जीत के डके वजाते हुए उस चित्तौड़ में घुसे जो कल तक अनुल सौन्दर्य का कोश था, जिसके आंगन में महस्त्र रूप उल्काएँ जलकर पवित्र आलोक की सर्जना करती थी, जहाँ देवता की अचना में प्रभात होने मगल घवनियाँ गुंजित होती थी। आज वही नगरी जन-शून्य थी। वहाँ आहतो की सिसकियो के अतिरिक्त कुछ भी चेतन नहीं था। मवत्र मानव के खडित रूप। श्मसान, जलता श्मसान।

चिता घघक रही थी। अल्लाउद्दीन उसे देखकर तडप उठा, 'मेरी पत्नी जल गई, उसका मामू शरीर खाक हो गया।'

व्यथा में अभिभूत होकर खिलजी उस चिता को एकटक देख रहा था। किसी रूपसी ललना का हथजला हाथ आग से चटक कर दूर आ गिरा। मांस-भक्षी गिद्ध लपकता हुआ खिलजी के आगे से उड़ा, खिलजी काप गया। देखा—गिद्ध वह हाथ लेकर उड़ चला है।

उसके मुह से हठात् निक्ला, "गुल के वास्ते आया था, खार भी नहीं मिला।" दिल की हविस धुआँ बन कर गुमड रही है। यकीनन चित्तौड़ की बहार यहाँ के लोग अपने साथ ले गए।"

और दिल्लीपति ने पश्चानाप भरी दृष्टि से उस ममर-सागर को देखा जिसका जल रक्तिम था, जिममें अनयकारी बादशाह द्वारा किए गए विवृत रूप, मानवी अग-प्रत्यग तैर रहे थे। जिसकी प्रत्येक लोल लहर लावण्यमी नारियो के चीत्कारो से कम्पित हो रही थी। तडपते-मिमकने आहत सैनिक मा-मां वह वर के चीख उठते थे। सहस्त्र नर-मुर्द। विनाश ही विनाश ?

खिलजी का पत्थर दिल द्रवित हो गया ।

उसकी दृष्टि अपने हाथों की ओर गई । उसे प्रतीत हुआ कि उसके हाथ इन्तानी खून से रंगे हुए हैं । अचानक उसके कठोर होठों पर क्रूर मुस्कान थिरक उठी । मन ही मन उसने विचारा—राजनीति में दया प्रौर करुणा का स्थान नहीं है ।

उसके एक सिपाही ने आकर कहा, “चित्तौड़ में एक भी आदमी जिंदा नहीं है । बहादुर कौम सबकी सब मर मिटी । हमने अनहलवाड़ा, गर, अवन्ती, देवगढ़ नगरों को भी उजाड़ डाला है ।”

खिलजी ने थोड़ी चहलकदमी की ।

“ओ राक्षस !” एक अत्यन्त वृद्धा आहत सैनिकों के मध्य से प्रगट हुई । झुरियों से उसका सारा मुंह भरा हुआ था । नेत्रों में लाल चिन-गारियाँ दीप्त हो रही थी । विकृति की कई रेखाएँ एक साथ उसके चेहरे पर दौड़ी । खिलजी विस्मित-सा उसे देखने लगा ।

बुढ़िया बोली, “रक्त-पिपासु ! सँभाल अपना चित्तौड़ जो कल वीरों की लीला-भूमि थी और आज मरघट है । ओ नर-क्रीट, आज अपनी आँखों से इस हंसते-गाते देश को देख, अब यह चित्तौड़ हमारा नहीं है, तुम्हारा है । देखो इसे बड़े यत्न से रखना । यह लाल खून से डूबी घरती तुम्हें बड़ा वरदान देगी, ये खड़-खड़ राजमहल, ये टूटे-फूटे देवालय, ये ध्वम-विध्वंस गढ़-कगूरे किसी दुष्ट की ही शोभा बन सकते हैं । आगे बढ़ युद्ध-पिपासु, लगा इन्हें गले और जोर का अट्टहास करके कह — मैंने चित्तौड़ जीत लिया !

“ओ वासना के देवता ! तूने एक स्त्री के लिए सहस्रों का सुहाग छीन लिया । मेरी उस बहू को छीन लिया जिसके विवाह की मेहदी भी फीकी नहीं हुई थी । उस पुत्र को छीन लिया जिसकी बाहुओं में उन्मत्त वैभव सास भी लेने नहीं पाया । ओ दुराचारी, गौरव और सुख हिंसा में नहीं मिल सकते, उसके लिए प्यार चाहिए, प्यार !

“मुझे छूना मत, मेरे लिए यह अग्नि माँ के समान है ।” मुझे इसी की

गोद में चिर-निद्रा लेती है ! हत्यारे, एक बात को ध्यान से सुन—ससार में यदि कोई वस्तु अमर है तो मृत्यु ! मौत ही अमर है ! एक दिन तुम्हें भी मिट्टी में ही मिलना है ?”

वृद्धा स्वप्न-सी झलक दिखाकर चिता में कूद पड़ी ।

खिलजी पागल की तरह चीखा, “पकड़ो, इस जुवान-दराज को पकड़ो, इसकी गदन काट दो !”

धुएँ के बादल ने खिलजी की आँखों के आगे घोर अंधेरा फँला दिया ।

— — —

३

अजयसिंह बँलवाड़ा के पवतीय प्रदेश में निर्वासित प्राणी-सा जीवन यापन करने लगे । मेवाड़ की पश्चिमी दिशा की ओर अगवली पवत-माला की तलहटी में शेरामल नाम का एक समृद्धशाली नगर है, उसी की चोटी पर बलवाड़ा स्थित है । यही पर अजयसिंह रात-दिन पराधीन चित्तौड़ के स्वतन्त्र हान के सपने देखने लगे । यवनो ने चित्तौड़ को कुछ दिन अपने अधीन रखा, बाद में उन्होंने जालोर के चौहान मालदेव को सौंप दिया । दधर भील एवं घाडेती सरदार मूजा वालेचा उन्हें तग कर रहा था । यह मूजा वालेचा राजपूत था, जिसका काम डाके डालना था । बड़ा ही पराक्रमी और निंद्यी था । अजयसिंह सवप्रथम उसका ही काम तमाम करना चाहते थे । यह दुष्ट प्रकृति का पराक्रमी था और अजयसिंह का हाथ पांव सँभालन का मौका ही नहीं दे रहा था । अजय सिंह ने अपने दानों बेटों अजीतसिंह और सुजानसिंह को भी मूजा जानेजा का गदन काटकर लाने के लिए उत्साहित किया किंतु वे सफल न हो पाए । इसमें उन्हें अत्यन्त निराशा हुई । तब उन्हें अरिसिंह जी के डब की स्मृति आई । वे चाहते थे—कदाचित् अरसी का पुत्र आतताय

को यमलोक पहुँचा दें ।

अन्त मे अजर्यासिंह ने हम्मीर को बुलवाने का निश्चय किया ।

हम्मीर अपनी विधवा माता देवी के सरक्षण मे ऊनवाँ नांव मे एक युग व्यतीत कर चुका था । उसने मलखव कुश्ती, तलवार चलाना, तीर कमान छोडना, अश्वारोहण, शास्त्रो का पढना इत्यादि कलाओ मे निपुणता प्राप्त कर ली थी । वह हठीला एव कुशाग्र बुद्धिवाला तेजस्वी किशोर था । दिन भर अपने नाना के खेतो मे कठोर श्रम करता, रात्रि के आगमन पर अपनी माँ देवी से भारतीय बालको की कथाएँ सुना करता था । ध्रुव, प्रह्लाद, वीर अभिमन्यु की कहानी उसे बडी रुचिकर लगती थी ।

कभी-कभी वह माँ के दुखी होने पर पूछ बैठता था, “माँ, मैं अपने घर कब जाऊँगा, मेरे काका सा कहाँ है ?”

देवी मौन हो जाया करती थी । उसके नेत्र भर आते थे । बेटे के इस प्रश्न पर उसे अरसी की याद हो आती थी । तब उसका मन वेदनाओ मे डूब जाता था । वह अपने दुर्भाग्य पर आठ आँसू रो दिया करती थी कि उसने न दशरथ सा ससुर, न कौशल्या सी सास और न भरत-लक्ष्मण से देवरो को ही देखा । उसने पीले हाथ करके कभी सुसराल में चरण ही नहीं रखा । वह हतभागी है, बिलकुल हतभागी ।

“माँ, तू रोती है ?” हम्मीर माँ को स्नेह से पूछता ।

माँ ममता से भर उठती, “रोती कहाँ हूँ बेटे, सोच रही हूँ कि तुम अपने दादासा, काकासा और पिताश्री का प्रतिशोध कब लोगे ?”

“अपने पूर्वजो का गिन-गिन कर बदल लूँगा । मैं चित्तौड का राणा अवश्य बनूँगा माँ । मैं अपने देश को मुक्त कराऊँगा ।”

हम्मीर के हाथ की मुठ्ठियाँ बँध जाया करती थी और देवी की छाती गर्व से फूल जाती थी ।

सोने मे सुहागा हो गया ।

हम्मीर की लालसा दिन प्रतिदिन चित्तौड को स्वतन्त्र कराने के

लिए प्रबल हो उठी। वह अपने चाचा से मिलने के लिए तड़प उठा। जब उसकी तड़प अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची तभी चाचा का दूत उस के पास आया और उसने सारा हाल सुनाया। हम्मीर ने गुस्से में आकर कहा, “भू जा वालेचा ! मैं उसकी गदन घड से अलग कर दूँगा।”

माँ देवी यह सुन कर फूल सी खिल उठी, “मुझे तुम में ऐसी ही आशा थी बेटे, तुम जरूर राणा बनोगे। तुम अवश्य अपने शत्रुओं का दमन करोगे।”

विदाई के समय ऊनवा के सभी लोगों की आँखें भर आई। हम्मीर के साथी उससे गले मिल-मिल कर रो रहे थे। वृद्ध-जन व्यथा से तिरोहित हो कर कह रहे थे—“आज गाव का रखवाला जा रहा है।”

देवी की दशा बड़ी विचित्र थी। मुख-दुख, गौरव-आशंका, उत्साह-भय विपरीत भावों का मिश्रण उसकी दृष्टि में नाच रहा था।

हम्मीर ने भारी मन से माँ के चरण स्पर्श किए।

देवी ने ममता से उफन कर हम्मीर को छाती से लगा लिया। वर्षों के बाद आज उसकी अँगिया दूध से भर आई। विकट परिस्थिति के कारण वह अपने बेटे के साथ नहीं जा पा रही है। एक दिन वह अरसी से अलग हुई थी और आज वह अरसी की निशानी को भी अनिश्चित काल के लिए छोड़ रही है। पता नहीं, भविष्य में वह उससे मिलेगी या नहीं। चित्तौड़ के चतुर्दिक जो भभावात उठ रहे थे, ऐसी स्थिति में किसी के प्राणों को किसी भी समय खतरा उत्पन्न हो सकता है। फिर भी वक्त व्यर्थ को पूरा करना था। देवी ने हम्मीर को आशीर्वाद दिया और हम्मीर ने टपटपाई आवा में मा के अन्तिम दशन किए।

हम्मीर के पवित्र तेजस्वी व्यक्तित्व को देखकर चाचा बड़े प्रसन्न हुए। उमका गारुण, विद्यान ननाट, अजानुवाह, चौडा वक्षस्थल और खजन से ढाँके नेत्र ! चाचा पर उन सबका अत्यन्त प्रभाव पड़ा ! चाचा के चरणारवि के पश्चात् हम्मीर ने इतना ही कहा, “क्या दुःख है ?”

स्थान-स्थान पर हुए अपमान की तीव्र ज्वालाओं में दग्ध हृदय को



जब विगत दारुण वेदनाओं का अनुभव हुआ तब चाचा अवश अधीर हो उठे। शब्द गले में ही अटक कर रह गए। केवल नेत्र भर आए।

चाचा को इतना चिन्तित देखकर हम्मीर बोला, “आप चिन्ता न कीजिये काका सा, मैं स्वदेशानुराग का महामन्त्र लेकर अपनी जन्मभूमि के बन्धनों को काटूंगा। आप मुझे आज्ञा दीजिए।”

चाचा गम्भीर हो गए। पल भर के लिए उसका पितृत्व उमड़ आया। उसके सामने एक अधखिला फूल था। अधूरी अभिलाषाओं से उद्वेलित अन्तर। वे दुर्बल हो गए। वे कुमार को मृत्यु से युद्ध करने नहीं भेज सकते, नहीं भेज सकते। वे हठात् बोले, “अभी समय नहीं आया है।”

“समय की प्रतीक्षा में अवसर चले जाते हैं, काकासा।”

“असमय का प्रयास जीवन में असफलता दे देता है।”

“साँप के बेटे का काम काटना होता है। मुझे शत्रु को परास्त करने की आज्ञा दीजिए, परिणाम की चिन्ता को छोड़िए।”

अन्त में विवश होकर चाचा बोले, ‘गोडवाड़ का डाकू मूजा वालेचा हमारे सगठनों के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध हो रहा है। जब तक उस व्यक्ति को ठिकाने नहीं लगाया जाएगा तब तक हमें किसी भी काम में सफलता नहीं मिल सकेगी। तुम्हारे दोनों भाई अजीतसिंह और सुजान सिंह उसको मारने में असफल ही नहीं बल्कि उससे स्वयं द्वार गए, अतः लाचार होकर मुझे तुम्हें बुलाना पड़ा, क्योंकि हमें चित्तौड़ को पुनः प्राप्त करना ही है।”

“आप निश्चित रहिए, आपकी आज्ञा को मैं पूर्ण करूँगा।”

“शाबाश।”

“मैं मूजा वालेचा के गाँव जा रहा हूँ। या तो मैं उसकी गर्दन घट से अलग कर आपके चरणों में ला गिराऊँगा, अन्यथा स्वयं को वलिदान कर दूँगा।”

तब हम्मीर अन्य शस्त्रों से सज्जित होकर मूजा वालेचा के सहार

हेतु चलने को उद्यत हुआ। एक द्वार पुन चाचा के चरण स्पश करके कहा, “आऊँगा तो बानेचा का मिर ही लेकर अन्यथा नहीं।”

चाचा ने दो-तीन विश्वस्त सरदारों को उसक साथ रहने के लिए कह दिया। जिसमें पवन भी था।

^

×

गोडवाड पहुँचाते ही हम्मीर को मालूम हुआ कि मूजा मामेरी गाव जलमे में गया हुआ है। शान-पलाँत हम्मीर ने माँम नेना उचित नहीं समझा। उसी पग वह मामेरी के लिए रवाना हो गया।

मामेरी में मूजा अपने एक मित्र के यहाँ ठहरा हुआ था। उस मित्र की दरसगाँठ थी। जलसा प्रारम्भ था।

रात्रि की निस्तब्धता में गायिका का स्वर गुँजित हो रहा था। वह नृत्य के साथ भटके दे देकर उपस्थित जन समूह का मन लुभा रही थी। अमल पानी के दौर चल रहे थे। लोग उन्मत्त से भूम रहे थे। बाह-बाह बर रहे थे।

अश्व के आगमन का सन्देह होत ही मजा मालचा के कान सड़े हो गए। उसने गायिका की ओर में अपना ध्यान हटाकर अपने साथी की ओर दिया। उसका साथी उठ खड़ा हुआ। बाहर में आकर उसने धीरे से कहा ‘कोई पाहुना है। राजपूत है। वेपभूषा में वह राजसी मामन्त का पुत्र लग रहा है।’

‘उस आदर में बिठा दो।’

हम्मीर भी जलस में सम्मिलित हो गया। और धीरे उसने अपने पटामा से यह जान लिया कि मूजा कौन है ?

मूजा ना हँसा जवान। काली दाढ़ी, गान्धली मूँछ। सुगठित तन। बड़ी-बड़ी डरावनी आँखें। गोपना तो गगना था कि कोई गज रहा है। हमी गन्धसी जमी गान्धित करन पानी।

रात भर जलसा चरता रहा।

अन्त में मूजा बानेचा उठा। हम्मीर के पास आया। उस अमल-

पानी करने की विनती की। हम्मीर ने उसकी आवाभगत को अस्वीकार कर दिया। मूजा ने नाम-धाम पूछा। हम्मीर ने सत्यवादी की तरह अपने कुटुम्ब का परिचय दे दिया ? परिचय सुनते ही मूजा की रग-रग में विजली कौंध गई। भगिमा को कठोर कर वह अधिकार भरे स्वर में बोला, “और तुमने इतना साहस कर लिया ?”

हम्मीर ने निर्भयता पूर्वक उत्तर दिया, “राजपूत का धर्म ही साहस करना है। शत्रु से प्रतिशोध लेना उसका कर्तव्य होता है।”

जलसे में इन दोनों की गर्जना से सन्नाटा छा गया। सब एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। मूजा उछल कर खड़ा हो गया। हम्मीर सावधान होकर निरीक्षक की दृष्टि से मूजा को देखने लगा। हम्मीर अस्त्र-शस्त्रों में सज्जित था और मूजा वालेचा अपने कमर बन्द को कसने लगा।

नर्तकी एक कोने में अपने उस्ताद को पकड़े खड़ी थी। दो अन्य सरदारों ने आगे बढ़ कर हम्मीर को पकड़ना चाहा किन्तु मूजा ने उन्हें मना कर दिया। वह वीर था। किसी शत्रु को चक्र में फँसा कर मारना उसके धर्म में नहीं लिखा था। अतः उसने हम्मीर के समीप आकर पूछा, “क्या चाहते हो बालक ?”

हम्मीर को अपने लिए बालक सम्बोधन अच्छा नहीं लगा। वह गुस्से में भर कर बोला, “वीर का क्या छोटा और क्या बड़ा ?”

मूजा की विशाल देह समक्ष हम्मीर बालक ही लगता था। मूजा के मित्र ने आकर कहा, “व्यर्थ में अपने प्राणों को गँवाने से क्या लाभ है ? तुम चले जाओ।”

हम्मीर दृढ़ता से बोला, “लाभ हानि देखना व्यापारियों का काम है। मैं अपनी बात का निर्णय करके ही जाऊँगा।” उस का तन काँप रहा था।

एक गो-पद शिक्षा वाले ब्राह्मण ने बढ़ कर कहा, “कुमार आवेग से नहीं, किंचित नीति-बुद्धि से कार्य कीजिए।”

हम्मीर ने कहा, “मैं पूर्व निश्चय कर चुका हूँ। मैं मजा से द्वन्द्व

युद्ध करूँगा ही ।”

जनसे मे हँसी का फीव्वारा छूट पडा । भयभीत नर्तकी भी हँसे बिना न रह सकी । उसका सेवक जिमकी चाल मे स्पष्ट लक्षित होता था कि वह हिजडा है, विचित्र अदा मे आगे बढ़ा और जनानी आवाज मे बोला, “अरे भाई, इस उम्र मे बयो लडता-मिडता है, चल मुझसे व्याह कर ले ।”

जलसे मे अट्टहाम गूँज पडा ।

हम्मीर क्रोध आवेश मे चिल्ला पडा, “चुप हो जाओ । क्यों इस हिजडे के साथ दाँत निकाल कर वीरो की सभा को अपमानित कर रहे हो ? मैं अरिमिह का पुत्र हूँ । मैं रण-कौशल मे निपुण हूँ और मेरी बाहुओ मे अजेय शक्ति है । मैं सरदार मूजा को ललकारता हूँ कि वह मुझसे द्वन्द युद्ध करे ।”

मूजा अब अपन आपको सयत नही रख सका । उसने अपना खडग सँभाल लिया । एक बार उसन हम्मीर के दीप्न तारुण्य की ओर बढ़ते अग प्रत्यग को चाह-भरी दृष्टि से अवलोकन किया फिर वह युद्ध के लिए उदित हुआ ।

देखते देखत दानो के खडग टकरान लगे । उपस्थिति नत्र फाड कर उन्हें दखन लगी । उपस्थिति का अनुमान मिथ्या निकला । यह बालक वस्तुतः बालक नही, प्रचट पराक्रमी योद्धा है । रण-विद्या मे चतुर एवं पारंगत ।

मूजा न हम्मीर का अपन पजे मे आया देखकर पूरा शक्ति महित बार दिया । लोग चिल्लाए मर गया । किन्तु हम्मीर उस स्थान से हट गया और उान पीछे मे तुरन्त घूम कर मजा की गदन पर बार कर दिया ।

मूजा का मिर धरती का चुम्बन लेन लगा ।

हम्मीर ने अपना भाला सँभाला और मूजा का मिर उस पर लटका कर सम्प्राप्त हो गया । फिर एकनिगेश्वर की जय बोलता हुआ वह

द्रुतगति से चाचा को यह सुख-सवाद सुनाने हेतु पवन-वेग से धावित हुआ ।

×                      ०                      ×                      ×

अजयसिंह अधीर थे । उनकी आँखों से निद्रा उड़ गई थी । बार-बार वे अपने सरदार चेतनसिंह से पूछ उठते थे कि क्या घोड़े की टाँपें सुनाई पड़ रही हैं ?”

चेतनसिंह का उत्तर पाकर वे तिरस्कार पूर्ण स्वर में कहते, “मैं सचमुच उस बालक का हत्यारा हूँ । यह अपराध मुझे जीवन भर चैन नहीं लेने देगा । कहाँ राक्षस और कहाँ वह फूल-सा बालक ?”

इसी तरह सदिग्ध वार्ताओं में विचलित अजयसिंह आकुल हो उठे । व्यग्रता और उग्रता का संघर्ष उनकी आँखों पर-पर छा रहा था ।

यकायक उस अशान्ति काल में जब हम्मीर के आगमन की सूचना अजयसिंह को प्राप्त हुई तब उनके लोचन अश्रु-प्लावित हो उठे । हर्षातिरेक में उनका गान्त कम्पित हो उठा । वे आगे बढ़े और हम्मीर को अपने प्रगाढालिंगन में आवद्ध कर पुलक उठे, “चिरायु हो बेटा, सचमुच तुम चित्तीड के राणा होने के योग्य हो ।”

हम्मीर के रूप की धवलता में प्रशंसा की अतिरेकता ने रक्तिमा दौड़ा दी । वह श्रद्धा से चाचा के चरण-स्पर्श करता हुआ बोला, “आप की मनोकामना पूर्ण हुई ।” फिर उसने अपने भाले पर लटका मूजा वालेचा का सिर उतार कर उनके चरणों में भेंट कर दिया ।

“आपके अपमान का बदला पूरा हो गया । अब आप शान्ति से अपना कार्य सम्पूर्ण कीजिए ।”

चाचा हम्मीर के इस पराक्रम से गद-गद हो उठे । उन्होंने मूजा के सिर को ठोकर मार कर एक बार अपने भतीजे को चूम लिया और शत्रु के रक्त से उसके ललाट पर राजतिलक करके उसे चित्तीड का राणा घोषित कर दिया ।

सब सरदारों ने राणा हम्मीर की जय-जयकार की ।

अजयसिंह ने तत्काल आदेश दिया, "हम्मीर इस पद-प्रतिष्ठा के मवथा योग्य है। मिमोदिया-वंश की राज्य-लक्ष्मी आज मे इसके आधीन होनी है और हम सभी सामन्त मरदार इसे अपना राणा और एर्कलिंगे-स्वर का दीवाग्य स्वीकार करने हुए देश को मुक्त करने के लिए नव-आह्वान करते हैं।

इस घोषणा की एक और सुन्दर प्रतिक्रिया हुई। राणा के स्वामी भक्त और देव-भक्त सामन्त उममे आ-आकर मिल गए। वे पुन अपने नए राणा के खग की छत्र छाया में अपना पौरुष और पराक्रम दिखाने के लिए आनुर हो उठे।

पर इस घोषणा में अजयसिंह के दोनो पुत्र अजीतसिंह और मुजान सिंह मृष्ट हो गए। उन्हें मार्मिक आघात लगा। फलस्वरूप अजीतसिंह अल्पकाल ही में घुट-घुट कर मर गया और मुजानसिंह दक्षिण की ओर चला गया।"

## ४

इन सभी घटनाओं से हम्मीर चिन्तित नहीं हुए। जो जाना चाहते हैं, व जाए, हम्मीर न किसी को नहीं रोका। किन्तु चित्तौड़ का राणा जा घोषित होता या उसे एक रस्म अदा करनी पड़ती थी। पितृ-सम्मान की पाणि की प्रमत्तता में राजपूत नरेश अपने मामन्ता एवं मरदारों का नवर समीप के शत्रु-राज्य पर आक्रमण किया करते थे। यदि चतुर्णा पाणि या साम्राज्य होता या अथवा नरेश का सवत्र अग्निर होता या तब भी नया शासन इस प्रथा का अन्त नहीं करता।

१. मुजानसिंह ने दक्षिण में नए वंश की परम्परा डाली। वीर शिवा जो इसी वंश में उत्पन्न हुए थे।

वह अभिनय मात्र द्वारा इस प्रथा को पूर्ण करता था। हम्मीर को मूजा वालेचा के साथियों से अभी तक आन्तरिक भय बना हुआ था। पता नहीं, वे निर्भय, दुष्ट प्रकृति-प्रवृत्ति के लोग कब हम्मीर को छल बल से देव लोक पहुँचा दें। अतः उसने टीका-दौड़ की प्रथा का केन्द्र उसके दुर्ग को ही बनाया।

वालेचा का गढ़-दुर्ग गिरि था—सेलिया। वही से अपराधी मनोवृत्तियों का जन्म होता था और फिर अपराधी मनोवृत्ति के प्रतीक धाड़ेती लोग शांति-प्रिय जनता पर भीषण अत्याचार करके उनका जीवन सुलगती लकड़ी-सा कर देते थे। हम्मीर ने निश्चय किया कि वह उस गिरि दुर्ग को ध्वंस करके मूजा वालेचा की शेष शक्ति को ही समाप्त कर देगा। उसने अपने सामन्तो एवं सरदारों को एकत्रित किया। उनके समक्ष अपनी इच्छा व्यक्त की। सरदार लोग उसके इस दुस्साहस पर विस्मय विमुग्ध हो गए। बोले, “वह दुर्ग वीहड़ जंगल से घिरा हुआ है और वहाँ तक पहुँचना सहज नहीं है।”

‘असम्भव’ और ‘नहीं’ शब्द में मुझे श्रद्धा और विश्वास दोनों नहीं हैं।

“श्रद्धा का प्रश्न नहीं है, प्रश्न है, अभी हमें हर कदम देख-भाल कर उठाना है। चारों ओर से मेवाड़ शत्रुओं से घिरा हुआ है। हमारे पास हाथी, घोड़े, अस्त्र-शस्त्र कुछ भी नहीं।”

हम्मीर की आँखों के डोरे तन गए। वह बोला, “जिनका जीवन सदा तलवार की नोक पर रहता है, जिनके पूर्वज वदन के छलनी होने के बाद भी रणभूमि में शत्रु से लोहा लेते रहे, उनके वंशज ऐसे ‘बोल’ बोल रहे हैं! मृत्यु को जीवन समझने के बाद भी आपकी वाणी ऐसी भाषा का प्रयोग कर रही है? ओह! हमारी इन बाहुओं को क्या हो गया जो महाबली हाथियों के पंख को रोक दिया करती थी?”

हम्मीर के ओजस्वी भाषण से सारे सामन्तो एवं सरदारों में जोश भर उठा। उन्होंने तय किया कि टीका-दौड़ की प्रथा की अदायगी मूजा

वालेचा के दुग और मित्रो के विनाश मे ही करनी चाहिए ।

तत्काल हम्मीर की दशा अत्यन्त निर्बल थी । उसके पास सेना, अश्व, हाथी और अन्य सरदारो की शक्ति भी नहीं थी । फिर भी हठी और नीति-प्रवीण हम्मीर ने पुरखो की रीत को तोड़ना नहीं चाहा । उसने अपनी शक्ति को सयम करके मेलिया की ओर प्रस्थान कर दिया ।

चाचा अजयसिंह, पवन सी और उसके साथ चुने हुए कुछ सरदार, मीना आदि लोग थे जिन्हे अजयसिंह ने चतुराई से मिला लिया था ।

सेलिया गांव पहुँचते ही हम्मीर ने रणभेरी बजवा दी । रणभेरी का शोर सुनकर दुगगिरी के आक्राता मँभल गए । उन्होंने अपने दुर्ग के कंगूरो पर चढ़कर बाणो की वर्षा आरम्भ कर दी । जिसका प्रत्युत्तर भीलो ने वापस बाणो से दिया । आततायी पूर्णरूप से युद्ध के लिए तत्पर नहीं थे फिर भी वे सुरक्षित गढ़ में थे । विवश हो, सरदार पवन सी ने अपने साधियों को बाण वर्षा के लिए रोक दिया ।

यहाँ वीरता के अनिरिक्त रण-कौशल की आवश्यकता थी । पवनसी ने बरसते बाणो के मध्य हम्मीर से निवेदन किया, “राणा जी, इस दुर्ग को हम इस तरह महीनो ही नहीं जीत पाएँगे ।”

हम्मीर को अपने किए पर तनिक पछतावा नहीं था । वह अकड़ कर बोला, “जीवन भर सम्मोह त्याग कर दुग में प्रवेश कर दो ।”

पवनसी के लघु भ्राता खेतसी व अन्य सरदारो को उस आज्ञा का पालन करना पड़ा । वह भी अपने भाई के साथ दुग की ओर बढ़ा ।

दिन भर युद्ध होता रहा ।

रात्रि के समय छात्रनियो में हम्मीर अपने सरदारो से मन्त्रणा करता रहा । उनके प्रहरी मजगता में पहरा दे रहे थे । उनके सैनिक अमल-पानी बरके अपनी अपनी छात्रनियो में विश्राम कर रहे थे, ऐसा हम्मीर को विश्राम था । अजयसिंह बार बार व्यग्र होकर कह उठते थे, “तुम में यह दृढ़ अच्छा नहीं, रण बिना शक्ति कभी नहीं किया जा सकता है । दुर्भाग्य में यहाँ हम पराजित हो गए तो चित्तौड़ की गुप्त शक्ति से सारा



देश परिचित हो जाएगा और हम कभी भी चित्तौड़ का उद्धार नहीं कर पाएँगे !”

हम्मीर चाचा के वचनों को सुनकर हताश नहीं हुआ। हल्की-सी व्यथा उसके नेत्रों में तैर उठी। वह मौन होकर अनिभेप दृष्टि से ज्वलित उल्का की काँपती लौ को देखने लगा।

चाचा कह रहे थे, “यहाँ विवेक की जरूरत है।”

हम्मीर के समक्ष वह सुरक्षित दुर्ग नाच उठा। चाचा के कथन में सत्य का आभास प्रतीत हुआ। यह निर्विवाद रूप से सही था कि इस दुर्ग को विजित नहीं किया तो सिसौदियों का वश सदा के लिए मेवाड़ को खो देगा।

खेतसी हम्मीर का अत्यन्त विश्वास पात्र एव रण-कुशल योद्धा था। वर्षों से उसके खानदान वाले मेवाड़ के राज्य-वश पर अपना सर्वस्व विसर्जन करके उनकी आन-वान की रक्षा करते आए थे। आज हम्मीर पर आए सकट को देखकर वह अत्यन्त व्यग्र हो उठा। वह अपने तम्बू में विचारमग्न बैठा था। उसके समीप एक लघु रजत-चपक में कसूम्बा [अमल (अफीम) को घोल कर रखा हुआ पेय-पदार्थ] रखा हुआ था। उसके समीप ही एक गिलास-दूध का रखा हुआ था। दो सेवक सतर्क होकर खड़े थे। समीप उसका बड़ा भाई पवनसी बैठा था।

दो सेवक थे—शेरा और मेरा। भील जाति के ये प्राणी अत्यन्त स्वामिभक्त एव वलिष्ठ थे।

अपने सरदार को उदास देखकर शेरा बोला, “क्या बात है स्वामी ?”

खेतसी दीर्घ निश्वास के साथ बोला, “दुर्ग विजय नहीं हुआ तो राणाजी किसी को मुँह दिखाने लायक नहीं रहेगे और दुर्ग के बारे में हमारी जानकारी नहीं के बराबर है। आज का यह अज्ञान सदा का अभिशाप सिद्ध हो जायगा।”

मेरा तनिक उत्सुकता से बोला, “मेरी समझ में एक उपाय आया

है ?”

“क्या ?” खेतसी ने तुरन्त पूछा ।

पवनसी के भी कान खड़े हो गए ।

“सबेरा होते-होते हमे दुग मे प्रवेश कर लेना चाहिए ।”

‘खेतसी धीरे से हस पड़े मेरा के भोलेपन पर । उसके कन्ध को थपथपाते हुए बोले, “दुग मे पहुचना क्या महज है ?”

“सहज नहीं है किन्तु हमे माहस को भी नहीं छोड़ना चाहिए । किसी भी तरह दुग तक पहुचकर उसमे प्रवेश करना चाहिए ।”

शेरा ने मेरा की बात की पुष्टि की, “माहस को नहीं छोड़ना चाहिए, हम प्रयास करना चाहिए ।”

पवनसी ने अपने भाई को गल लगाकर कहा, ‘तुम मेरे सच्चे भाई हो ।”

खेतसी, मेरा और शेरा तीनों जने शस्त्रों से सज्जित होकर रात के समय दुग की ओर चल पड़े । रास्ता बड़ा विकट था । कँटीली भाड़ियों और घने पेड़ों से उलझी लताओं के कारण उन्हें हर कदम पर कष्ट उठाना पड़ रहा था । शेरा के हाथ बुझी हुई कुछ मशालें थी जो हम्मीर की मशालों के लिए सकेत था ।

चलने के पूर्व खेतसी ने हम्मीर क चरण-स्पर्श करके विगलित स्वर में कहा था, “राणाजी, आप अपनी सेना के साथ तयार रहिएगा । जैसे ही मशालें जले वैसे ही आप दुग के तोरण द्वार पर पहुच जाए ।

हम्मीर ने खेतसी को प्रणामागमन में आबद्ध करके सहसित स्वर में कहा, ‘तुम हृदय की मधुरतम उडकन हो, रिपु-गौरव में तुम्हारे जीवन को क्या-क्या यन्त्रणाएँ उठानी पड़ेगी, मैं कल्पना-मात्र से दुखी हो जाता हूँ । फिर ये शेरा-मेरा प्राणों की वाजी लगाने में मिसौंदियों से भी अग्रणी हैं, उन्हें भी शत्रु के मोर्चे पर भेजते हुए हृदय भर आता है । तुम दोनों भाइयों के ऋण से चित्तोन्मत्त कभी भी उग्रहण नहीं होगा ।”

खेतसी ने हम्मीर के इन व्यापक स्वर पर तनिक ध्यान नहीं

दिया । वह पूर्ववत् स्वर में बोला, “एक बात का ध्यान रखिएगा, यदि हम जँघरे में ही दुर्ग में प्रवेश करने में सफल हो गए तो हम दो मशालें एक साथ जलाएँगे ।”

हम्मीर स्वयं शस्त्रों से मज्जित खेतसी के मकेतो की प्रतीक्षा कर रहा था । उसके सारे सैनिक आज असमय ही युद्ध करने के लिए कटिबद्ध थे ।

एक छोटी-सी पगडंडी पर खेतसी, मेरा और शेराल चल रहे थे । दोनों ओर पत्थरों के टुकड़ों का ढेर था जो कदाचित् शत्रु को इस रास्ते में आया जानकर उनके नाश के प्रयोग में आता होगा ।

धीरे-धीरे मद्धिम चन्द्रिका के प्रकाश में उन्हें रास्ते में थोड़ी दूर पर एक छाया हिलती हुई दिखलाई पड़ी । उसके कदमों की आहट मेरा ने धरती पर कान रख कर सुनी । उसकी श्वश्वोन्द्रियाँ बड़ी प्रखर थीं । उसने बारी-बारी से धरती पर अपने दोनों कान रखे और कहा, “कोई सतर्कता से पहरा दे रहा है । हमें सावधान हो जाता चाहिए ।”

खेतसी ने अपना वनुष बाण संभाला । तीनों माथी भाड़ियों की ओट में आगे सरकने लगे । कभी-कभी भाड़ियों की शाखाएँ उनके वृक्ष की लोह-चादर में टकरा कर घीमी ध्वनि बर देती थी ।

मद्धिम चन्द्रिका के प्रकाश में खेतसी ने उस व्यक्ति को देख लिया जो सतर्कता से पहरा दे रहा था । खेतसी ने अपना निशाना बाँधा, मेरा और शेराल ने भी अपने धनुष को चढ़ाया । खेतसी ने एकलिंगेश्वर की मन ही मन आराधना की । तीर छोड़ा । निशाना ठीक लगा । पहरेदार का काम तमाम हो गया ।

अब वे तीनों ऊँची धरती पर खड़े होकर दुर्ग को देखने लगे । जिस रास्ते से वे अभी जा रहे थे—उस रास्ते से पूरा खतरा था । हर पचास कदम पर पहरेदार तैनात थे । यह भाग्य की बात ही समझिए कि दुर्ग की दीवारें जगह-जगह टूटी-फूटी थीं । इन टूटी-फूटी दीवारों पर चढ़ने में सरलता हुई है ।

उन्होंने अपना पथ परिवर्तित कर लिया। अब वे अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ रास्ते से जा रहे थे।

अप्रत्याशित एक भाड़ी से एक नाग झपट कर मेरा के पाँव पर पड़ा। मेरा का पाँव मोटे बस्त्रों से बँधा था, अतः साँप अपना डक नहीं मार सका किंतु वे इस आक्रमण से शक्ति हो उठे। मेरा ने साँप के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। यह आक्रमण अशुभ-सा लगा मेरा को। उसका साहस टूट-सा गया। उसके पाँव धीरे उठने लगे। खेतसी उसकी मन स्थिति से भिन्न हो गया। उसका कन्घा पकड़ कर वह बोला, “साहस छोड़ने से कुछ नहीं होगा। देखो, दुर्ग हमारे बहुत समीप आ गया है, हमें दुर्ग के द्वार खोलने हैं।”

अब रास्ता कँकरीला सा आ गया। चतुर्दिक कँटीली झाड़ियाँ एवं ऊँची-नीची कटी चट्टानें सी दीख पड़ने लगी। कुछ पत्थरों के विशाल खड भूत की छायाओं से लग रहे थे। खेतसी ने एक बार उन पत्थरों को स्पर्श करके देखा। अन्तराल की भय सजक भावनाओं का भ्रम दूर हो गया।

रात्रि का सौंदर्य-चन्द्र अब दुर्ग के पीछे लुप गया था। धोर तिमिर के मध्य पथ का अवलोकन दूभर हो गया था। अँधेरे में ठोकर खा-खाकर वे अत्यन्त सावधानी से कदम रखते हुए आगे बढ़ रहे थे। वे प्रयत्न-शील थे कि उनके कदमों की आहट भी न हो।

गतव्य जत्र समीप आता है तत्र विपमनाएँ वह जाती हैं।

दुर्ग की प्राचीरों के मनिक्कट पहुँचते ही एक पहरेदार ने उन्हें देख लिया। देगने के साथ उसके मह में हकी आश्चर्य-भरी चीख निकल गई। उसकी चीख मृगतुल्य ही मेरा न धनुष नाना और वह खेतसी तथा शेरार को पकड़ कर दूसरी ओर अत्यन्त शीघ्रता से लपक गया। उसे अदेश था कि अभी थोड़ी देर में यहाँ बड़ बाणों की वर्षा होगी। हुआ भी वही। कई बाण एक साथ उस जगह पर आकर टकराए। वे तीनों मौम रोक कर बैठ गए—एक पत्थर की ओट में। तीनों पसीने से नयन हो गए थे। कुछ देर तक वे इसी तरह बैठे रह, अन्त में वे

फिर आगे बढ़े ।

इस बार उन्होंने अपनी तलवारों व ढालों को सँभाल लिया । वे अन्धकार में पाँवों व हाथों के स्पर्श मात्र से पथ का परिचय पाते थे और आगे बढ़ जाते थे ।

खेतमी ने दुर्ग की दीवार के समीप पहुँच कर गगन को निहारा । असीम शून्यता व्याप्त उस तारों भरे आँचल को वह अल्पकाल के लिए देखता रहा । किरतियाँ की ओर दृष्टिपात करके वह बोला, “चार बज रहे मेरा, अब शीघ्र ही कार्य समाप्त किया जाय ।”

अब समस्या थी कि दीवार पर कैसे चढ़ा जाय ? दीवार बहुत पुरानी और खुरदरी थी । जगह-जगह टूट जाने के कारण उसमें गढ़े भी पड़ गये थे । वे तीनों दीवारों को देखने लगे । दीवार के कँगूरे पर किसी आदमी के चलने की ध्वनि आई । तीनों जनों जमीन पर लेट गए ।

कदमों की आहट शनै-शनै लोप हो गई । खेतसी ने दोनों की गर्दनो को अपने समीप लाकर कहा, “अब क्या होगा ?”

शेरा ने कहा, “यदि यह पहरेदार यही पर पहरा दे रहा है तो हमारा यह कार्य सफल नहीं हो सकता । हमें वापस लौट जाना पड़ेगा ।”  
क्यों ?”

“क्योंकि इस पहरेदार से यह बात स्पष्टरूप से ज्ञात होती है कि हर बुर्ज पर सैनिक तैनात हैं ।”

“अमफल लौट जाने से तो अच्छा है कि लडकर मर जाएँ ।”

शेरा गंभीर बना रहा ।

खेतसी का मस्तिष्क भी मनभना उठा । उनके विचारों की शक्ति और कल्पनाओं की उड़ान मर-सी गई थी ।

शेरा दृढ़ भावना को अपने स्वर में धोलकर बोला, “मैं इसका प्रवन्ध करता हूँ । मैं आपको निराश नहीं होने दूँगा ।”

क्या होगा ? इससे खेतमी और मेरा दोनों नितान्त अपरिचित थे ।  
उनके समक्ष अन्धकार था, घोर अन्धकार ।

- शेरा न रुहा था, मुँस था। ऊपर चढ़ाइए, पर ठहरिए, पहले मैं यह पता लगा लूँ कि यह पहरेदार कितनी देर में लौटकर वापस आता है। उसे लौटने में सात क्षण लगे। अबकी बार वह पहरेदार आकर गया तो शेरा अपनी तलवार का मुँह में दाबकर दीवार पर चढ़ा। तनिक सम्बल दीवार पर चढ़ने के लिए पर्याप्त था। दीवार पर चढ़कर शेरा ने अपने आपको वृज के कणूरे में आत्मसात-मा कर लिया। उसके हृदय में विचित्र आन्दोलन मच गया था। जीवन और मृत्यु का सङ्घर्ष। उसकी साम रुकी हुई थी।

वह पहरेदार निश्चय सा शेरा की ओर आ रहा था। उसके पाँवों की गहरी शेरा की मृत्यु के आगमन की सूचना दे रही थी। पर जब ही वह शेरा के समीप आया शेरा ने लपक कर भरपूर प्रहार अपनी तलवार का उस पहरेदार के गले पर कर दिया। पहरेदार की गदन घट से गला हो गई। रक्त की धारा पूरा देग से प्रवाहित हो गई। प्रहार उतना सवा-तिता था कि वह अपना शरीर भी नहीं कर सका।

शेरा ने तुरन्त अपना शिरस्त्राण बदल कर उस पहरेदार का पहन लिया और फिर खेतसी को पुकारा। खेतसी के आते ही मेरा न सारी स्थिति में अवगत कराया। मेरा के नेत्र अश्रु से छलछलता प्राण। खेतसी ने उस घनाट प्राणिमन में आबद्ध कर लिया।

प्रश्न उठा कि अब क्या किया जाय ?

याजना बनाई जाने लगी।

इस बार खेतसी के मस्तिष्क ने तुरन्त काम किया। उसने कहा कि गढ़ के बाहर शत्रु की सत्ता नहीं के बराबर है, अतः शेरा शत्रु के भेष में दुर्ग के तारण द्वार पर जाएँ और हम मशाल जलाकर राणाजी को आन का निमन्त्रण दें। उस ही वे दुर्ग के समीप आएँ, वस ही हम दोनों जाँच न डिलायें। हमारे चित्तान में दुर्ग के सैनिक हक्के उतरें होकर हगाँ। तब मात्र भाग्य लय में शेर दरवाजा खोल देगा।

तब न आप दुर्ग के तारण-द्वार के सम्मुख आकर चित्ताएँ।

“ऐसा ही होगा।”

दुर्ग के कँगूरो की ओट लेकर दो मशालों का सकेन किया गया।

गणगा हम्मीर साँस रोककर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वे तुरन्त अपने मामन्तो एव सरदारों को लेकर दुर्ग पर चढ़ आए। दुर्ग वाले इस आकस्मिक अग्नि के आगमन में आकुल हो उठे। वे सँभल कर कँगूरों पर आग, इससे पहले ही दुर्ग के तोरण द्वार पर मेरा और खेतसी ने शत्रुओं को ललकार दिया।

गेरा दुर्ग के सैनिकों में सम्मिलित था। शत्रु की ललकार सुनकर मारे के सारे पहरेदार आवेश में मेरा और खेतसी की ओर भागे तब तक गेरा ने तोरण द्वार खोल दिया।

हम्मीर ने दुर्ग में प्रवेश कर लिया।

शत्रुओं की स्थिति ही बदल गई। वीर बाकुरे राजपूतों ने उन आत-  
तायियों को गाजर-मूली की तरह काटना प्रारम्भ कर दिया।

भोर का तारा उगा।

देखते-देखते तलवारों की झकार में भास्कर भगवान भी उदय हो गए। प्रखर धूप का साम्राज्य नष्टि पर विस्तृत होकर मानवों के आत्म-  
लोक में उल्लास की उर्मियों का संचरण करने लगा। पक्षियों का कल-  
रव कृपाणों की भयानक खनखनाहट में लुप्त हो गया। ऐसा पनीत  
हो रहा था मानो आज दुर्ग के लिए यह सूर्य पश्चिमाप हरण न होकर  
मृत्यु का निमंत्रण देने को आया हो। मेवाड़ी सिंहों की भाँति गर्ज गर्ज  
कर उन लुटेरों को मारने लगे।

सूर्य रश्मि-रथ पर आरूढ़ होकर थोड़ा ही अग्रसर हुआ कि दुर्ग जीत  
लिया गया। हम्मीर का अतुल शौर्य उस दिन देखने योग्य था।  
मव ने देखा—किस तरह हम्मीर पर्वत की भाँति अटिग होकर शत्रुओं  
का सहार कर रहा है। उसका लहलुहान खग एक-एक बार में दो-दो  
शत्रुओं को घराशायी कर रहा है। शत्रुओं के तीर उसकी दक्ष से टक-  
राने थे पर उसके दक्ष की लौह-चादर इतनी मोटी थी कि तीर उससे

टकराकर ही रह जाते थे । उसकी ऐसी अद्वितीय वीरता देखकर सब ने मन ही मन सोचा—वास्तव में हम्मीर ही चित्तौड़ का गणपति बनने योग्य है ।

दुर्ग जीत लिया गया ।

हनुमान की मूर्ति अकित लाल ध्वज फहरा कर दिया गया ।

शेरा माहत था । वह मिसकता हुआ हम्मीर के पास आया । उसको देखते ही मुख का सागर दुख की वारिधि में बदल गया । हम्मीर को अपना अन्तरंग खेतसी स्मरण हो उठा । कोई जोर से चिल्लाया, “मेरा कहाँ है ?”

तुरन्त शवों में से दोनों लाशें ढूँढ़ गईं । हम्मीर उन दोनों को देखते ही काँप उठा । खेतसी के प्राण पखेरू उड़ गये थे । नरकात्मा की सी धिनीनी आकृति लिए हुए खेतसी की लाश थी । रक्त तन से इतना निकल गया था कि चेहरा युगो की रण की भाँति श्वेत-पीत हो गया था । दाएँ हाथ की पाँचों अँगुलियाँ कट गई थी । एक कपोल पर भाला चुभ गया था । दो तीर छानियों में घुसकर पीठ में निकल आए थे । एक जाँघ पर तलवार का वार लगा था जिसमें मांस का एक बड़ा लोथड़ा कट कर वहीं गिर गया था ।

इस भयंकर दृश्य को देखकर सभी जनो के आत्म-लोक में व्यथा का भूँसा उठ खड़ा हुआ । पवनसी का कलेजा मुह को आ गया । वह चिंघाड़ मार कर रो उठा । हम्मीर और सभी ने उसे प्रिय दिया पर पवनसी की आवाज आसूँ क्षण भर के लिए भी नहीं रुक रहे थे ।

एक सन्निभ भागवत जल लाया । उसने शेरा के मुह पर छिड़का । शेरा में कम्पन उपन्न हुआ । हम्मीर तटप उठा । उसकी रग-रग में दुख की लहर दाटपड़ी । मनुष्य जीवित रह कर जिन अनुभूतियों का अपने मानव लोक में मधुप देगता है, उसे वह मर कर नहीं कर पाता । हम्मीर की इच्छा इन अनुभूतियों के कारण ऐसी कायर हो गई कि उसने तत्क्षण चाहा कि वह मर जाए, ताकि वह इस बीभत्स मृत्यु की यत्रणा से बच



जाए। उसके नेत्र अश्रुओं से भर आए। उसने दूटे हुए आदमी की तरह अपने शरीर को खेतसी की लाश पर झुकाया। तभी शेरा दूटते हुए स्वर में बोला, “राणा जी।”

हम्मीर उसके समीप गया।

“राणा जी।”

“क्या है शेरा?”

“एक इच्छा है?”

“बोलो, तुम्हारी हर इच्छा को हम्मीर अपना सर्वस्व त्याग कर के भी पूर्ण करेगा।”

“नहीं दीवारण, आप मेरे समीप आ जाएँ।”

हम्मीर उसके समीप चला गया।

शेरा ने अपने काँपते हाथों से हम्मीर के दोनों हाथ पकड़े। उन्हें स्नेह से अपने भाल पर रखा। फिर मधुर जीवनदायिनी मुस्कान के साथ उसने अपने वक्ष के घाव से रक्त निकालकर हम्मीर के ललाट पर खून का टीका लग दिया। तब शेरा के तरल लोचनों में उज्ज्वल रश्मियाँ विकीर्ण हो उठी। एक अद्भुत-अलौकिक आनन्द की सर्जना हो गई। हम्मीर हँसे स्वर में बोला, “शेरा।”

“आप चिरायु हो।”

“शेरा मैं !”

“चित्तौड़ की प्रजा और भील का हर फला और पाल का मुखिया तथा गमेती आपके चरणों में अपना भस्तक सदा रखेगा। अपने बाहुओं की आपकी सेवा में लगा देगा। जहाँ मेवाड के कर्णधारों का पसीना बहेगा, वहाँ हमारा खून बहेगा।”

हम्मीर और उसके सरदारों को कलेजे मुँह को आने लगे।

शेरा के मुख पर अन्तिम बार आह्लाद का प्रकाश पुज आलोकित हुआ। उसने स्नेह से मेरा को पुकारा और दूसरे ही क्षण उसका शरीर ठहा हो गया, पर मेरा वहाँ नहीं था।

तभी मेरा गिरता पड़ता और लटखडाता हुआ उन दोनों लाशों के समीप आया जो पुराने चमपत्रक की भाँति जीग-जीग हो गई थी । उसका मुख चरम दुःख के तारंग चिह्न हो गया था । तब मैं गगन-यमुना निरन्तर बह रही थी । वह पड़ा खाकर उन लाशों पर गिर पड़ा । वह इतनी कमियाँ ले चीन्हा कर रहा था कि पत्थर भी पिघल उठे । तब वह भरीएँ स्वर में बोला ' मेरे स्वामी और नाती मुझे भूल मत जाना, हम सब फिर मिलेंगे, भगवान महादेव की मीनद, हम जरूर मिलेंगे, इस लोक में न मही, पर उस लोक में हमें कोई अलग नहीं कर सकेगा । मेरे मित्र, मुझे मौत क्यों नहीं आती ? मुझे मौत क्यों नहीं आती ? मेरा अपना मेरा चला गया ।

मेरा अचेत हो गया । उसे तुरन्त उपचार के लिए ले जाया गया ।

हम्मीर ने अपने कमर में दुपट्टा खोलकर उन दोनों को ओढ़ा दिया और महाप्रभु एकलिंगेश्वर को उनके मोक्ष पाने की वह प्रार्थना करने लगा ।

'टीका दौड़' की रस्म पूरा हो गई ।

पवनमी ने समस्त कार्या को सम्पूरा करके अंतिम बार गिरी दुर्गा का दर्शन करके कहा 'तुम जीत लिया राणा जी पर शक्तिमान राजुओ का कटा कर ।'

हम्मीर का मस्तक नत हो गया । पवनमी के नथों में अविरल अश्रु बह उठे ।

५

अब हम्मीर पूरुष से कलवाडा पवतीय भाग का अधीश्वर होकर चित्तोड की मुक्ति का उपाय सोचने लगा । राजा मालदेव की शक्ति का ह्वास करने का अनशान्त उपाय मैं हम्मीर मलमल हो गया । सर्वप्रथम

उसन ढिंढोरा पिटवाया कि जो वीर मेवाटी चित्तौड की मुक्ति चाहता है और अपने आपको राणा हम्मीर का रक्षक तथा उसे चित्तौड व अपना राणा एव एकलिंगेश्वर का दीवारण मानता है, वह वीर अपने परिवार सहित पूर्व-पश्चिमी पर्वतीय प्रदेशों में आकर बस जाए अन्यथा वे शत्रु समझे जाएंगे तथा उन्हें शत्रुओं की भाँति नाना प्रकार की आप-दाओं का सामना करना पड़ेगा ।

इस घोषणा के सुनते ही मेवाडी वीर, भील, मीना तथा अन्य प्रजा-गण अपने गृहों का त्याग कर पर्वतीय प्रदेश में आ गए । इनमें हम्मीर को दो बड़े लाभ हुए—उसके विज्वासी साथी संगठित हो गए तथा उनकी इस बात का भी अनुमान हो गया कि उसे कितनी प्रजा 'राणा' के रूप में स्वीकार करती है ? वह रत्नसिंह का पुत्र नहीं था किन्तु मिसौदिया नामन्त का पुत्र अवश्य था । प्रजा में यह एक भयानक प्रश्न खड़ा हो सकता था कि केवल हम्मीर ही क्यों राणा बने ? अन्य राजर्षी सामन्त जो महाबली थे, इस पद के लिए मधर्ष प्रारम्भ कर सकते थे, पर हम्मीर ने देखा कि किसी ने हल्के स्वर में भी इस प्रश्न को नहीं उठाया है । वह सर्वप्रिय है । उसे सभी सामन्त अपना राणा स्वीकार करते हैं । उसने जाना कि इस समय सगस्त वीर गणों के मन में एक ही लगन है, एक ही प्रतिज्ञा है, एक ही भावना है—गौरव के स्मृति चिन्हों का साकार, मेवाड़ियों के स्वाभिमान एव सम्मान का प्रतीक चित्तौड दुर्ग की मुक्ति । शत्रु के हाथ में गई सूर्यवशियों की श्री और कीर्ति की पुन प्राप्ति । अन्याय, अधर्म और अत्याचार की समाप्ति । स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता का आह्वान ।

हम्मीर ने मेवाड़ियों की तत्परता देखी । वे लोग कैलवाड़ा की ऊँची-नीची बरती पर अपने घर बनाने लगे । देखते-देखते वहाँ नई नगरी बस गई तथा मेवाड़ के अन्य प्रांत निर्जन होने लगे । जब राजपूत पूराण्डप में ऊपरी हिस्से में आ आकर बस गए तो हम्मीर ने आने-जाने के रास्तों का वीहड कर दिया । शत्रु की सेना या उसके अधीनस्थ सामन्त-परदार

सुगमता से यात्रा न कर सके, इसके लिए उसने मुख्य-मुरय पथो को ध्वश करना प्रारम्भ कर दिया तथा उसने यात्रियों एवं मालदेव के सरदारों को लूटना प्रारम्भ कर दिया ।

गुर्गिला युद्ध-पद्धति से हम्मीर को दो बड़े लाभ हुए । पहला लाभ यह हुआ कि शत्रु की शक्ति क्षीण होने लगी और दूसरा हम्मीर को शत्रु के अस्त्र-शस्त्र मिल जाने थे । इससे हम्मीर अपनी शक्ति संचय करने लगा तथा उसकी बढ़ती शक्ति को देखकर मुगल जाति के आतकों से प्रताड़ित राजस्थान के कई सरदार इस स्वाधीनता प्रेमी वीर की सहायता करने लगे । हम्मीर की शक्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी ।

X

X

X

मुहम्मद तुगलक पूरा अहमक था तथा उसने अनेक दुस्माहसपूर्ण अद्वारदर्शी कार्यों का बीटा भी उठाया, फलतः उसकी शक्ति छिन्न भिन्न होन लगी, तथा प्रजा में असंतोष की ज्वाला जाग उठी ।

दमी बीच हम्मीर के साथ भाग्य एक खेल खेल गया । अभी वह पूर्णरूप से अपन को मगठित कर भी नहीं पाया था कि उसने यह विचार कर लिया कि वह चित्तौड़ पर हमला करेगा । चाचा मना करते रहे पर हम्मीर नहीं माना । उसने कहा, "पहाड़ी चूहों की भाँति जीवन निर्वाह करने में अच्छा है कि एक दिन सम्मान की मृत्यु पा जाँँ ।"

मृत्यु को सर्वोपरि मानने वाले चतुर राजनीतिज्ञ नहीं हो सकते ।

बटा, सफल राजनीति का तात्पर्य यही होता है कि यत्न केन प्रकारेण अपन प्रभुत्व का बढ़ाया जाय ।'

'नहीं मैं चाहता हूँ कि अतिशीघ्र आक्रमण करके चित्तौड़ पर अधिकार कर लिया जाय ।'

मालदेव दनना दुबल नहीं है ?"

'सिसादिया के समक्ष चौहान निनके के मरश ह ।"

नहीं, अभी जानार के चौहानों की शक्ति क्षीण नहीं हुई है ।'

हम्मीर ने अपने दृढ़ का नहीं त्यागा । उसने अपने साथी अनगसिंह

को बुलाया और चित्तौड़ पर आक्रमण करने की योजना बना डाली । भील योद्धा मेरा अपना धनुष सँभाल चुका था । चाचा अजयसिंह श्रात-क्लात-से चहलकदमी कर रहे थे । अन्त में वे गहरे मौन को तोड़ते हुए बोले, “टीका-दौड़ में तुमने अपनी दो वाजुएँ कटवा डाली थी हम्मीर । शेर और खेतसी की मृत्यु को हम कभी नहीं भूल सकते । आज तुम फिर शीघ्रता करके ।”

हम्मीर उत्तेजित ही उठा । वह झुँझलाता हुआ बोला, ‘आप मुझे सदा निरुत्साहित कर देते हैं । मुझे विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि मुहम्मद तुगलक अभी मूर्खता भरे कार्यों में लगा हुआ है, ऐसे समय किया गया आक्रमण कभी भी विफल नहीं हो सकता ।”

अनगसिंह महावली जागीरदार था । श्यामवर्ण और लम्बा कद । सदा ‘अमल’ के नशे में रहता था । क्रूर प्रकृति का दयाहीन । चित्तौड़ नरेशों का समर्थक । जीवन के इस परमध्यय का हामी—“युद्ध करो । जो राजपूत युद्ध के बिना रहता है वह अवश्य वर्णशंकर होता है ।”

अनगसिंह ने हम्मीर की बात का समर्थन किया । उसने अपना खड्ग म्यान से निकाल कर कहा, “राणा जी ठीक फरमा रहे हैं । हमें भय से मुक्त होकर अति शीघ्र चित्तौड़ पर आक्रमण कर देना चाहिए ।”

“युद्ध ।” बीच में अजयसिंह बोले, “बिना पूर्ण शक्ति युद्ध घातक सिद्ध होता है ।”

“वीरों के लिए युद्ध कभी भी घातक सिद्ध नहीं होता ।”

उस दिन बात ने विवाद का रूप धारण कर लिया । विवाद भी कुछ ऐसा उलझा कि फिर सुलझा ही नहीं । रात के समय माँस पकाया गया था । मेरा दो हिरन मार कर लाया था । उसका सुम्बादिष्ट माँस जब भुनकर अजयसिंह जी समक्ष रजत-थाली में ले जाया गया तब उन्होंने ‘नहीं’ का सिर हिला दिया । वे तनिक व्यग्र जान पड़ रहे थे । हम्मीर के हठ के समक्ष वे पराजित अवश्य हो जाते थे पर अब उन्हें यह स्पष्ट लक्षित हो रहा था कि उसका भविष्य अन्धकारमय है । अभी तक उस

की शक्ति का पूरा मगउन नहीं हुआ है, अभी तक उसके मारे सरदार हिंदुवाग न्त्र के नीचे एकत्रित नहीं हुए हैं तब वह जालोर के मोनगर चौहान मालदेव ता नामना कैसे करेगा ।

यह गति महारात्रि बन गई । उसका अन्त नहीं । अजयमिह विचारों के द्वन्द्व में नार नार प्राची के पागण में मूय-देवता के आगमन देख रहे थे ।

उत्तर हम्मीर का भी चैन नहीं ।

निशेध पहर के तीरव क्षणा में उसमें एक इत न समाचार सुनाया कि कोई घुडसवार जनु सैनिक गुप्त रूप से माग में जा रहा है । उसके पास मिश्रा की दो बड़ी-बड़ी शलिया हैं ।

हम्मीर यह सुनकर उमाह में भर उठा । उसकी शान्ति में चमक आ गई । अभाव की दशा में थोड़ी भी प्राप्ति वरदान मित्र होती है । उसने अपना वनुत और स्वर्ग मभावना और अनगमिह को जगाया ।

पयनीय पथ की चट्टानों पर उन दोनों की पगरक्षिया धीमी-धीमी आवाज कर रही थी । कभी-कभी हम्मीर का गंगरगा किसी भाड़ी के काटा में उलभ जाता था । अनगमिह ने अपने दुपट्टे के बने कमरबन्द में एक लघु स्वर्ण-पेटिका निकाली और उसमें से अमल का एक टुकड़ा तोड़कर वह चपा गया जैसे वह विनाक्त पदार्थ उस योद्धा के लिए एक साधारण खाद्य है ।

एक गति ने हाथ में मशान थी । जती हुई नहीं, बुझी हुई । वह पहाड़ी रास्ते में पथ-दर्शन परिनिर्णय था । वह उन दोनों के आगे जा रहा था । उसके चरण उन निमिराच्छन्न वीहड पगडण्डियों के हार्दिक मित्र में जान पड़ते थे, तभी वह आता-पुनः शीघ्रता में पड़ता वाली पगडण्डियों पर भाग रहा था ।

आगिर व तीना गन्तव्य पर गा पत्तन ।

राज्यता रोम-रु-ये-पडे-हा-गण । एक सैनिक ने मशाल ज्वलित की । मुसलमान आगिदारी गन्तव्य पर चला गया । उसका काला घोड़ा अगते

कदम उठाकर हिनहिना उठा। उसकी थैलियों के सिक्के बोल उठे। सिपाही के पीछे तीन घुड़सवार और थे, वे भी सावधान होकर खड़े हो गए।

हम्मीर ने कड़ककर कहा, "सिपाही, प्राणों की रक्षा चाहते हो तो थैलियाँ साँप दो।"

सिपाही अर्थभरी जलती दृष्टि से हम्मीर को देखने लगा।

हम्मीर उसके और समीप आया। सिपाही ने अपने घोड़े को पीछे कर लिया। उसकी दृष्टि अपनी दोनों थैलियों पर थी।

"युद्ध करोगे?" अनर्गसिंह ने आगे बढ़कर पूछा।

"हाँ, जब तक जान है तब तक अपने मालिक से दगा नहीं करूँगा। यह उसकी दौलत है, उसके दरबार में हाजिर करूँगा।"

हम्मीर ने अनर्गसिंह की ओर उन्मुख होकर कहा, "यह अभिमान का पुतला है। इसे ।"

बीच में ही सिपाही बोला, "जान शान से कीमती नहीं। मैं और मेरे साथी मरते दम तक आपको यह दौलत नहीं देंगे।"

हम्मीर ममक्रीते के स्वर में बोला, "क्यों जान के पीछे पड़ रहे हो, मैं व्यर्थ में खून बहाना नहीं चाहता, पर यदि तुम मेरी आज्ञा को नहीं मानोगे तो तुम सबकी गर्दन जमीन पर लाटती नजर आएंगी।"

"एक कुत्ता भी वफादार होता है, फिर हम तो आदमी हैं। वफा को कैसे छोड़ सकते हैं, बहादुर।"

"फिर?" लघु शब्द एक बड़ा प्रश्न उत्पन्न कर गया।

"आप अपना काम करें और हम अपना करेंगे।"

तीन तीर आए और घुड़सवार जमीन पर लोट गए।

हम्मीर ने अपना खड्ग निकालकर उस पर वार करना चाहा। सिपाही थैलियाँ लेकर दौड़ पड़ा। वह अँधेरे में भागना चाहता था पर हम्मीर के सैनिकों ने उसे रोक लिया। वह आकुल-व्याकुल सा इधर-उधर देखने लगा। अनर्गसिंह को उसके श्वदेकरों से आच्छादित मृत को

देखकर करुणा आ गई। वह स्वयं वीर था। उसे शत्रु को इस तरह धिरे देखकर उचित न लगा। यह अन्याय है, वीरोचित आदर्श नहीं। वह कटककर बोला, “नहीं, ऐसा नहीं होगा, रुक जाइए राणाजी।”

हम्मीर की उठी हुई सड़ग उठी रह गई। भावनाओं से उद्वलित सिपाही ने अपनी कमर में छिपी कटार को निकाल कर हम्मीर पर हमला करना चाहा पर तत्काल अनगसिंह ने अपने विंगल बाजू को उठाकर सिपाही के हाथ पर दे मारा। इस आघात के लिए सिपाही तैयार नहीं था, अतः कटार उसके हाथ में गिर कर दूर जा गिरी। हम्मीर का मशानची पागलो की तरह चिल्लाकर बोला, “शत्रु का विश्वास न करो।”

अनगसिंह उन दोनों के मध्य पहाड़-मा आ गया। वह अपनी दोनों थैलियों को बाएँ हाथ में पकड़े हुए था।

दुःखद दुघटना के पूर्व ही अनगसिंह ने एक नूतन निराय लिया। वह सिपाही का कन्धा पकड़ कर बोला, “बफा को तुम छोड़ना नहीं चाहते हो और राणाजी इन थैलियों को, फिर क्यों नहीं उमका उचित निराय कर लिया जाय?”

“तेबिन मैं अकेला हूँ।”

“द्वन्द्व युद्ध कर लो।”

सिपाही ने अपनी ओर भयभीत चहरे की तरह देखा।

“तुम वीर होकर दतना उरते हो?”

“नहीं।”

“फिर तलवार हाथ में लेकर मुझ से लड़ो, जो जीतेगा, वही थैलियाँ लेगा।”

सिपाही उस महजता में थैलियों को अपने से दूर करना नहीं चाहता था। ‘ज्या पना, यह उन द्वारा उममें थैलियाँ प्राप्त करके हवा हो जा।’ उसने ऐसा जवाब और मान्यमान हो गया, “नहीं, तुम हुशियारी में मुझे धोखा देना चाहते हो?”

“नहीं राजपूत युद्ध में धोखा नहीं करते हैं।”



“मुझे विश्वास नहीं होता।”

“यह स्वभाव की बात है।”

हम्मीर के मन में अनर्गसिंह के प्रति विचित्र अनुभूति हुई। वह विजित वाज्जी को पराजय में क्यों बदल रहा है? राजनीति के उद्देश्यों-ध्वेयों के विरुद्ध चलकर वह विजय की उपलब्धि नहीं कर सकता।

अनर्गसिंह ने अपनी तलवार को नमस्कार करके कहा, “तुम्हें मुझमें लड़ना ही पड़ेगा। मैं तुम्हारे खून ले इस तलवार की प्यास बुझाऊंगा।”

“लेकिन ।”

“लेकिन मैं नहीं मान सकता। तुम नहीं लड़ोगे तो भी मैं तुमसे लड़ूंगा। न्याय भग नहीं होगा। देखो, सिपाही; राणाजी मेरे स्वामी हैं, मैं उनके चरणों की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि हम सच्चाई के साथ लड़ेंगे।

अन्त में सिपाही ने निश्चय कर लिया कि वह अनर्गसिंह से द्वन्द्व युद्ध करेगा। वह अपनी तलवार को संभालने लगा। उसने दोनों धैलियाँ अपनी कमर के बाँध ली। जब दोनों द्वन्द्व युद्ध के लिए तत्पर हुए तब क्षण भर के लिए दोनों के मन में मृत्यु की बात आ गयी।

थोड़ी ही देर में स्थिति बदल गई। हम्मीर उन दो द्वन्द्व युद्ध-वेत्ताओं का न्याय करने के लिए एक ओर चट्टान पर बैठ गया। उसका हृदय निश्चल था। अन्य सैनिक दर्शक की तरह विस्मित उत्सुक दृष्टि से उन दोनों को टुकुर-टुकुर देखने लगा। मशालें जल रही थीं।

अनर्गसिंह और सिपाही आमने-सामने आए।

दोनों वलिष्ठ और खूँखार लग रहे थे।

हम्मीर ने अन्तिम बार यह प्रयास किया, “यह निश्चय समझो कि तुम दोनों में से एक को मरना पड़ेगा, क्यों नहीं प्रेम भाव से निर्णय कर लो।”

अनर्गसिंह ने व्यग्रपूर्ण तीखी मुस्कान के साथ कहा, “वीर लोग विश्वासघाती नहीं होते हैं। प्राण रहते वे अपने स्वामी को हानि नहीं

पहुँचा सकते ।”

मिपाही ने कहा, “राजपूत ठीक कहता है ।”

मिपाही यह कह गया, पर उसकी दृष्टि में त्रेचनी थी जिस न उसके मानस का अन्तर्दृष्ट स्पष्ट भनक रहा था । कदाचित् उस विद्वान् नहीं आ रहा था कि उसके साथ टन नहीं किया जाएगा ।

अनर्गमिह अब व्यग्र हो उठा था । समीप पड़ी त्रिकारण चट्टान के एक खडसे अपनी तनवार तो टकराकर बोना, “हमसे से एक की निश्चित मृत्यु है, मैं समझता हूँ वह तुम्हारी होगी ।”

“नहीं जनाव, यह आपकी होगी ।”

“अभी पता लग जाएगा, उठाओ तनवार ।”

त्रिद पथ था । चतुर्दिग् चट्टान के लघु-दीप खड विस्तृत थे । मशाल से हिलती वृक्षा की छायाएँ प्रेतान्नाम्रा सी प्रतीत हो रही थी । लगता था—य छायाएँ अभी किसी के प्राण को अपने में निगल जाएगी ।

टन—दोनों की तनवारे टकराई ।

हम्मीर की आत्मा आन्दोलित हो गई । इस एकाकी प्राणी के प्राण लेना उसको तनित अनुचित लगा । फिर दुर्भाग्य का क्या भरोसा ? वह और कैसे आजाएँ ? नहीं अनर्गमिह ।

हम्मीर विचलित हो गया । उसने एक बार पुनः प्रयास किया ।

“तुम द्वन्द्व युद्ध मत करा मिपाही वन देकर लौट जाओ ।

अनर्गमिह को एक साथ क्रान्त-घृणा गा गए । वह शिष्टता की परिधि के भीतर ही जाता, “राणाजी, यह जाओ जैसी बातें सबथा व्यर्थ है । यह युद्ध होगा और एक ही होगा हम शत्रु के खून में मेरी तनवार की प्यास बुझाकर ही रहगा । त्रिदुर्गत की तृप्ति ही वास्तविक तृप्ति है ।

मिपाही उमन्न गज सा प्रमत्ता हुआ जाता, जिस गान्धर्वी में उपा नहीं है उस गान्धर्वी के लिए जिदगी उद्विग्नता का सामान है ।”

अनर्गमिह की आत्मा उल्लस पड़ी । नरों के लोरे रश्मि हो उठे, “मुझे लटन में ही जीवन का सच्चा सुख प्राप्त होता है ।”

द्वन्द्व युद्ध प्रारम्भ हो गया ।

तलवारों की भयानक आवाज उस शून्य विजय पथ पर गूँजने लगी । मुसलमान योद्धा भी कम वीर नहीं था । वह भी अजीब पैतरे दिखला रहा था । किन्तु अनगसिंह की आत्मा निर्भय होकर वार कर रही थी । सिपाही हर क्षण लाख प्रयास करने के बावजूद भी शक्ति हो उठता था । अप्रत्याशित उसने एक वार अनगसिंह की बाजू पर कर दिया । अनगसिंह यदि उस वार से अपनी सुरक्षा नहीं करता तो बाजू घड़ में पृथक हो जाता फिर भी रक्तन्नाव नहीं रुका ।

हम्मीर का मन दहल उठा ।

अनगसिंह का पौरुष आहत साँप-मा फुटकार कर उठा । उसकी आँखें पैशाचिक भावनाओं में दीप्त हो उठी । वह हुँकार कर सिपाही पर दूट पड़ा । ऐसा डरावना दृश्य था कि हम्मीर एवं दर्शक मैनिक की रक्त-गिराएँ जम गईं । तदनन्तर उसने अपनी तलवार युगल करों में पकड़ कर सम्पूर्ण शक्ति से आघात किया । सिपाही के हाथ की तलवार छूट पड़ी । वह अत्यधिक चपलता के साथ चट्टान के टुकड़े के पीछे हो गया । आघात बच गया पर अनगसिंह पागल हो गया । वह उसकी ओर झपटा । निहत्या शत्रु था । भय में आक्रान्त । मृत्यु से शक्ति ।

अनग दैत्य की भाँति क्रूर अट्टहास कर उठा । मृत्यु-दूत की भाँति उसकी धनुषाकार भाँति उध्वोन्मुखी हो गई । उसने सिपाही की पगड़ी को पकड़ कर अपनी ओर खींचा । पर दूसरे ही पल सिपाही ने एक वधनखा निकाल कर अनग के उदर की ओर प्रहार किया ।

दोनों चतुर वीर थे । अनगसिंह ने हठात् सिपाही को छोड़ दिया और एक निकटवर्ती चट्टान पर चढ़ गया । वधनखा अनग पर फेंका गया । वार निष्फल हुआ । अनग उसकी ओर बढ़ा । प्रतिपल मृत्यु सिपाही की ओर बढ़ी । सिपाही की आत्मा की गहराइयों में निहित रोदन चीख पड़ा, "नहीं, नहीं, मुझे छोड़ दो ।"

हम्मीर द्रव्य से द्रवित हो चिल्लाया, "इमे मत मारो ।"

एक अट्टहास, दानवी अट्टहास ।

हम्मीर ने देखा, अनग के हाथ में मिपाही का मिर है । मिर से वहती खून धारा देखकर विह्वल हो गया, “यह क्षत्रियो की नैतिकता और धर्म नहीं है । यह अधर्म अनीति और महापतन है । किमी को अभय न देना वीर वप्पारावल के वंशजों के विश्वास पर आघात है, कुकृत्य है ।”

अनग एक विचित्र सी अनुभूति में अपने दांत किटकिटा उठा । एक चट्टान को प्रस्तर-पीठिका मान कर उस पर बैठ गया ।

उपदेशात्मक शैली में अनग बोला, “युद्ध ही योद्धा की महान् तिप्सा होती है रिपु का यह मर्दन और उसके रक्त से नित्य नूतन तपण ही उसके राज्य और हृदय के लिए श्रेष्ठ वरदान मिद्ध होता है । क्योंकि हृदय जब तक युद्ध-पिपासु नहीं होगा तब तक राज्य का विस्तार और तिप्सा की क्षुधा अन्तहीन नहीं होगी । शत्रु की मुक्ति स्वयं का पतन बनती है । इसलिए राणा जी अपनी वीरता के आतंक का डका उत्तर से दक्षिण और पूव से पश्चिम तक बजा दीजिए ताकि शत्रु आपके आह्वान के साथ पराजय स्वीकार करते ।”

अनगसिंह ने बैतियाँ हम्मीर का सोप दी, “यह लिप्सा है राणा जी, इससे जित्त दिन मन भर जाएगा, उन दिन स्यवशीय क्षत्रियो का प्रताप धुधला हो जाएगा ।”

तब अनगसिंह ने मिपाही के मिर को कदुक की तरह उस तिमिर-लोक में उटाल दिया ।

चतुर्विध नीरवता में हम्मीर की दृष्टि खो सी गई । उसका मन भोगिल हो गया । उन चट्टानों के पजीभूत तिमिर में हम्मीर तो उस मिपाही की गानर और चित्तित आग दीप्त अगार में दीप्त पड़ी ।

रात्रि अन्तिम साँसे ले रही थी। नील गगन में तारे कुम्हलाए फूलों से प्रतीत हो रहे थे। दूर पर तमसाकार शृंग-मालाओं की ओट से अरुणिम आभा के दर्शन होने लग गए थे। हम्मीर अभी-अभी शय्या त्याग कर उठा था। उसकी अलस तन्द्रिल लोचनों में भारीपन स्पष्ट झलक रहा था। वह पर्वत की ओर से बिखर कर आती हुई सूर्य-रश्मियों का अग्निमेष दृष्टि से अवलोकन करने लगा।

उमरती हुई दूरागत चारण की ध्वनि हम्मीर को प्रतिध्वनि बन कर कर्ण-कुहरो में टकराती हुई जान पड़ती थी। चारण किसी क्षत्रिय-वीर का यशोगान कर रहा था। चारण का स्वर वीन सा मधुर और कर्ण-प्रिय था। हम्मीर उसमें खो-सा गया। चारण धीरे-धीरे पगडडियों पर अमर यात्री की तरह चलता गया। उसका स्वर मदा होता गया।

वीन का तार टन्न की मर्मन्तिक ध्वनि करके टूट गया। हम्मीर का अग-अग भनभना उठा। उसे भय से काँपती उस सिपाही की सतप्त अवोध आँखें स्मरण हो उठी। वह मर्म-भेदी चीख हम्मीर के मन में आन्दोलन कर उठी। अनग का अट्टहास उसे क्रूरता की पराकाष्ठा लगा। उसका अन्तर सिपाही की मृत्यु के अवसाद के आवर्तन में आवेष्टित हो गया।

राजपुरोहित मन्त्रोच्चारण करता हुआ हम्मीर के आगे से गुजरा। हम्मीर पुरोहित की वाणी सुनकर स्वप्नाविष्ट-सा चौंक उठा। एक दीर्घ निश्वास प्रस्फुटित हुई जिसमें गहरी अन्तर्वेदना झलक रही थी।

आज दरवार में चाचा ने इस बात पर जोर दिया कि मालदेव के साथ असहयोग का सघर्ष शुरु किया जाय। असहयोग आन्दोलन से वह घबरा उठेगा।

कुशल नीतिज्ञ पवन सी ने अजयसिंह जी की बात का समर्थन किया,

“जब तक हमारे पास अस्त्र-शस्त्र पर्याप्त रूप से एकत्रित न हो जाए तब तक हमें अपनी सेनाओं का यहाँ से कूच नहीं होने देना चाहिए।”

अनंगसिंह बोले, इसके पहले अजर्यासिंह ने पुनः कहा, “असहयोग आन्दोलन और आपेमारी का युद्ध स्वतंत्रता के लिए बड़े सहायक सिद्ध हुए हैं। हमें मेवाड़ियों में निरन्तर इसी बात का प्रचार-प्रसार करना चाहिए जिससे राजा मालदेव का यहाँ जीना ही दूभर हो जाए। उसके पास असह्य सेना है, वह सपरिवार जालोर को छोड़ कर यहाँ पड़ा है, इतना व्यय है कि यदि मेवाड़ी जनता उसके साथ सम्पूर्ण असहयोग करना प्रारम्भ कर दे तो वह स्वयं चित्तौड़ से अपना डेरा उठा लेगा। हमें घर-घर जाकर यही कहना चाहिए कि पर्वत पर चलो, मालदेव को लगान न दो, उसका बात-बात में विरोध-अवरोध करो। जब हम पूर्ण रूप से शक्ति-सम्पन्न व मगठित हो जाएंगे तब हमारा ध्वज गौरव सहित लहराएगा, अन्यथा शीघ्रता में किया गया विवेकहीन कार्य पश्चात्ताप के आँसुओं के अतिरिक्त कुछ नहीं छोड़ेगा।”

अनंगसिंह ने अथ-भरी दृष्टि सारी उपस्थिति पर डाली। तब अपने पदासन में हटकर वह बोला, “चाचा जी अपनी अवस्थानुसार बात करते हैं और युक्तियाँ सुभाते हैं। चाचा जी श्रात यात्री की तरह युद्ध और असन्तोष में घबरारते हैं। अब इनका मन महाप्रभु एकलिंग की अभ्यथना के अतिरिक्त हिमा की ओर प्रवृत्त नहीं हो सकता। उनकी आत्मा हिमा व नाम से काँपती होगी। अब वे वृद्ध हो चले इसलिए वे सघष से हटकर आति से शत्रु को पराजय देना चाहते हैं। हिमा को त्याग कर अहिमा व आभार पर उस राज्य की प्राप्ति के स्वप्न देख रहे हैं निजामी दर-दर में शत्रु के खून के लाल छीटे अन्तित हैं।”

पन्नमी ने विरोध किया, “वात हिंसा-अहिमा की नहीं, वात है विजय की। पराजय की आशंका होने पर आक्रमण करना स्वतः ही है।”

जमाकर बोला, “आप ठीक कहते हैं, पर अभी शत्रु की दशा डाँवाडोल है। आक्रमण निश्चय सफल होगा। अहिंसा की वान नानी की कहानी सी निरुद्देश्य ही लगती है।”

अजयसिंह उठ खड़े हुए, “मैं इस बार अहिंसा की बात ही कहूँगा। जब स्वयं में प्रतिरोध की प्रबल शक्ति न हो तब अहिंसा का युद्ध ही शत्रु को देश-निष्कासन के लिए विवश करता है।”

अनगसिंह कटु-स्वर में बोला, “भीख में स्वराज्य नहीं मिलता काका-सा, भगवती माँ को खून दो, उसके खप्पर को रुढ़-मुट से भर दो, वह आपको स्वतंत्रता देगी, आपकी जन्मभूमि को मान-मर्यादा देगी।”

हम्मीर ने अनगसिंह की बात का समर्थन बड़े शान्त-स्वर में किया। सिंहासन पर अकड़ कर वह बोला, “शत्रु की विपन्न स्थिति का हमें लाभ उठाना चाहिए। मुहम्मद तुगलक अभी मालदेव की सहायता नहीं कर सकेगा, ऐसे समय हमारा आक्रमण निष्फल नहीं होगा।”

अनगसिंह अपनी अमानक आकृति पर घृणा को नचाता हुआ तीव्र स्वर में बोला, “युद्ध की ओर से कभी भी उदामीन न रहो, वीर के लिए युद्ध न करने का विचार ही मृत्यु है।”

वस फिर क्या था ?

चित्तौड़ पर आक्रमण की तैयारियाँ होने लगी। अजयसिंह जी भी अब युद्ध की तैयारियों में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करने थे। वे अहिंसा एवं असहयोग पर बार-बार जोर देने की रट लगाते थे पर उन की क्षीण ध्वनि हथियारों की भीषण खनखनाहट में लुप्त हो जाती थी। पर्वत की विस्तृत गृह मेखला में हथियारों की ध्वनि हर घड़ी आती रहती थी। अनगसिंह उन्मत्त गज-सा घर-घर युद्ध का निनाद करता रहता था। खून की होली खेलने में उम युद्ध विपासु पुरुष को एक विचित्र उत्तेजना और आनन्द की उपलब्धि होती थी। उसने उन विपाक्त तीरों की अनवरत सर्जना करनी प्रारम्भ कर दी जो शत्रु के तन को स्पर्श करते ही उसे परलोक का यात्री बना देंगे। वह खूँखार भेड़िया

बना यत्र-तत्र सबत्र घूमा करता था। वीरो को उत्साह प्रदान करता था। उन्हें लम्बे-लम्बे भाषण और उपदेश दिया करना था कि जो राजपूत युद्ध से जी चुगता है, वह नरक का भागी होता है। वह कभी पाप से मुक्त नहीं होता।

वह ओजस्वी वाणी में कहता, “का-पुरुष को परम प्रतापी पुरुष बना सकने का मेरा आत्मविश्वास नहीं टूटा है राणा जी।” इन दया के पात्रों में हिंसा की उस दुर्निवार आग को जन्म दूँगा जो करुणा की हल्की रेखाओं से भी इन्हें वंचित रखने लगेगी। राजपूतों के आस-पास मैंने चारणों का जाल फैला दिया है। ये चारण निरन्तर इन्हे युद्ध के लिए उकसा रहे हैं। उनकी वाणी सुनकर का-पुरुषों में क्या, मुर्दों में भी जान आ जाती है। मैंने सुना है, वे कहते हैं— ओ बप्पा रावल के वंशजों! ओ उज्जवल कीर्तियों के स्तम्भों! तुम्हारे राज्य में एक निरकुश आततायी मुक्त क्रीड़ा विहार कर रहा है। तुम्हारी पावन शीतल धारा में एक यवन-चाकर निद्वन्द्व तर्पणी विहार कर रहा है। तुम्हारे पवतीय प्रदेश की उमादित समीरण में एक रिपु यहाँ की नारियों के कोमल शरीरों पर मुक्त लास्यों में प्रमत्त हो गया है, ऐसे समय में ओ सत्य वशियों, तुम हाथ पर हाथ धरे क्यों बैठे हो! तुम्हारी उपत्यकाओं में महाअनर्थ हो रहा है। इसलिए वीर पुत्रों जागो, महाकाल को जगाओ ताकि शत्रु तुम्हारी जननी को स्वतन्त्र कर दे।

“राणा जी हमारा तीर निशान पर है। मुझे विश्वास है, समरागण में युद्ध के लिए उन्मत्त वीर शत्रु पर दूटेंगे तो विजय निश्चय ही हमारी होगी।”

अन्त में वह रात्रि भी आई जिसकी समाप्ति पर युद्ध घोष किया जाएगा। हम्मीर अपने वक्ष में गभीर मुद्रा बनाए शय्या पर बैठा था। समीप उसका प्राण जगमगा रहा था। उसकी शय्या की मयूर पीठिका पर लचने मयूर का चित्र एक स्थिर निष्ठ उल्लाम की भंगिमा में था। हम्मीर ने उन निप्राण मयूर पर बोधनता से हाथ फेरा। स्तब्ध वाता-



वरण मे शून्य प्रदेश की साँय-साँय स्पष्ट सुनाई पड रही थी । वह साँय साँय को दत्तचित होकर सुनने लगा । उसे लगा कि यह वन-प्रातर की साँय-साँय कह रही है कि प्रत्यूष के प्रथम पहर मे तूर्यनाद होगा और महामरण की छाया मे, प्रलय के आघातो में, पवन की चीत्कारों मे यह वीरो का दल जो आज सुख की निद्रा मे निमग्न है, जो आज वीर क्षत्राणियो की गोद मे प्यार, ममता, वात्सल्य लिए पडा है, झूमता हुआ दीखेगा । और धरित्री का आँचल रक्त से भीग जाएगा ।

वह उद्वेग मे भर उठा ।

तभी एक परिचारिका ने आकर निवेदन किया, “अनग आया है ?”

“इस बेला ?”

“हाँ ।”

“भीतर आने दो ।”

अनग अपनी एक भुजा का दूसरी भुजा से सरल स्पर्श करता हुआ झम्मीर के कक्ष मे आया । प्रणाम करके बोला, “वीरो को निद्रा नहीं आ रही है । राणा जी, वे युद्ध के लिए उन्मत हो गए हैं ।”

“यह शुभ है अनगसिंह ।”

“शत्रु का कलेजा उनकी हुँकारो से थर्रा जाएगा ।”

“अनगसिंह, किसी भी तरह चित्तौड को प्राप्त करो ।”

अपनी मूँड़ो पर ताव देता हुआ अनगसिंह बोला, “चित्तौड अवश्य जीत लिया जाएगा ।”

सूर्य के साथ तूर्यनाद मुनाई पडा ।

प्रलयकरी राजपूतो का दल चित्तौड की ओर चल पडा । उन की

दामिनी सी प्रत्यक्षाओं पर विनाश के तीर चढ़ने को ललक उठे। युद्ध-शालाएँ आज शस्त्रों से खाली हो गई थी। शौर्य, वीर्य और तेजस्वी व्यक्तित्व के सम्राट हम्मीर अश्व पर आसूढ़ होकर मेना के प्रमुख रूपमें आगे-आगे बढ़ रहे थे। अप्रकट आक्रमण को प्रकट होते देर नहीं लगी। राजा मालदेव मुमलमानी मेना को लेकर पवनवेग में आगे बढ़ा। तब घूल बादलों से अनन आकाश बँपला हो गया।

मालदेव के शास्त्रागारों की गिलाएँ शस्त्रों को धार देने के लिए खोल दी गई। मालदेव असह्य मेना लेकर मैदान में आ उठा।

घोर युद्ध आरम्भ हो गया।

शस्त्रों के टकराने से चिनगारिया निकलती थी। योद्धाओं के टकराने में प्रतीत होता था कि धरती पर भूकम्प आ गया है।

भीषण युद्ध हुआ।

परिणाम भी आशा के विपरीत निकला। हम्मीर को भीषण पराजय मिली। ऐसी पराजय कि हम्मीर का हृदय टुक-टुक हो गया। अपने सान्निध्य के अनुल पराक्रम के पश्चात् ऐसी पराजय? हम्मीर चिन्ता, उद्वेग और भय से विचलित हो गया। अनर्गमिह को कोई दुःख-सताप नहीं था। वह भी घूम-घूम कर कह रहा था 'जय-पराजय भाग्य की बात है। इससे माहस और बँय को नहीं त्यागना चाहिए। आह' जब मैंने एक शत्रु को अपनी बगल में दबाकर मारा तो उसका मिर ही फट गया। ठाकुर सा 'एकानिगद्वर की मोगन्य जाता ह, एक चौहान को पाव स रौद डाला था।'

अजयमिह ने अनर्गमिह को मुनाकर कहा, जिस वीर को हिंसा भरी अमानवीय बातों में आनन्द आता है, वह वीर बीड़े ही दिनों में गैतान हो जाता है। उसमें देवता के स्थान पर दैत्य का वास हो जाता है।"

अनग ने इस उपदेश में तनिक भी रुचि नहीं दिखाई। वह उसी स्वर में बोला "प्राणों के खन की धारा में रमते हुए वनप्राने में मेरे मावन

मे पड़ती हुई वर्षा की बूंदों की स्मृति दिलाते हैं।”

अजयसिंह भी व्यथित हो उठे। कड़क कर बोले, ‘तुम मनुष्यता से पृथक होते जा रहे हो। अनग । अधिक क्रूरता और दयाहीनता अत्यन्त कठोर परिणाम का आधार बनाती है।”

अनग अपने विचारों पर दृढ़ था, पर हम्मीर की मन स्थिति विचित्र हो गई। उसके जीवन में उत्साह की जगह निरुत्साह छा गया। मालदेव विजयी होकर हम्मीर का चैन तक लूटने लगा। अब उसने हम्मीर के सरदारों एवं सामन्तों को कष्ट देना प्रारम्भ कर दिया। जहाँ-जहाँ हम्मीर जाता था, राजा मालदेव उसका पीछा करता था और उसके मगठन पर आघात पहुँचाता था, उसके प्रत्येक कार्यक्रम को वह निष्फल बनाने का प्रयास करता था। इससे हम्मीर का मन उचट गया और उसे अपना भविष्य घोर तिमिर के अक में खोया सा प्रतीत हुआ।

एक दिन अचानक उसने निर्णय किया कि वह मेवाड़ की भूमि को ही छोड़ देगा।

रात्रि की वेला थी।

चाचा अजयसिंह भी बैठे-बैठे गीता का पठन-पाठन कर रहे थे।

हम्मीर को अपने सम्मुख उन्मत्त खड़ा देखकर पूछा, “क्या वान है वेटा?”

“काका, मैं मेवाड़ को कुछ दिन के लिए छोड़ना चाहता हूँ।”

“क्यों?” चाचा की आँखों में प्रश्न नाच उठा।

“मुझे लगता है कि अभी मेरा यहाँ ठहरना उचित नहीं है। मैं एक वार गुप्त रूप से द्वारकापुरी की ओर जाना चाहता हूँ।”

“मैं नहीं चाहता। कोई वीर शत्रुओं के आघातों के घबरा कर अपनी मातृभूमि का परित्याग कर दे, इसे मैं उचित नहीं मानता। यह बहुत बड़ी दुर्बलता है।”

‘किन्तु मेरा मन इन सभी वस्तुओं से नितान्त पलायन करना चाहता है। मैं प्रत्याक्रमण के लिए सजग होकर सोच भी नहीं सकता।”

“आखिर क्यों ?” उन्होंने इन शब्दों पर जोर दिया ।

“क्योंकि मेरी शक्ति का पतन हो चुका है । इस पराजय के पश्चात् हम किसी भी तरह विरोध के उपयुक्त नहीं रहे ।”

“यह तुम किस आधार पर कह सकते हो ?” चाचा के विशाल नेत्रों में इस बार तनिक उत्तेजना उभर आई ।

“आपका यही है कि हम पराजय में हमारे बड़े बड़े कई सामन्त मारे गए हैं और हमारी आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं है ।”

चाचा उठ गये हुए । हमीर के समीप आकर उन्होंने अपने दोनों हाथ उसके कंधे पर रख दिए । तत्पश्चात् वे स्नेहसिक्त स्वर में बोले, “तुम्हें इतना निराश नहीं होना चाहिए । आशाहीन प्राणी कर्म-क्षेत्र में नितान्त असफल मिथ होता है । तुम्हारे सामन्त-सरदारों के पास अभी भी अतुल कचन पड़ा है । वे अपने राणा के सम्मान के लिए अपनी स्त्रियों के गहन तक वचने को तैयार हैं ।”

हमीर ने कोई उत्तर नहीं दिया । वह वहाँ से हटकर अपने निजी वक्ष में आ गया । एकान्त में उसके विचार-सागर में घोर उद्वलन चल रहा था - यह उद्वलन केवल पलायन के इद-गिद घूम रहा था ।

प्रस्थानशित उसके विचारों ने दृढ़ता धारण की और उसने चुपचाप मरा आर अपने अन्य मायियों के साथ चित्तौड़ से प्रस्थान कर दिया ।

वह बाड़ी दर गया ही नहीं था कि पीछे से अनर्गमिह आ पहुँचा । वह आकर बोला, “राणाजी, आप गीदड़ों की तरह समर-क्षेत्र छोड़कर भाग रहे हैं क्या पता कब आप पर विपत्ति आ जाए और आप के मान पर नार्द कलक लग जाए, इसलिए मैं भी आपके साथ चलाकर आपकी रक्षा करूँगा क्योंकि मुझ मन्चार्द के साथ युद्ध करने में ही आनन्द आता है ।”

हम्मीर के अप्रत्याशित गमन पर चाचा चिन्तित हो उठे, पराजय के पश्चात मालदेव के रणवाद्यो का घोष निरन्तर उपत्यकाओं में चाचा को चुनौती दे रहा था। शखनाद व तूर्यनाद स्वप्न में चाचा के अग्र-प्रत्यग में प्रकम्पन भर देते थे। उर-उदधि की एक-एक लहर कह उठती थी पराजय, पराजय, पराजय। आवेश और आवेग में उनकी मुट्ठियाँ खँध जाती थी। वे त्वरापूर्वक अपने कक्ष में टहलने लगते थे।

शक्ति के अभाव में चाचा शांति के तरीके अपनाने के आदी थे। वे युद्ध के प्रयोजन, परिणाम और परिणामोत्तर स्थिति का भलीभाँति विश्लेषण कर सग्राम भूमि में पाँव रखते थे। हम्मीर द्वारा किए गए असफल आक्रमण से वे विचलित हो गए। व्यर्थ का रक्तपात, हिंसा और हानि। अनर्गसिंह की युद्ध करने की अहर्निश प्रवृत्ति। यह सब क्या है? यह मनुष्य के पतन की आधार शिलाएँ हैं।

चाचा चाह कर भी इन सभी बातों को विस्मृत नहीं कर सकते थे। कभी-कभी वे हम्मीर के प्रति भी रुष्ट हो जाते थे। वह अप्रत्याशित क्यों चला गया? इस प्रकार घबरा कर मैदान छोड़ने का तात्पर्य यही हो सकता है कि उसमें चित्तौड़ को संभालने की क्षमता नहीं है।

दोपहर का समय था। नीलाम्बर में भास्कर भगवान अपने सम्पूर्ण पौरुष के साथ दीप्त हो रहे थे। दूर शैल-शिखरों एवं उपप्यका में गहरा सन्नाटा छाया हुआ था। उस सन्नाटे को विदीर्ण करता हुआ एक भील यात्री का स्वर गूँज रहा था—

डालने तरुवारे  
पीली ने परवाते\*

ढाल और तलवार । चाचा के कण-कुहरो में इतना ही शब्द पड़ा । वे उद्भ्रान्त से शून्य की ओर हाथ पसार कर तीव्र स्वर में बोले, 'युद्ध । युद्ध ॥ युद्ध ॥' मेवाड का हर वेटा ढाल-तलवार की बात करता है, विरोध, प्रतिरोध और सघर्ष की बात करता है । किन्तु उस युद्ध से लाभ ही क्या, जो मनुष्य को ऐसी भयंकर पराजय दे जाए जिसका परिणाम जीवित मृत्यु-मण्डल हो ।'

उद्वेग में चाचा का हाथ अपने उन्नत कक्ष पर चला गया । वे आवेश में बड़बड़ाए, ऐसी पराजय आत्म नाश और जगत नाश दोनों का कारण बढती है । पर मैं ऐसा कदापि नहीं होने दूंगा ।

प्रतिहारी को पुकारने पर उसने कक्ष में प्रवेश किया ।

प्रणाम के साथ वह चाचा के हुक्म की प्रतीक्षा करने लगा ।

चाचा बोले, 'पवनसी को बुलाओ ।'

चाचा के आमन्त्रण पर उमन त्वरा के साथ कक्ष में प्रवेश किया । पाद-स्पर्श के पश्चात् नत-मस्तक होकर खड़ा हो गया ।

"पवनसी मैं तुम्हें बहुत बड़ी जिम्मेदारी सौंपना चाहता हूँ । मेवाड की महिमा और प्रताप उसकी मिट्टी में नहीं है, वह है हमारे बाजुओं में । किन्तु भाग्य चक्र निमग्न होकर हमारा विरोध-प्रतिरोध कर रहा है । प्रकृति की प्रत्यक्ष चितवन हमारे साथ मनमाना खिलवाड़ खेल रही है । तब हमें अभीम प्रिय और विवेक में कार्य करना है । हमें ऐसा सघर्ष करना है, जिसके गौरव की सौरभ निम्नमाहित प्राणों में उत्साह का सागर लहरावे, जो अचर शत्रु-दुष्ट की नीचे हिला दे ।"

पवनसी मान स्थिर खड़ा था । उसने तनिक भी समर्थन नहीं किया ।

'तुम चुप क्यों हो ?'

'बाबा सा, बात यह है कि मैं केवल आपकी आज्ञा का पालन कर सकता हूँ । आप आज्ञा दीनिये में मानदेव का मिर काट कर ला सकता हूँ । अपनी कुटुम्ब में मैं कुछ भी राय देने की तैयार नहीं हूँ । वरन्, आप आज्ञा दीनिये ।

पवनसी महाबलिष्ठ योद्धा था। उसका हृदय विशाल और निर्भीक था। उसके सम्मुख अच्छे-अच्छे योद्धा हार खा जाते थे। उसकी आखों में ज्वलन्त शौर्य चिनगारियों की तरह चमकता रहता था। वह अजेय और अपराजित योद्धा केवल वचनों का अनुसरण करना जानता था, केवल आज्ञा का पालन करना ही अपना धर्म समझता था।

चाचा एक बार अपने आसन से उठे और बैठे तब बोले, “नैन्य-शक्ति के अभाव में हमें ऐसे तरीके अपनाने चाहिए जो अधिक से अधिक रक्तपात और हिंसा से दूर हो। हमें अहिंसा का युद्ध लड़ना चाहिए।”

पवनसी के तेजस्वी मुख पर आश्चर्य नाच उठा। अन्तर के विस्मय को अनावरण करता हुआ वह बोला, “अहिंसा का युद्ध ? काका सा ! युद्ध और वह भी रक्तहीन युद्ध !”

“हां पवनसी, हमें रक्तहीन युद्ध लड़ना है। अल्पकाल के लिए इन आयुधशालाओं एवं शस्त्रागारों के द्वार बन्द करने हैं। व्यर्थ ही स्वजनो और परिजनो का नाश कराना अधर्म और अनीति का कृत्य है।”

“तनिक स्पष्ट कीजिए।” उसने सहजता से कहा।

चाचा ने एक दीर्घ-निश्वास लिया, “यह बात तुम सबकी कल्पनाओं से परे है। तुम लोगो के मन में अहिंसा के मग्नम की बात स्पष्ट नहीं है। तुम लोगो ने कभी भी थोड़ा भी परिवर्तन बिना रक्त बहाए नहीं किया। चाहे तुम समथ हो अथवा असमर्थ, पर तुम समर भूमिमें अवश्य खड़े हो जाते हो और युद्ध का घोष कर देते हो। फिर अपार क्षति पाकर सदा-सदा के लिए अपने भाग्य को परतन्त्रता के बन्धनों में बाँध लेते हो। पर मैं ऐसी परिस्थिति में नए ढंग से विचारना चाहता हूँ। वह नया विचार है—रक्तहीन क्रांति। अहिंसा का युद्ध। शत्रुओं से घोर असहयोग।”

पवनसी की आकृति एक निरीह शिशु-सी हो गई। उस पर अज्ञान का भोलापन हिलोर ले उठा। उसकी युगल नीली गहरी आखों में आत्सुक्य के भाव कम्पित छाया की तरह आने-जाने लगे। उसने अत्यन्त

विनम्रता से कहा, “सचमुच हमे रक्तहीन क्रांति और हिमाहीन युद्ध की कल्पना ही नहीं थी।”

“फिर सुनो—सुदूर प्राची क्षितिज पर सूर्य के दशन-काल के आगमन पर समस्त सरदारों एवं सामन्तों में तुम यह घोषणा कर दो कि राणा जी जब तक तीस यात्रा करके न लौट आए तब तक हम अहिंसा का युद्ध लड़ेंगे।”

तुम हमारे पुराने और विश्वासी सखा हो। राणा के पलायन का रहस्य गुप्त ही रहे।”

पवनसी ने कहा, “आप विश्वास रखें, पर इस आन्दोलन की रूपरेखा क्या होगी?”

“उसकी रूप रेखा यही है कि चौहान मालदेव के साथ हम किसी भी तरह का सहयोग नहीं करेंगे। हमारे वीर आज से किसी प्रकार की हिंसा किए बिना गुप्तरूप से इसी उद्देश्य का प्रचार-प्रसार करेंगे—

वे मेवान्वासियों को कहेंगे—जितना सम्भव हो, वे शैल मालाओं के ही घरों में ग़बर बस जाएँ।

वे अपना व्यापार बन्द कर दें।

वे दूकान नहीं खोलें।

वे मालदेव के आतंक को सहकर भी उसकी मदद न करें।

उन्हें चाहिए कि मालदेव की यात्रा की अवज्ञा करें, उन्हें शांति से न बैठने दें तथा उन्हें कोई भी काय मुचाए रूप से न करने दें।

मेवाड-वासियों में इस मन्त्र का अविनश्वर प्रचार हो कि वे अपने व्यापार व्यवसायों को बन्द करके वन की वृक्षों में जाकर उमसे शांति का सन्तान लिया जाय। उन्हें बली ही नहीं, केवल प्रत्यक्ष वृक्ष ही है और उसमें पुनः चित्तवृत्ति की सन्तान्यता प्राप्त करनी है। क्योंकि उद्वेग ने पागल बना दिया है।

विमानों का सागरान किया जाय कि वे मालदेव को लगान न दें और वे उन व्यक्तियों को महागण हम्मीर की सेवा में रखें। अन्न का हिस्सा वे



मालदेव को न देकर हमें दें ।

इन सभी बातों में इस बात का ध्यान विशेष रूप में रखा जाए कि मालदेव के सैनिकों से लड़ाई न हो, क्योंकि आततायी मालदेव किसी भी समय साधारण रथ से भीषण खून की होली खेल सकता है । अतः मालदेव हमारे व्यक्तियों पर यदि अत्याचार भी करे तो मेवाड़वासियों को उसे सहर्ष सहन कर लेना चाहिए और विरोध अत्यन्त निपुणता से करना चाहिए ।”

पवनसी ने अनुरोध सा किया, “ये सिद्धान्त सभी सामन्तों एवं मरदारों को अत्यन्त विचित्र लगेंगे । मेरा ऐसा विचार है कि कुछेक इस अभिनव-अभिमत से सहमत भी न होंगे ।”

“ऐसा सम्भव है किन्तु जो चित्तौड़ की जय यात्रा के सम्पूर्ण रूप से समर्थक हैं, उन्हें राणा जी की आज्ञा का पालन करना ही होगा । तुम्हें महाराणा हम्मीर की ओर से इस बात का प्रचार-प्रसार करना है तथा जो विरोध करे, उन्हें उत्साह और विज्वाय के साथ इसके महत्व को समझाना है ।”

पवनसी प्रणाम करके चला गया ।

कक्ष में धीरे निस्तब्धता छा गई ।

६

पार्वत्य प्रदेश के सीमान्त के अतलात से तिमिर का आविर्भाव होने लग गया था । उत्तुंग शृंग श्रेणियाँ धीरे-धीरे तमसा में आवृत होती हुए नीले आकाश का अन्तिम आलिंगन करती हुई दीख पड़ रही थी । मानों थोड़ी देर में इनका यह मिलन ससृति के लोल लोचनों से टुपने के लिए समावृत हो जायगा ।

पवनसी के गृह में दीपक जल चुका था। वह दीपक के प्रकाश में बैठा हुआ चाचा के हिमाहीन युद्ध व रक्तहीन क्रांति के बारे में सोच रहा था कि वह इस बात का प्रचार करे या न करे ?”

क्षितिज-आकाश का पारस्परिक आलिंगन तमसा में आवृत हो गया। तार उज्ज्वल नीलमणियों में दीप्त हो गए। मुद्गर पवन-श्रेणियों के पीछे चमकते हुए तारे पृथक आनन्द की सजना कर रहे थे।

पवनसी प्रकृति के इन अनुपम दृश्यों को निरन्तर देखकर विचार रहा था। उसके विचार केवल ‘कर या न कर’ की परिधि का उत्लघन न कर पाए। जैसा कि वह अधिक विचार नहीं सकता था, अतः उसने यही निश्चय किया कि वह चाचा के नवीन ढंग के युद्ध का ही श्रीगणेश करेगा। वह चिन्नीड का स्वामीभक्त सेवक है। उसका काम स्वामी का हुक्म मानना है।

तत्काल उसने सामन्तो सरदारों एवं चारणा को निमन्त्रण भेजा। उनमें प्रार्थना की कि एक विशेष बात के लिए आप सब से सन्ध्या करनी है, पश्चात् होने के साथ ही हमारी उठान प्रारम्भ होगी।

सबरा होत ही पवनसी के घर पर सामन्त सरदार और चारण एकत्रित हो गए। पवनसी ने सारी बात समझाकर अन्त में मिह की भाँति गज कर कहा, हम राणाजी की आज्ञा का पालन करना ही है।”

कुछक सरदार उस बात से व्यग्र प्रतीत हुए, हालांकि उन्होंने अपने का मयन रखते हुए अपनी वाणी में किंचित भी उपमा नहीं आने दी। फिर भी उस नवीन समाम के लिए लोगो में जिज्ञासा और उत्सुकता बाना थी।

सरदार भूषावह ने व्यर्गमिश्रित मुस्मान कहा, यह रक्तहीन नाति और हिमाहीन युद्ध पागलो का अनाप ही हो सकता है।’

सामन्त पद्ममिह ने पितृविवानर हँसकर कहा, “राणा जी ने हमें अवश्य निश्चय समझा होगा, तभी हम ऐसा नपुंसकत्वमय कार्य करने को कहा है।

एक अन्य योद्धा ने गज कर कहा, “राणा जी यह विचार हमारी प्रतिष्ठा के सर्वथा प्रतिकूल है। खून के बिना युद्ध हो कैसे सकता है?”

चारण अमरदान नितान्त शांत था। राणा जी के राज्य का यह चारण अत्यन्त स्वामीभक्त एव ओजस्वी वाणी का मन्त्राट था। राणा जी की यश और कीर्ति को देश-देशान्तर फैलाने में चारण अमरदान का बहुत हाथ था। वह पवनसी के हिंसा-हीन युद्ध की बात गम्भीरता से सुनता रहा और मुनकर उस पर चिन्तन-मनन करता रहा। उसे यह ढग तनिक उचित लग रहा था। उसने उठ कर विनम्र शब्दों में कहा, “हमें अमहयोग आन्दोलनों को व्यर्थ नहीं समझना चाहिए, शत्रुओं के संग्राम में विपक्षी को अधिक शक्तिवान समझने पर हमें तरीके अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुए हैं।

कुछ सामन्त अट्टहास कर उठे। उनके अट्टहास ने चारण के रोम-रोम में क्रोध भर दिया। वह उन्हें फटकारना हुआ बोला, “आप हँसते हैं, आप मेरा उपहास करते हैं किन्तु मैं इस कथन में उस सत्य के दर्शन कर रहा हूँ जिसके पीछे चिन्ता की विजय छिपी है। राणा जी अभी तीर्थ-यात्रा पर गए हुए हैं उनकी अनुपस्थिति में अमहयोग आन्दोलन और अल्प वक्त ही श्रेयस्कर सिद्ध हो सकते हैं। कल मैं आदरणीय श्रीमन्त अजयसिंह से भी मिला था। उन्होंने भी मुझे कहा—हम्मीर की अनुपस्थिति में हमें अधिक से अधिक धन-संग्रह एव मालदेव को निर्बल करना चाहिए। \* इधर हम मालदेव को धन नहीं देंगे, उधर दिल्लीपति तुगलक बादशाह उन्हें सहायता देना वन्द कर देगा। तब वह विवश होकर यहाँ से अपनी सेना हटा लेगा। और आप सब गम्भीरता में विचारे बिना ही किसी नए विचार का उपहास करते हैं?” राणा जी की आज्ञा का अपमान करते हैं।” चारण क्षण भर के लिए शांत रहा फिर स्वर में ओज भर कर बोला, “आप मेवाड की विजय-श्री के उज्ज्वल स्तम्भ हैं, उसकी मान-मर्यादा के रक्षक हो, ध्यान रहे, आपका प्रत्येक कदम, प्रत्येक शब्द और आपकी प्रत्येक आज्ञा मेवाड के मार्तण्ड की

विधायिका है।”

सभा में गहरा सन्नाटा छा गया।

उपस्थिति के अन्तर प्रदेशों में परिवर्तन के ऋभा उठे। कुछेक की मौहें भी बक्र हुई और चित्रवने की तनी। तभी पवन-सी ने सबको अनुरोध किया, “चारण जी ठीक फरमा रहे हैं। फिर हमें एक स्वामी-नक्त सरदार की भाँति अपने पूज्य प्रात स्मरणीय राणा जी की आज्ञा का ही पालन करना चाहिए।”

सभी सरदारों ने इस बात को स्वीकार कर लिया। केवल भूपसिंह अन्त तक इस नीति का विरोध करता रहा।

अमरदान चाचा के पास गया और उन्हें शास्त्रासन दिया कि आपकी इस नीति से चित्तौड़ का अत्यन्त उपकार होगा।

चाचा खिड़की की राह अपनी दृष्टि गिरी-शृंगों पर जमाते हुए भावाभिभूत से बोले, ‘मैं सोचता हूँ कि क्या एक युग ऐसा भी आया जब उस धरती पर अहिंसा का संग्राम लड़ा जा सके। चारण जी जोहर की ज्वाला में जलती उन कामल और पल सी निर्दोष सुकुमार बालाओं की कल्पना मात्र में मरा मन मत्ताप से चीत्कार कर उठता है। अपने अतस में जीवित शाशाओं और अभिलाषाओं के लिए वे वीराग-नाएँ हसती हसती आग की भीषण लपटों में अवसायिनी हुई थी, तब मेरा मन अप्रत्याशित बह उठता है उन में वे स्त्रियाँ भी होंगी जो उस दारुण दुख का नितान्त विवशता में बहने लग रही थी। उस मम तो, ये युद्धोत्पन्न मानव नहीं ममम बनने। शरा की मृदु और मेर सगे भाइयों का वनिदान दण्डितान के निग गात्र की वस्तु हो जाती है परन्तु तभी किसी ने केवल मनुष्य हाकर सचा ही यह महान जीवन का अन्त्य आयाओं अन्तहीन प्रतीति पत्रितिया का यह हृदय जय निश्चित मृत्यु का आनिगत करगा तब यह नितना प्रचल हाहाकार करगा? उमात्त में आन के पचात प्राणी भय, प्रीति, नान गित पत्र तमस्त परिणामा का

प्राप्त कर लेता है । किन्तु साधारण स्थिति में वह विनाश के लिए कटिबद्ध नहीं हो सकता । और विनाश भी कैसा, जिसका परिणाम केवल स्वजनो की आहुति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हो सकता ।

चारण के मन में शका जागी । तनिक आतुर स्वर में वह बोला, “हिंसाहीन सन्नाम का यह आन्दोलन मेवाडियों की आत्मा में निबलता को तो नहीं जन्म देगा ? उनके पौरुष के लिए घातक तो सिद्ध नहीं होगा ?”

‘नहीं । मेरा यह आन्दोलन स्थिति विशेष के कारण चलेगा । अभी वह समय नहीं आया है कि हम सक्ता अहिंसा का युद्ध लड़ें । अभी इस भूमि में तलवार का ही बोलवाला है । हमें, विशेषतः मुझे इस आन्दोलन की प्रतिक्रिया को देखना है । हम्मीर निराश होकर चला गया है । हमारा सगठन खण्डित हो चुका है । भालदेव चित्तौड़ पर अत्याचार करके आतंक फैला रहा है । प्रजा अस्त एव परेशान है । ऐसी विषम स्थिति में विरोध का सहज साधन एक ही है कि जो सत्ता है, उससे असहयोग करो । जब आपको अपनी शक्ति पर विश्वास हो जाय और शत्रु की स्थिति खोखली लगे तब आपको अपनी भूमि के लिए उत्पन्न हो ही जाना चाहिए ।”

“मैं प्रत्येक वीर को निश्चय देखना चाहता हूँ । मैं चाहता हूँ कि हम अपनी जन्मभूमि को पुनः प्राप्त करें । किसी भी सबल को यह अधिकार नहीं है कि वह निर्वल के घर पर अधिकार प्राप्त करले । अपने अधिकार के लिए परिस्थिति विशेष पर शोणित भी बहाया जा सकता है ।”

चारण ने चरण-स्पर्श करके विश्वास दिलाया, “मैं आपकी नीति का दीप घर-घर जला दूँगा । वच्चे-वच्चे में इस बात का प्रचार-प्रसार करूँगा—अहिंसा परमो धर्म ।

हम्मीर निरुद्देश्य यात्री की भाँति चलता रहा । चलता-चलता वह गुजरात के 'खोड' गाँव में पहुँचा ।

सारे दिवस के श्रात हम्मीर, मेरा और अनगसिंह जब अश्वों से उतरे तब उन्हें प्रतीत हुआ कि उनका अग-प्रत्यग टूट-सा रहा है । निरन्तर यात्रा के कारण उनके मन तक अब विश्राम करना चाह रहे थे । एक ग्रामीण कृषक के यहाँ उन्होंने डेरा डाला । अभ्यागतों के आगमन पर उस किसान को अतीव आनंद हो रहा था । उसका सारा परिवार अतिथियों के स्वागत-हेतु तत्पर दीख रहा था ।

पवन वामती मरमराहट लिए था । थोड़ी देर पहले दृष्टि धुँड थी अतः दृष्टि पर अतार्किक आनंद का संचार हो गया था । मिट्टी में साधी-सौधी मृगध उठ रही थी । वर्षा के आगमन पर कृषकों में जो एक उत्साह दीखता है, वह सबकी दृष्टि में लक्षित हो रहा था ।

हम्मीर के मुख पर असाधारण तेज देखकर कृषक परिवार का स्वामी अपनी जिज्ञासा को नहीं रोक सका । हम्मीर का कर-प्रक्षालन कराने समय उसने पूछ ही लिया, 'अतिथिवर, आप कौन हो ?'

हम्मीर ने प्रश्न भरी दृष्टि में परिवार के स्वामी को देखा और अत्यन्त सहज भाव से उत्तर दिया, "अतिथि ।"

मेरा मननत्र है—वश परिचय से ।"

'सिमादिया राजपूत है ।"

“द्वारकाधीश के दर्शन करने ।”

“उस समय ।”

“क्यों, क्या कोई विशेष बात है ?”

‘हमारे गाँव के भी जागीरदार कह रहे थे कि चित्तौड़ की दशा अच्छी नहीं है । उसका मुक्ति-मार्ग बन्द-सा हो रहा है ।’

हम्मीर का चेहरा उदास हो गया । अपनी दृष्टि को बहती जल धारा पर केन्द्रित करके कहा, “ममय का चक्र बड़ा ही विचित्र होता है । भैया, ममय की कोप-दृष्टि अमोघ शस्त्र में भी क्रूर और दयाहीन होती है ।

“लेकिन आप जैसे बलिष्ठ व्यक्तियों को ऐसे मर्यादा काल में चित्तौड़ छोड़ते हुए देखकर आश्चर्य होता है ।”

हम्मीर ने मौन धारण कर लिया । उमने इतना ही कहा, ‘मैंने आपसे निवेदन किया न, समय बड़ा बलवान होता है ।’

परिवार का स्वामी कुछ नहीं बोला । उमने अपनी उत्सुकता को अत्यन्त चातुर्य के साथ अपनी मुस्कान में छुपा लिया ।

भोजन से निवृत्त होते ही परिवार के स्वामी ने आकर हम्मीर से अनुरोध किया, “हम आपको एक देवी का दर्शन कराना चाहते हैं । यदि आपको कोई कठिनाई न हो तो उनकी हवेली में चलिए ।

हम्मीर ने अनर्गसिंह की ओर देखा ।

अनर्गसिंह ने अपने मुख पर हाथ फेर कर कहा, “मैं नहीं चलूँगा । क्यों भैया, आप यहाँ पर मुझमें कोई द्वन्द्व युद्ध करने वाला ला सकते हैं ?”

“नहीं ।”

“फिर आप राणा जी . ।”

“अनर्गसिंह ।” हम्मीर ने अनर्गसिंह को सावधान किया पर जो नीर तरकग ने निकल चुका था, वह भीतर नहीं गया ।

परिवार के स्वामी ने अत्यन्त सम्मान से प्रणाम करके कहा, “मैं पहले ही समझ गया था कि आप किसी श्रेष्ठ-कुल से सम्बन्धित हैं । मेरे मन में एक उत्कठा थी कि मैं आपका वास्तविक वंश परिचय पाऊँ पर

हम्मीर निरुद्देश्य यात्री की भाँति चलता रहा। चलता-चलता वह गुजरात के 'खोड' गाँव में पहुँचा।

सारे दिवस के थान हम्मीर, मेरा और अनर्गसह जब अश्वों से उतरे तब उन्हें प्रतीत हुआ कि उनका अग-प्रत्यग दूट-सा रहा है। निरन्तर यात्रा के कारण उनके मन तक अब विश्राम करना चाह रहे थे। एक ग्रामीण कृषक के यहाँ उन्होंने डेरा डाला। अभ्यागतों के आगमन पर उस किसान को अतीव आनंद हो रहा था। उसका सारा परिवार अनियोजित के स्वागत-हेतु तत्पर दीख रहा था।

पवन रामती मरमराहट लिए था। थोड़ी देर पहले वृष्टि हुई थी, अतः मृष्टि पर अर्गात्मिक आनंद का संचार हो गया था। मिट्टी में साँधी-साँधी सुगंध उठ रही थी। वर्षा के आगमन पर कृषकों में जो एक उत्साह दीखता है, वह सबकी दृष्टि में लक्षित हो रहा था।

हम्मीर के मुख पर असाधारण तेज देखकर कृषक परिवार का स्वामी अपनी जिज्ञासा को नहीं रोक सका। हम्मीर का कर-प्रक्षालन कराने समय उसने पूछ ही लिया, 'अतिथिवर, आप कौन हो ?'

हम्मीर ने प्रश्न भरी दृष्टि से परिवार के स्वामी को देखा और अत्यन्त सहज भाव से उत्तर दिया, "अतिथि।"

मेरा मनलग्न है—वश परिचय से।"

'सिमादिया रात्रिपूत है।"

'मवाट क'।

"हा।"

"वहाँ जा रहें श्रीमान्।"

'द्वारकापुरी।'



“द्वारकाधीश के दर्शन करने ।”

“इस समय ।”

“क्यों, क्या कोई विशेष बात है ?”

“हमारे गाँव के भी जागीरदार कह रहे थे कि चित्तौड़ की दशा अच्छी नहीं है । उसका मुक्ति-मार्ग वन्द-सा हो रहा है ।”

हम्मीर का चेहरा उदास हो गया । अपनी दृष्टि को वहनी जल धारा पर केन्द्रित करके कहा, “समय का चक्र बड़ा ही विचित्र होता है । भैया, समय की कोप-दृष्टि अमोघ शस्त्र में भी क्रूर और दयाहीन होती है ।

“लेकिन आप जैसे वलिष्ठ व्यक्तियों को ऐसे मक्राति काल में चित्तौ छोटते हुए देखकर आश्चर्य होता है ।”

हम्मीर ने मौन धारण कर लिया । उसने इतना ही कहा, “मैंने आपसे निवेदन किया न, समय बड़ा बलवान होता है ।”

परिवार का स्वामी कुछ नहीं बोला । उसने अपनी उत्सुकता को अत्यन्त चातुर्य के साथ अपनी मुस्कान में छुपा लिया ।

भोजन से निवृत्त होते ही परिवार के स्वामी ने आकर हम्मीर से अनुरोध किया, “हम आपको एक देवी का दर्शन कराना चाहते हैं । यदि आपको कोई कठिनाई न हो तो उनकी हवेली में चलिए ।

हम्मीर ने अनगमिह की ओर देखा ।

अनगमिह ने अपने मुख पर हाथ फेर कर कहा, “मैं नहीं चलूंगा । क्यों भैया, आप यहाँ पर मुझसे कोई द्वन्द्व युद्ध करने वाला ला सकते हैं ?”

“नहीं ।”

“फिर आप राणा जी ।”

“अनगमिह ।” हम्मीर ने अनगमिह को मावधान किया पर जो तीनों तरफ से निकल चुका था, वह भीतर नहीं गया ।

परिवार के स्वामी ने अत्यन्त सम्मान से प्रणाम करके कहा, “पहले ही समझ गया था कि आप किसी श्रेष्ठ-कुल से सम्बन्धित हैं । मेरे मन में एक उत्कण्ठा थी कि मैं आपका वास्तविक वंश परिचय पाऊँ प

मैं स्पष्ट रूप से ये सब पूछने का दुस्साहम नहीं कर सका। अब यह भेद जान कर मुझे प्रसन्नता ही नहीं, गौरव का अनुभव हो रहा है। राणा जी, मैं आपका क्विबत भी अहित नहीं करूँगा। देवी सप्तश चारण जी की बेटो बरबडी सचमुच करुणामयी है। उसकी बाणी में मरस्वती का वास है। वह विगत, आगत और अनागत सबसे परिचित है। वह हिता, ईर्ष्या और अभिमान से सबथा मुक्त है। इस भू-लोक में जहाँ पाप के विशाल स्तूप खड़े हैं, वहाँ बरबडी ईश्वरत्व की महान आत्मा के लिए हमारी आत्मा की सच्ची पथ-निर्देशिका है। आप चलिए, उनके बाणी के अवगमन-मात्र से आपको शांति मिलेगी।”

हम्मीर अल्पकाल के लिए विचारों के बशीभूत हो गया। उसकी पुतलियों की स्थिरता तथा आगिक जड़ता उसके अन्तराल की बेचैनी की प्रतीक थी। वह परिवार के स्वामी के हाथों को पकड़कर विनीत स्वर में बोला, “श्रीमन्, एक प्रार्थना है यह रहस्य तुम्हारे और देवी के अतिरिक्त कोई भी जानने न पाए।”

“मैं वचन देता हूँ।”

“मैं आपका हृदय से आभार मानूँगा।”

तत्पश्चात् हम्मीर व परिवार का स्वामी बरबडी के गृह की ओर गए। बरबडी विपुल वैभव की स्वामिनी प्रतीत हुई। उसके पास सुन्दर हवेली और कई दास दामिया थी। मुख-श्री पर प्रभावशाली ज्योति थी। और विशाल शोभा या गहरे मागर सा गाभीय।

हम्मीर ने उसके वैभव का अवलोकन करके तुरन्त ही मन ही मन कहा, यह देवी कैसे हो सकती है? यह तो कोई सुख की उपभोगिता ही हो सकती है। इस विपुल वैभव में स्वामि-प्रश्रयान केन जाने प्राणी उतन दयामय कैसे हो सकते हैं? देवता मह्य नोत्प्रेयता कसे प्राप्त कर सकते हैं? वैभव और देवत्व! दोनों विपरीत प्रतिक्रियाएँ।

उसने बरबडी को अडापूर्वक प्रणाम किया।

बरबडी अपने बैठकस्थान में मखमली तले पर आसीन थी। उसने मख

पर ज्ञान की गभीरता स्पष्ट लक्षित हो रही थी। नेत्रों में सागर सी गहराई और नीलापन था। मुख चौड़ा और ललाट पर गहरी तीन रेखाएँ। कहीं-कहीं श्वेत प्रभाव दिखलाते हुए कुन्तल। श्वेत वस्त्र और प्रखर प्रकाश। एक अद्भुत वातावरण।

किसान परिवार के स्वामी ने चरण-स्पर्श करके वरवडी से निवेदन किया "माता-श्री, आप चित्तौड़ के राणा हम्मीर हैं। द्वारकाधीश के दर्शन करने जा रहे हैं।"

ज्योतिष शास्त्र की प्रकाश मनीषी एवं शास्त्रज्ञाता वरवडी ने एक बार तीखी दृष्टि से हम्मीर के आनन को देखा, फिर उसे बैठने का संकेत किया। हम्मीर बैठ गए। उसने अपने कमरबन्द को कुछ ढीला किया। बैठकखाने की दीवारों की ओर दृष्टिपात करके जब उसने पुनः वरवडी पर दृष्टि डाली, तब भी वरवडी हम्मीर को उसी पैनी दृष्टि से देख रही थी।

वरवडी ने पल भर नेत्र मूँद कर कहा, "आपकी आँखों में उन भावों के दर्शन नहीं हो रहे हैं जो एक भक्त में पाए जाते हैं। आपको देखकर मुझे लगा कि वहाँ की अव्यवस्था से आकुल होकर आप जन्मभूमि से भाग आए हैं। क्षत्रिय-धर्म की अवज्ञा आप जैसे पराक्रमी पुरुषों द्वारा नहीं होनी चाहिए।"

हम्मीर की दृष्टि सकोच के मारे झुक गई। उसके हृदय में ग्लानि का झुझा उठा। उसके चेहरे पर श्वेदकण उभर आए।

वरवडी ने गहरा मौन धारण कर लिया। हम्मीर ने एक बार कुछ कहना चाहा पर वह नहीं बोल सका। शब्द कण्ठ में ही लटक गए।

फिर भी हम्मीर ने साहस करके कहा, "आपको आति "

वीच में ही वरवडी ने टोका, "मुझे आति नहीं हो सकती। मनुष्य की आकृति से उससे अन्तः के भावों को समझने में मैं मिथ्यहस्त हूँ। मुझे कोई भी धोखा नहीं दे सकता।"

हम्मीर नितान्त जड़ हो गया।

वरवडी बोली, "आपके आत्मलोक में जो अवशता और अवसाद है

उसे मैं अपने दिव्य-चक्षुओं से स्पष्ट देख रही हूँ। मैं यह भी कह सकती हूँ कि सम्राट वनन की महान् लालसा लिए आप जब शत्रु से शत्रुन्त प्रताडित हो गए तब आप में ऐसा पलायन जागा।”

“हा माता श्री ! मैं भनीभाँति अब मोच-विचार भी नहीं सकता हूँ। कभी कभी ऐसी दृष्टि होती है कि अब सब छोड़ दो।”

“उससे क्या होगा ?”

हम्मीर आवेग में लाल हो उठा। वह बरबरी को क्या उत्तर दे। स्यनशीय वृष्पारावन या वंशज मेराट को अमहाय अवस्था में इस तरह त्याग कर आना, हेय कृत्य था ? वह उस विद्रुपी नारी को यही उत्तर दे, “तब रार ही मिट जाएगी। स्वप्न ही समाप्त हो जाएगा। लिप्ता का ही अंत हो जाएगा ?” लेकिन वह चुप रहा—एकदम।

बरबरी ने तनिक स्तान-मुख में किन्तु प्रखर स्वर में कहा, ‘बोलिए न उसमें क्या होगा ? पूवजा के प्रयोजन और आयोजनों की समाप्ति हो जाएगी। मेराट के बलिदानों पर कालिख पुत जाएगा।’

हम्मीर के मुख पर आस चमक उठा। वह वेदना में मर्माहत होकर बोला, ‘पर मैं असफल हो गया। शत्रु की अद्भुत शक्ति के समक्ष मेरा हठ-जनित शीघ्र सन्न्यास हुआ हो गया।’

“रागाती, आप निराश हो उठे हैं। युग-युग से जय-पराजय के खेल इस आंगन में होत आए हैं। कभी कोई और कभी कोई वीरत्व के दम में विजयानन्द हाँ भूमा है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मनुष्य ‘नाश’ के परिणाम में परिचित हाता कम का टाट दो। समर्पण प्राणी का जीवन अग्रहीत जाना है। आदेश गौर व्यवहार का है। आदेश उन प्राणियों के लिए आति उगयुक्त जाना है जो जीवन में निरान्त टनाश हो जाते हैं और व्यवहार हमारा परम उत्तम है। हम उतम व्यक्ति होकर स्वयं के प्रति श्रेष्ठ ही नहीं, आमवचना भी रखेंगे। अब आप स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए अपनी बमर का रस जाना चाहेंगे।

दीर्घ क्षण के पश्चात् हम्मीर का तनिक हाँस हुआ। वह आप

हृदय की वास्तविकता को प्रकट करने लगा। बोला, “मेरे हठ ने व्यर्थ ही सग्राम करके अपने सरदारों एवं सामंतों के प्राण गँवाए हैं।”

“वलिदान व्यर्थ नहीं जाता। आपका हठ ठहराए।” कहकर वरवडी ने हम्मीर का हाथ अपने हाथ में लिया। हस्तरक्षाओं का अल्प-काल गभीर अध्ययन करके उसने कहा, “हठ की मात्रा आवश्यकता से अधिक है। कभी कभी विवेक का भी उल्लंघन कर देती है। यह उचित ही। फिर भी मूर्ख अत्यन्त तेजस्वी है। भाग्य-रेखा ओह! आप निश्चित सफल होंगे।”

हम्मीर अपने नेत्रों की पुतलियों को घुमाकर अद्धापूर्वक वरवडी की ओर देखकर मयुरतम शब्दों में बोला, “मैं अन्तरतम से आपकी कला में विश्वास रखता हूँ। कर्म विधान समझिए कि मेरा समस्त जीवन नाना विघटनों एवं आघातों में ही व्यतीत हुआ। अंशु मे लेकर यौवन तक जीवन विभिन्न मार्गों का दर्शन ने मुझे ज्ञान-ज्योति एवं कार्य-निपुणता ही विधान की पर इतना होते हुए भी आप में अपनी एक शका का समाधान चाहता हूँ, वह यह है कि क्या मैं चित्तौड़ का पुनर्निर्माण करने में सफल हो पाऊँगा? मैं अपने पूर्वजों की प्रतिष्ठा को पुनः प्रतिष्ठापित कर पाऊँगा?”

“इसका उत्तर मैं आपको कल दूँगी।”

×

×

~

हम्मीर नियत समय वरवडी के घर पहुँच गया। उत्तर मुनने के वं उसका मन आकुल व्याकुल हो रहा था।

वरवडी तत्काल कुश के आसन पर बैठी थी। प्रभु की अर्चना-वन्दना तन्मय थी। लघु मन्दिर में धूप की सौरभ फैल कर हवा को सुगन्धित रही थी। हम्मीर ने उसके आराध्य ‘देवी’ को साष्टांग प्रणाम किया और शीत चित्त होकर बैठ गया।

वरवडी अर्चना-वन्दना से निवृत्त होकर बोली “राणा जी, आप मेवाड़ का उद्धार अवश्य करेंगे ही। आप मेवाड़ के उन राणाओं में होंगे जिन कीर्ति-ध्वज युगान्तो तक मानव-मानस-पटलो पर लहराएँगे। आपको

नुरन्त मेवाड प्रस्थान कर देना चाहिए ।”

“लेकिन ऐसी स्थिति में आकर पुन जाना ।”

“लज्जा आती है ?”

“स्वाभाविक है, मात श्री ।”

“राजनीति में मनुष्य को अपने मन को एक अन्य माँच में ढालना होता है । वह माँचा साधारण प्राणियों से पृथक् होता है । तभी वह मान-अपमान, मच-भूठ, उत्थान-पतन, प्रेम और द्वेष सभी पर भिन्न प्रकार से मोचना है । एक मेनानी का देश से भागकर आना और पुन चले जाना साधारण बात है । राणाजी, आपकी प्रत्येक गतिविधि एक रहस्य की ओत-सी प्रतीत होनी चाहिए और आपका कथन एक रहस्य का अभेद आवतन ताकि लोग यही समझे, आप जो कर रहे हैं, अपने चित्तों के लिए अपनी जन्मभूमि के लिए ।”

हम्मीर ने देखा — बरखड़ी के मुख पर नारी की समस्त महानताओं का आलोक दशा हो रहा है । यह नारी वस्तुतः एक अप्रतिम और विगत, आगत और अनागत को जानने वाली अलौकिक सजना है ।

हम्मीर ने कहा, “मा ! कुछ और पथ निर्देश करो ।”

बरखड़ी ने एक बार मंदिर से बाहर निकल कर ज्वलन्त आकाश की ओर देखा । उसके चहर पर महत्व की अपूर्व आभा दीप्त हो उठी । नारी का सम्पूर्ण उत्सव सबदना और तब उसकी चिटि में तैर आया । वह हम्मीर के सन्नित्त आँखों में भरकर भरकर मेवाड में बारी, ‘पटा ! पथ निर्देश की क्षमता मुझ में नहीं है । मैं अपरिमित अनुराग के साथ आशीर्वाद दे सकती हूँ । नारी का लोक समस्त में पर भूय के प्रभाव है । उस समस्त में भीषण पावन ताक में एक ही प्रेम है, वह है कल्याण एक ही प्रेम है वह प्रेम है सत्प्रभाव, दुःखहर्ता । तुम का लोक में अशिष्टताओं का आशीर्वाद दो, ब्रता और मुक्ति का प्राप्त करो ।

बनिक राज के लिए महाराज मनाया जा गया ।

बरखड़ी ने चतुर्मुखी पथ निर्देश अप्रतिम रूप में ही ही आरंभ हम्मीर ने

छोटा बालक ।

भावावेश से जब वे दोनों वस्तुजगत में आए तो वरवडी तनिक सावधान होकर बोली, “राणाजी, इतना निवेदन भर है कि आप चित्तीड लौट जाइए । मेरी विद्या कहती है कि वहाँ की स्थिति आपको अपने प्रतिकूल देखती हुई भी परिणाम ‘अनुकूल’ ही देगी । आपको विवाह का निमन्त्रण आएगा । आप उसे सहर्ष स्वीकार कर लें । विरोध-प्रतिरोध की चिंता किए बिना ही आप उम लडकी को घर लाएँ, उसका आगमन आपकी विजय का आधार होगा ।”

“लेकिन ऐसी स्थिति में मेरे पास कुछ तो शक्ति होनी ही चाहिए । उसके बिना मेरा लौटना मुझे अत्यन्त पीडाजनक लगेगा ।”

वरवडी उत्साह भरे स्वर में बोली, “समय आने पर मुझे सूचना देना मैं तुम्हें पाँच सौ घोड़ों की सहायता दूंगी और साथ ही मेरा वीर गायक पुत्र ‘वारू’ भी तुम्हारे देश आएगा ।”

हम्मीर ने वरवडी के न चाहते हुए भी चरण-स्पर्श कर लिए । उसका अन्तरतम अपनी समस्त श्रद्धा और स्नेह उस साहसी एवं धैर्य-शील नारी के आँचल में भर देना चाहता था ।

वरवडी विलगित नेत्रों के साथ कहा, “चिरायु हो ।”

११

अजयसिंह का असहयोग शान्दोलन सफल रहा ।

अरावली के दुर्गम श्रेणियों के मध्य रहकर उन्होंने जो नूतन मधर्ष का श्रीगणेश किया था, वह अत्यन्त सफलता की ओर अग्रसर हो रहा था । आततायी मालदेव यवनो की परमभक्ति करके भी उनमें सहायता प्राप्त नहीं कर सका । महमूद तुगलक दूरदर्शी होकर भी अपनी वाचाल एवं अस्थिर प्रकृति के कारण अच्छा शासक नहीं बन पाया । निदान

उमने मालदेव को ही यवन सेनाधिकारियो एव फौज का खर्चा चलाने का आदेश दे दिया। उधर मेवाडियो द्वारा अहिंसा का मश्राम जारी था। मन्त्रय मालदेव उममे चिन्तित हो उठा।

वह प्रायः अपने पुत्र जेमा (जयमिह) से वचन होकर कहा करता था, “मरी समझ मे नही आता कि मुझे क्या करना चाहिए। मेवाडियो की उस नीति के समझ मैं कमहीन हो गया हूँ। जिसे देखो केवल मरने को तैयार है। हाट ढग मे नही खुन्ती। बिमान लगान नही देते। जो प्रदेश गानी होना है उसका उपयोगी सामान ये लोग नष्ट-भ्रष्ट कर देते हैं। कहते हैं, हम अहिंसा का युद्ध कर रहे हैं। अहिंसा परमो धर्म। यह सच क्या है।”

जना पिता की उद्धमनता और विवाद को समझ गया। रजत निमल आसन की पीठिया का सम्बन्ध लेकर वह बोला, “ये हमे दुबल और परगान कर रहे हैं महाराज। चित्तोड प्राय गानी हो गया है। अब आप मना का हृस्म दीजिये कि वह इनका गाजर-मूला की तरह काट कर फेंक दे।”

मालदेव हठवन्त कर बाना नही नही। मैं नृशम अकथ्य हूँ पर ऐसा प्रारम्भ नही कर सकता। मैं हिन्दू हूँ और एक हिन्दू न निर्दोष प्रजा पर अन्न नही उठाया। हमारे सैनिक उन्हें मतात हूँ और वे प्रतिश्राव किण्डिना हमारे अन्याचार नहत हूँ। हमारे प्रमुख प्रहार पर कहते हैं—एक गार मारा। हमारे सैनिक पृथ्वी हूँ—तुम नचोगे नही, वे चले हूँ नही। हमारे आत्मी कहते हैं—कामगरी काम करा, वे हित हूँ नही। मैं समझता हूँ कि इस नीति का विराय नीति नही जाना चाहिए। विद्रोह का अवनष्ट्य न निहित किण्डिना मन्त्री निमनात हूँ। मालदेव का दास्य कर जाना पुनः स्मरण है। एक बार मैं मन्त्रय के मन्त्रय हूँ। पर मैं स्वामी का पश्य जाता। गृह-स्वामी का मन समझी दी कि यदि वह मन एक मो गान के मित्र नही दगा



। मैं उसे जान से मार दूंगा। उसने प्रार्थना भरे स्वर में कहा, "आप लवान हैं, जो आप करना चाहेंगे, कर लीजिये पर मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं बहुत दरिद्र हूँ। किसी भी तरह अपनी प्रतिष्ठा को नाए हुए हूँ।" - मुझे विश्वास नहीं हुआ। मैंने उसे भाँति-भाँति से आणाए दी। पहले-पहले वह करुणा स्वर में चीखता-चिल्लाता रहा, मुझसे दया की भीख मागता रहा। जब वह मेरे अत्याचार से थक गया तब उसने दया की भीख नहीं मागी। वह अत्यन्त धैर्यशील और अगाध भाँति धारण करके बैठ गया और मेरे अत्याचार सहता रहा।

उमकी गतिविधि में बहुत से परिवर्तन आ गए।

मेरे साथी व मैं स्वयं जब-जब उसे यातना देते थे तब तब वह पागलों की भाँति चीख कर कहता था कि मुझे धीर मारो? वह अपनी साधारण स्थिति को खो बैठा था और यह सब लोग इसी स्थिति को मानकर चलते हैं। तब मैंने घर के स्वामी को दूसरी नीति से पराजित किया। उससे मित्रता गाँठी। अपना कहा और एक दिन उसके हृदय का सब कुछ जान लिया कि उमकी सम्पत्ति कहाँ पड़ी है। अब मुझे नई नीति का ही सहारा लेना होगा। अत्याचार सहने को जो कटिबद्ध हो जाए, उसे हम कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकते। उमका हम कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।

जैसा ने नया प्रश्न किया "फिर?"

"मेवाढवासी चित्तीड के उद्धार के लिए घोर असहयोग कर रहे हैं और यह भी सत्य है कि असहयोग के कारण हमारी सत्ता के पाँव भी हिल उठे हैं।"

"तब?"

■ "तब मैंने इसके लिए नई युक्ति सोची है।"

"वह क्या?"

"म पुन अपनी जन्मभूमि जालोर को सँभालूंगा और तुम चित्तीड के गढ़ को सँभालना। मेरा यहाँ सम्पूर्णरूप से रहना जालोर के लिए

भी अच्छा नहीं है। बिना घरवालों के घरों में चूहे भी शासन जमा लेते हैं। अन्न जालोर की व्यवस्था के लिए मुझे वहाँ चले जाना चाहिए तथा वहाँ से मैं कामदार मौजीरामजी के साथ हर माह रुपया भेजता रहूँगा। और शीघ्र ही एक ऐसी कूटनीतिज्ञ चाल खेलूँगा जिसमें चित्तौड़ का भाग्य विधाता का मिर धरती को चूमता नज़र आएगा।”

जैसा शात गम्भीर था। कुछ क्षण मौन रहकर वह बोला, “वह चाल क्या होगी ?”

“यह मैं फिर बताऊँगा।”

तत्पश्चात् मालदेव अपने बड़े पुत्र जसा को चित्तौड़ का शासन भार सौंप कर जालोर चला गया। जैसा मालदेव का विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न पुत्र और योद्धा भी था।

मालदेव की यह दूरदर्शिता लाभप्रद और हानिप्रद दोनों रही। मालदेव जालोर पहुँचकर अपने किसानों से वसूली करने लगा और कुछ ही दिनों में उसने अपनी स्थिति मुँह बना ली।

१२

प्रतिहारों ने गाँव निरन्तर लिया, ‘महाराज की जय, मरदार पवन-सी आपके दरबार में हाज़िर होना चाहते हैं।’

— हाज़िर किया जाय।”

मुख्य निनिज ही मृदुल वाता ३ मुक्त हाकर गगन-ग्राह्य की ओर गतिमान हो रहा था। पवन-रस पर आम्बट हाकर एक मेघ खंड न विघटित होने की भाँति मुख के पर्भाप आया और लगभग एक बर नाना

उनके युगल नेत्रों में तीव्र जिज्ञासा और उत्कठा थी ।

पवनसी ने प्रणाम करके निवेदन किया, “सुना है, आपकी तवियत ठीक नहीं है । कैसा प्रतीत होता है ?”

“कुछ-कुछ हृदय में घुटन-सी रहती है । पर वेटा इसकी चिंता को छोड़ो ।” चाचा की आँखों में स्नेह स्निग्ध और तरल वात्मन्य की दीप्ति दीप्त हो उठी । स्वर में करुणा का सम्पूर्ण प्रभाव था, ‘अपनी जन्मभूमि का क्या हाल चाल है । मेरा सग्राम, मेरी नीति कुछ सफल हुई । मैं सदा यह सुनने के लिए व्याकुल रहता हूँ कि कोई यह कहे कि चित्तौड़ हमारे अधिकार में आ गया ।”

“आपका स्वप्न पूर्ण होगा । आपकी नीति सफल सिद्ध हो रही है ।” पवनसी ने उन्हें आश्वासन दिया ।

“मुझे विश्वास था कि एक दिन यह अहिमा का युद्ध अवश्य सफल होगा । और जब कभी मानव जाति ने हिमा का प्रतिकार अहिंसा से किया, उस दिन हिंसक दानवों का उन्माद पगु हो जाएगा । विना विरोध के सघर्ष जोर नहीं पकड़ सकता ।”

“आप ठीक कह रहे हैं ।” राजा मालदेव को जालोर गए एक माह हो रहा है । उसके अपने गुप्त सिपाही घुड़सवारों, वनजारे एवं व्यापारी राणा जी को ढूँढ़ रहे हैं, पर राणा जी म. जता में नहीं मिल सकते ।”

“उसे अब आ जाना चाहिए । पवनसी कभी-कभी मुझे लगता है कि मैं अब हम्मीर का मुँह नहीं देख सकूँगा ।”

“ऐसा अशुभ मत बोलिए ।”

“शुभ-अशुभ का प्रश्न नहीं । यह अन्तर्गत् की वारंशी है । हृदय वार-वार कहता है कि वस अब अपनी यह महायाना समाप्त कर दे ।”

तभी उसके गुप्त घुड़सवार ने आकर सूचना दी कि राणा हम्मीर पधार रहे हैं ।

चाचा के अग्र-प्रत्यग में उल्लास की उमिरियाँ नृत्य कर उठीं । युगल नेत्र प्रसन्नता के मारे नीर से भर आए । प्रसन्नता की अतिरेक में वे बोले,

“वेटा हम्मीर वेटा, देखो, देखो मेरा अहिंसा का युद्ध सफल हो रहा है राजा माल व हमारे सहयोग में धरती पर भाग गया है। तुम हिंसा का परित्याग कर नीति का युद्ध लड़ो। तुम्हें क्या पता—इस निर्दयी युद्ध की प्यास इतनी भयंकर होगी कि वह मुहागिन का मुहाग, बच्चों का भाग्य और माताओं के वट पीन करेगी है। वह आदमी ने आदमी का प्राण और नारी से नारी की ममता छीन ली है। यश । कहकर चाचा अचानक हा गए। यदि पवनसी तन्नाल उन्हें नहीं समझता तो उनका फिर पत्थर की प्राचीर में टकरा कर टूट जाता। पवनसी ने मेवरा तो पुरारा। उन्होंने तुरन्त चाचा का गला पर बिठाया। एक वयस ता मुताबिक के लिए दाग।

तभी हम्मीर ने जमीन में लीर भुजाए चाचा के कक्ष में प्रवेश किया। उसकी आँखें भाँसों में प्रतीत होती थीं कि वह जमीन में पड़ा-पड़ा हो रहा है।

उसने भराव स्वर में कहा—काता मा।

चाचा ने अचानक पर हमला की पुकार पर पवित्र मुस्मान दाग गए। वह स्वर धन-धानी का, वेटा! तुम मुझे इस युद्ध में बहादुर कर चले गए थे। दागो हमारा यश और द हृदय नितोड तुम्हारे प्रियता में अनर्हीन व्यथा में पाठित होकर टाहाकार कर रहा है। उसने अन्त में ली एक पर खान प्रत्याग मूर्ति का उद्घाटन कर रही है। यह अथ तुम्हें अतिरिक्त नहीं आस किंवदन्ती की आवश्यकता है। यह अन्त कहा है?

म प्रत्य - सासा ता

पैटो मा पास।

वाच में हा हम्मीर ने अचानक उत्पन्न किया, वयसों ने कहा—यार, तुम जरा जल्दी न जाया न?”

चाचा ने अपने हाथ में एक राखत हाथ रखा—नहीं अब सोचिए

नहीं। महायात्रा के अन्ततः पथ पर चलने वाले यात्री के लिए अब उसकी अन्तिम लालसा की पूर्ति का आश्वासन चाहिए। हम्मीर। चित्तौड़ की मुक्ति का स्वप्न लिए आज मैं जा रहा हूँ।”

हम्मीर ने तुरन्त कहा, “जब तक चित्तौड़ को मुक्त नहीं करूँगा तब तक इस खडग को म्यान में नहीं डालूँगा।”

चाचा के मुख पर ओज के साथ करुणा के भाव भी आए।

“मैं तुम लोगों को उपदेश देना नहीं चाहता। धर्म के पण्डित की भाँति धार्मिक शब्दावली में मैं बोल कर व्यर्थ ही आपके समय की हत्या नहीं करना चाहता। फिर भी एक प्रार्थना है, बहुत छोटी विनती कि हिंसा-हीन युद्ध भी तनिक सफलता की सिद्धि दे सकता है। मैं तुम्हें सघर्ष और विग्रह से मुक्त मोड़ने के लिए नहीं कहता, क्योंकि शत्रु अहिंसा के मर्म को किंचित भी नहीं समझते, अतः मैं तुम लोगों को इसके लिए वचन-बद्ध नहीं करना चाहता।”

हम्मीर मृत्यु शय्या पर लेटे अश्रुप्लावित चाचा के चेहरे को देखकर अधीर हो उठा। चाचा का कथन उसके लिए उपयोगी हो या अनुपयोगी पर उसे सम्पूर्ण रूप से उसका पालन करना चाहिए। सिसौदिया वंश का लाडला अपने हितैषी के लिए बड़े से बड़ा त्याग करता आया है।

उसने चाचा के चरणों पर अपनी दृष्टि टिका कर कहा, “यदि आप चाहे तो मैं हिंसा को त्याग कर सदा के लिए अहिंसक हो जाऊँ।”

“नहीं, ऐसा मैं नहीं चाहता। मेरे हृदय की सच्ची वाणी से भी एक सत्य और बड़ा है—वह है स्वतंत्रता। अहिंसा मेरे अन्तः का सबसे बड़ा धर्म और कर्म हो सकता है पर तुम लोगों का सबसे महत्वपूर्ण धर्म है—स्वतंत्रता। चित्तौड़ का पुनर्द्वार।”

पवनसी ने बीच में ही कहा, “राणा जी, काका सा के अमहयोग आन्दोलन ने मालदेव को चित्तौड़ छोड़ने के लिए विवश कर दिया।”

“अच्छा।” हम्मीर ने आश्चर्य से कहा।

“और उसका युवराज जयसिंह (जैसा) भी परेशान हो चुका है।”

“तब हम इस आन्दोलन को और बढ़ावा देना चाहिए ।”

अनगसिंह वीच में ही बोल पड़ा, “मेरा ऐसा विचार है कि आप अब सभी वीरों को चूड़ियाँ पहना कर ही दम लेंगे ।”

हम्मीर ने अनगसिंह को डाँट दिया ।

चाचा को जोर की खाँसी आई । ऐसी भयानक खाँसी कि उनका कलेजा मुँह को आने लगे । नेत्र पानी से भर आए और श्वास उखड़ने लगी ।

बैद्य जी आ गए थे । उन्होंने एक घासा (मिश्रण) दिया । चाचा के नेत्रों में थोड़ी ही देर में सात्वना की भलक दीखी । हम्मीर का मुख उदास हो गया था । बैद्य जी ने औषधि को प्रभावहीन देखकर उन्हें ‘अम्बर’ की एक मात्रा दी । चाचा में शक्ति का संचार हुआ ।

चाचा ने स्नेह से हम्मीर के सिर पर हाथ फेरा । उसने कुन्तियों में अपनी अंगुलियाँ उलझा कर वे एक-एक शब्द पर जोर देकर कहने लग, “युद्ध पिपासुओं का सत्य ही हिंसा है । कर्म ही हिंसा करना है । तात्पय हीन युद्ध का विनाश करके किसी की शांति और सुख में बाधा पहुँचाना मानव-जम के विरुद्ध है । मैं व्यर्थ ही हिंसा के विरुद्ध हूँ । मैं अर्थों के अविकारों पर कुटारघात करने वालों को हिंसक मानता हूँ । मैं बाप का दण्ड बट को दना न्यायोचित नहीं मानता । बेटा ! प्रार्थना है कि तुम व्यर्थ की हिंसा नहीं करोगे ।”

हम्मीर ने आश्वासन दिया, वह ऐसा नहीं करेगा ।

अनगसिंह की भूचुड़ियाँ तन गईं । उसने मन ही मन नाचा कि यदि राणा जी ने सन्ध में यह वचन दिया है तो मैं कह सकता हूँ कि उनकी मति मारी गई है । हिंसा के बिना कभी कोई अविकार नहीं मिलता । रोम में मक्ति और भीख से राज्य मिला करते हैं क्या ? छि छि ।

चाचा का घबराहट न बागी देर के लिए उनकी आँखा पर पड़ा डाल दिया । हम्मीर ने बरख जी को एक बार और औषधि दाना कहा ।

बैद्य जी ने निराशा से कहा, “नाडी । दान-पुण्य कराइए ।”

पर्वतमालाओं के पीछे से गभीर मृत्यु-भीत सहस्रों की आर्तनाद सा ध्वनित प्रतिध्वनित हो उठा ।

हम्मीर अपने चाचा के चरण-स्पर्श करके रो उठा ।

१३

चाचा की मृत्यु के पश्चात् हम्मीर बरबडी की भविष्यवाणी के सत्य होने की प्रतीक्षा करने लगा । मेवाड में अशांति का साम्राज्य छाया हुआ था और भी परिस्थिति उसके अनुकूल ही हुई । राजा मालदेव का प्रस्थान और मुहम्मद तुगलक की अव्यवस्था ने हम्मीर को मगठित होने का स्वर्ण अवसर दे दिया ।

इसी बीच एक नवीन घटना हुई ।

राजा मालदेव ने अपने विश्वामी पात्र मेहता जूहण और पुरोहित जयमाल के साथ अपनी पुत्री के विवाह का नारियल हम्मीर को भेजा ।

दरबार लगा था । मन्त्रिगण व मामन्त सरदार सभी उपस्थित थे ।

दोनों व्यक्तियों ने जैसे ही इसकी घोषणा की वैसे ही सारा दरबार सन्नाटे में आ गया । सब एक दूसरे को चकित-विस्मित होकर देखने लगे ।

हम्मीर ने निश्चय होकर कहा, “पुरोहित जी, जननी-जन्मभूमि पर अधिकार करने वाले शत्रु की ओर से यह प्रस्ताव पाकर हमें मशय और भय दोनों हो रहे हैं ? इस पर तुम्हें विश्वास करने की वनता ही नहीं ।”

पुरोहित जी ने कहा, “ब्राह्मण अपने राजा की आज्ञा का पालन करता जानता है । इस पर विशेष रूप से आपको मेहता जूहण जी ही बता सकते हैं ।”

जूहण ने प्रणाम करके अपनी तलवार म्यान से निकाली । बड़ी श्रद्धा के साथ उसने तलवार को मस्तक के लगाई और राणा जी के चरणों में

उसे रखकर कहा, “युवा बेटी रावण के घर में भी नहीं रह सकी फिर राजा मालदेव की क्या विसात है ?”

“लेकिन ?”

“वीर पुरुष सदा वीरों से ही हाथ मिलना चाहते हैं। यह गठबन्धन भविष्य के मधुर सवधों का प्रतीक है। हमारे महाराज का कहना है कि नारियल आपको स्वीकार करना ही है। कुछ भी हो राणा जी, राजपूत वीर ने कभी किसी लड़की का नारियल नहीं लौटाया है।”

“राजपूत किसी लड़की का नारियल नहीं लौटाएगा।” हम्मीर ने उसकी बात की पुष्टि की।

कुछ सरदार एक साथ कह उठे, “यह क्या ?”

हम्मीर ने हाथ के मकेत में सज्जो शात किया। उसे बरखड़ी की भविष्यवाणी स्मरण हो आई। वह विश्वास से भर उठा। उसने कहा, हमारा शत्रु ‘राजा मालदेव है’ पर एक पटी का ‘पिता मालदेव’ नहीं। अतः मेहता जी हम नारियल स्वीकार करते हैं, किंतु हमारी भी एक शत है कि हम वहां अधिक दिन नहीं ठहरेंगे।”

“महाराणा की जय। पुरोहित न कहा।

अनर्गमह जोर में चिल्लाया ‘राणा जी ने नितांत उचित कदम उठाया है।’

पवनमी ने पुनार कर कहा, यह पड्यन है। धानक पड्यन।”

मरा ने पवनमी के पवन का समर्थन किया, ‘राणा जी, उस नारियल को स्वीकार करना गवनी कर रहे हैं। हमारी सैन्य शक्ति अभी नहीं के बराबर है। लगी दगा म...।’

हम्मीर ने राणा-मुहता में लगी प्रसंगी के शब्द गज उठ, विराट् पतिराज की चिन्ता निद्रा निद्रा ही आप-म जाती ता पर नाग, उसका प्रसंगत आपसी शिष्ट का आशय थागा। वह आपने निद्रा लगी गुभ रागी।’

मरा। हम्मीर मुद्र के निद्र नहीं, शिवात के निद्र ता रहा है। मुभ



सेना और शक्ति की आवश्यकता नहीं। मुझे यह विवाह करना है। जो सदेह था, उसको मेहता जी की बात ने निर्मूल कर दिया कि यह सवध भविष्य के मधुर सम्बन्धों का प्रतीक होगा।”

हम्मीर के प्रखर मुख को देखकर सभी मौन हो गए। उसके ओजस्वी और प्रभावशाली व्यक्तित्व के समक्ष किसी ने अधिक विरोध नहीं किया।

पुरोहित और मेहता के लौट जाने पर हम्मीर ने अपने विश्वस्त आदमियों को समझाया, “मैं यह भली भाँति समझता हूँ कि यह एक पड-यत्र है। राजा मालदेव की बेटी का नारियल स्वीकार करने का तात्पर्य स्पष्ट है कि हम अपने आपको एक भीषण सकट में डाल रहे हैं। वह पड-यत्र महाभारत के चक्रव्यूह के पडयत्र से कम नहीं होगा। अभिमन्यु की भाँति हम पर आक्रमण हो सकते हैं। किंतु हम इतने अवोध और नादान नहीं हैं जितना अभिमन्यु था। वह चक्रव्यूह की प्रवेश कला का ज्ञाता था, उसको चक्रव्यूह भेदन करना नहीं आता था। हम मालदेव की प्रत्येक चाल को विफल कर देंगे। हमारा हर कदम उसकी विफलता का घोंप करेगा।”

“पर अभी .।” मेरा ने कुछ कहना चाहा।

हम्मीर उसके अधूरे वाक्य का मर्म जान गया। मेरा के चेहरे पर अपनी दृष्टि गाड़कर वह बोला, “अभी हमारे पास युद्ध सामग्री का अभाव है। मैं भी इसे स्वीकार करता हूँ। लेकिन केवल जन-शक्ति ही युद्ध का विजित शस्त्र नहीं है। उसके लिए विवेक भी चाहिए। कूटनीति भी चाहिये। इसके लिए मैं आपसे निवेदन करना चाहूँगा कि खोड गाँव की देवी माँ वरवडी का बेटा बारू शीघ्र ही पाँच सौ घोड़े लेकर हमारे पाम आ रहा है। छोटी सी लड़ाई लड़ने के लिए हमारे पास हथियार भी पर्याप्त है। फिर नीति ? काका सा के अन्तिम वाक्य को मैं कभी नहीं भूल सकता। व्यर्थ की हिंसा से मैं उनकी आत्मा को दुख नहीं पहुँचा सकता। नीति का विरोध नीति से ही होना चाहिए।”

अनगसिंह ने विनीत होकर कहा, “यह युद्ध से घबराते हैं। यह

चाहते हैं कि जीवन सुख और मतोप से व्यतीत हो जाए, चाहे परतन्त्रता भले ही हो। इस धरती का प्रतापी व वीर शिरोमणि का बेटा अब का-पुरुष हो रहा है। युद्ध विमुख हो रहा है। परतन्त्रता में आनन्द और मृत्यु में मतोप के दर्शन कर रहा है।”

अनर्गमिह की उत्तेजनामयी भत्सना में मेरा और पवनसी तीं जुड़ाए फड़क उठी। पवनसी अनर्गमिह के समीप आकर बोला, “ठाकुर! निष्प्रयोजन ही किसी के पंरूप को ललकारने की चेष्टा अपराध है। किसी का वीरत्व इन शब्दों को सुनने का आदी नहीं होता है। अधिक इच्छा हो तो दो-दो हाथ कर सकते हो।”

हम्मीर ने कहा, “तुम भी आपस में मघप करने की इच्छा रखत हो, आप लोगो का खून उबल रहा है तब यही श्रेष्ठ रहेगा कि शत्रु में एक युद्ध लड़ लिया जाय किन्तु काका मा की नीति में।”

पवनसी ने अधिकारपूर्ण शब्दों में कहा, मैं अधिक सोचता विचारता नहीं हूँ। केवल राणा जी की आज्ञा चाहता हूँ। आपकी आज्ञा में सर्वोपरि मैं किसी को नहीं मानता। किन्तु अनर्गमिह को आप यह दीजिये कि वह वीरो के पंरूप को तल्लारे नहीं अन्यथा आपकी खा खराबी से अहित के अनिश्चित कुट्ट नहीं होगा।”

हम्मीर ने पवनसी का ठण्डा किया और अनर्गमिह को समझाया।

दसरे पन्चात हम्मीर प्रभावित नारियल को स्वीकार करने गया करना चाहता हूँ इस पर प्रसाद डालन लगा। उमन कहा, ‘मैं इस नारियल को इसलिए स्वीकार किया कि दही मा प्रसन्नी ने मुझे ऐसा करने का आदेश दिया हूँ। उमन इसका माग यह भी कहा हूँ कि उस पत्र का आगमन ही हमारा चिन्ता विषय का आधार होगा। एनी स्थिति में हम प्रस्ताव का अस्वीकार करना नहीं उपाय का नहीं। मैं दही मा के वचन का नहीं टांग सकता हूँ। हमारी बात यह है कि हम क्या करने दुष्ट हूँ कि हमने समझा हुआ कि बाद भी यह बातों द्वारा जायग, पाच मा धाड़े आ रहे हूँ। पाच मा और अधिक उपास्य में हमारा साथ चलना।

हमे बराबर यह प्रदर्शित करना है कि हम एकाकी हैं और हमारे साथ कुछ भी शक्ति नहीं है। हमारी सारी सेना हमारे एक मकेन पर जालोर में हाहाकार और विप्लव उत्पन्न कर देगी।”

मेरा ने तुरन्त कहा, “एक छूत क्रीडा का दाव है।”

अनग ने कहा, “राणा जी के साथ हम रहेगे, हमारी तलवारों से बचकर उन पर आक्रमण करना अत्यन्त दुर्लभ है।”

एकात !

सब चले गए।

हम्मीर सोच रहा था, देवी माँ बरबडी के वचन सत्य हो रहे हैं। उसके पाँच सौ घोड़े आ रहे हैं। अपने सरदारों एवं मामन्तों को मैंने किसी भी तरह ऊँचा-नीचा करके तैयार कर लिया।

अप्रत्याशित उसको आभास हुआ कि विजय-श्री के चरण उसकी ओर द्रुतगति में अग्रसर हो रहे हैं। उसके चतुर्दिक उल्लास और प्रसन्नता का साम्राज्य सा छा गया है। उसका चित्तौड़ उसका अपना हो गया।

उसने भावाभिभूत होकर कहा, “जय एकलिंगेश्वर ! मुझ पर दया कर। मेरे सकट हरो। मैं आपका केवल चाकर-मात्र हूँ।”

शनै शनै घोर शून्यता छा गई।

— — — — —

१४

भागलिक मृहत्तं मे वारात जालोर पहुँची।

जालोर के किले की उदासी देखकर हम्मीर का मन आशका से भर आया। शहनाई के व्यथा भरे मधुर स्वर की जगह वहाँ गहरी उदामी थी। कहीं भी अपार प्रसन्नता व मंगल-गीतों की गूँज नहीं थी। गढ़ के कुछ आन्तरिक हिस्सों पर बन्दनवार थे और अन्य सजावट अवश्य थी।

पवनसी मेरा और अनर्गन्निह हम्मीर के साथ थे। छद्मरूप से

चारू के नेतृत्व में पाँच सौ घोड़ों की सेना व पैदल वीर जालोर के गढ़ के चारों ओर फैल गए। उस तुरगवाहिनी की किले बन्दी इतनी सशक्त थी कि एक बार सुदृढ़ से सुदृढ़ आक्रमण भी उसे छिन्न-भिन्न नहीं कर सकता था।

पवनसी ने गढ़ में प्रवेश करते ही गौर से गढ़ की स्थिति का पय-वेक्षण किया। पयवेक्षण करने के साथ उसने अपने साथ आए वारातियों को संकेत किया। वराती तुरंत सजग हो गए।

इसी बीच मालदेव को गुप्तचरों ने समाचार दिया कि राणा हम्मीर के साथ बड़ी सेना है जिसने गढ़ को घेर लिया है।

मालदेव न तन से फव निकल गई।

उसने अपने सेनापति को कहा, "हम्मीर के साथ किया गया छल हमारे लिए बड़ा घातक होगा, अब क्या किया जाय?"

दीवान जीर्तासह ने कहा, 'पटयन्त्र एकदम असफल होगा और मेवादी फिर दुगने उन्माह से आक्रमण करेंगे।' "

"तब?"

'अब मेरा ऐसा ख्याल है कि बाई मा का उनसे विवाह कर देना चाहिए। इसके अनतिरिक्त उठाया गया हमारा कोई कदम, भयकर परिणाम में टकरा सकता है।'

राजा मानदेव चिंतित हो उठा। उसकी वृद्धि पगु हो गई। वह नागा भागा रात्रि में गया। उसकी रानी माम रोक कर परिणाम की प्रतीक्षा कर रही थी। यह एक बड़ा पटयन्त्र था जिसके द्वारा राणा हम्मीर का हत्या की जान बानी थी। मानदेव के मामला एवं मरदाग ने ही उसे यह बुझाया था कि इस प्रकार विवाह के लिए हम्मीर को गुलाब उज्जो सम्मान कर दिया जाय, ताकि चित्तौड़ पर सदा के लिए मानदेव का शासन हो सके।

मानदेव का इस बात का भी आभास मिल गया था कि हम्मीर के लिए अपनी निजान्त स्त्रीण है और वह किसी भी तरह से हमारा मामला

नहीं कर सकता ।

रानी ने जाते ही पूछा, “क्या हुआ राजा जी ?”

“गजब हो गया राणी जी, हम्मीर को हमारे षडयंत्र का पता लग गया है । वह विशाल सेना के साथ हमारी बेटी को व्याहने आया है और उस सेना ने गढ़ को चारों ओर से घेर भी लिया है ।” एक सांभ में मालदेव यह सब कह गया ।

“राम-राम ! अब क्या होगा ?”

“होगा हमारा विनाश ।”

रानी विस्मय में जड़ हो गई । कुछ देर बाद बोली, “मैं आपका विनाश नहीं होने दूंगी । आपको खोकर मैं बेटी को नहीं रखना चाहती । आप विवाह की सच्ची तैयारियाँ कीजिए ।

“राणी, वह हमारा शत्रु है । शत्रु को बेटी देकर हम अपने को निर्बल बना रहे हैं ।” मालदेव ने शब्दों पर जोर देकर कहा ।

“कुछ भी हो, मैं हम्मीर को बेटी व्याहाऊँगी ।”

देखते-देखते षडयंत्र खुशियों के बाजे-गाजे में बदल गया ।

सारा गढ़ और नगर प्रसन्नताओं में झूमने लगा ।

इस प्रसन्नता के वातावरण में एक व्यक्ति नितान्त गम्भीर मुद्रा में अपने कक्ष में बैठा था । उसकी आकृति से स्पष्ट लक्षित हो रहा था कि वह किसी गहरे विचार में निमग्न है । तभी उसकी चक्षुओं की कुटिल भ्रुकुटि नर्तन कर उठती थी । तभी वह दीर्घ निश्वास छोड़ देता था । उसकी दृष्टि अनन्त आकाश की ओर जमी हुई थी ।

वह था, मौजीराम मेहता कामदार ।

कूटनीतिज्ञ और विचारक ।

मालदेव के राज्य की लौह-बुरी ।

मौजीराम कामदार होते हुए भी अत्यन्त कुशाग्र एवं चपल बुद्धि रखता था । विकट से विकट समस्याओं के समाधान वह चंद क्षणों में प्रस्तुत कर देता था । जब सारे गढ़वासी वास्तविक विवाह की तैयारी

मे लगे हुए थे तब मौजीराम इस विवाह के रोकने के उपाय को ढूँढने में व्यस्त था। वह चाहता था कि हमीर अपनी ही इच्छा से यह विवाह करने से अस्वीकार करदे।

अप्रत्याशित वह उठा और सीधा मालदेव के पास गया।

“महाराज की जय।”

“मौजीराम इस मरुट से हमें मुक्त कराओ।” मालदेव ने व्यग्रता से कहा।

“मन उपाय ढूँढ लिया है।

“सच?”

“हाँ महाराज।”

“क्या?” मालदेव की व्यग्रता उत्सुकता में बदल गई।

मौजीराम ने राजा मालदेव के कानों में कुछ कहा। मालदेव की आदृति गंभीर हो गई। कुछ शक्ति-स्वर में वह बोला, यह असंभव संभव कैसे होगा?”

‘आप राजकुमारी के अनिर्णित सबको यह आशा दे दें कि वह इस रहस्य का सबका रहस्य रखे।’

‘तब?’

‘एसी युवती समगलकारी होती है, वह चित्तौड़ की साम्राज्ञी नहीं हो सकती। वह निर्मोदिया वंश की कुल लक्ष्मी नहीं हो सकती।’

‘तब?’ अज्ञान राजा की भाँति मालदेव इतना ही प्रश्न करता गया।

‘मौजीराम हमीर विवाह करने का तयार नहीं होंगे और हमारा असंभव हो जाएगा।’

मालदेव राग में समीप गया। उसने उस अभागा को आपना का परिचय दिया था कि आप उतना ही जानते हैं (उतना जान मरुट करा) जितना मैं जानूँ।’

राजा ने उस अभाग का मन नहीं और उस मुँह पर भर दिया।

दुल्लिह्न वेशभूषा में अप्सरा सी प्रतीत हो रही थी। उसने अपनी अजनमय नयनों में तीखा तीखा काजल डाल रखा था। रेशमी परिधान में उसका उज्ज्वल और प्रखर यौवन अत्यन्त आकर्षक लग रहा था। उसने टांगों और पाँवों में सोने के गहने पहन रखे थे।

हम्मीर के कानों में अनगसिंह ने आकर व्यग से कहा, “लेने को देने पड़ गए।”

हम्मीर ने गम्भीरता से मिर हिलाकर कहा, “मैंने कच्ची गोलियाँ नहीं खाई हैं अनग, जीवन के कर्म और उसकी गतिविधि को मैं खूब समझता हूँ। वारू का क्या हाल-चाल है?”

“उसका हाल-चाल ठीक है पर आपके साथ छल हुआ है।” और उसने हम्मीर के कानों में कुछ कहा।

दुल्लिह्न लगन-मंडप में आने को तत्पर थी। पंडित जी विवाह की वेदी पर प्रारंभिक गणेश पूजन कर चुके थे।

हम्मीर एकाएक खटा हो गया। उसके मुख पर रोष चमक उठा।

तत्काल मौजीराम ने हम्मीर को एकांत में लिया। मौजीराम के चेहरे पर उद्विग्नता की रेखाएँ दौड़ रही थीं। वह बहुत हल्के पाँव उठा रहा था। हम्मीर को नितान्त एकांत में ले जाकर उसने कहा, “रागाजी, अपराध क्षमा हो तो एक निवेदन करें।”

“कीजिए कामदार जी।” हम्मीर जानकर अनजान बन गया।

‘पहले वचन दीजिए कि मातो गुनाह माफ करेंगे।’

“मैंने आपसे कहा न, आप फरमाइए।”

“वात यह है कि ?” मौजीराम कहता-कहता फिर रुक गया।

“आप नि मकोच होकर कहिए, लीजिए मैंने वचन दिया।” हम्मीर ने अत्यन्त मधुरता से कहा। उसके स्वर में मौहार्द का भाव था किंतु इन सभी बातों में कृतिमता स्पष्ट झलक रही थी।

“आपका रोष प्रकृति प्रकोप से भी भयानक होता है, अतः रागाजी मुझे भय लग रहा है, प्राण सूख रहे हैं।”

“आप व्यथ का अपने आपको क्यों पीड़ित कर रहे हैं।”

‘राणाजी राणाजी राजकुमारी मा वि ध वा है।’  
अत्यन्त कठिनाता में कामदार ने यह वाक्या कहा।

आसमान पल भर के लिए सन्नाटे में आ गया, ऐसा हम्मीर को प्रतीत हुआ—वादल जोर में अन्दन कर उठे और धरती डाँवाडोल हो उठी है।

हम्मीर आहत सैनिक सा तडप कर रह गया, “क्या बक्ते हो?”

“ठीक कह रहा हूँ दयानिधान, राजकुमारी सा का विवाह बहुत ही टुटपनमें किसी भट्टवशीय राजकुमार से हुआ था, जो शीघ्र ही समर भूमि में काम आ गण। महाराज अपनी इस पुत्री से अतीव स्नेह करते हैं अतः पुत्री के स्नेह ने उनसे यह अपराध करा दिया। आज आपके समक्ष यह रहस्य प्रकट करते हुए हमें सकोच हो रहा है।”

‘यह बात आप ने पहले क्यों नहीं बताई?’

हमारा विचार तो ग़ाद में ही बताने का नहीं था, किंतु आपके गौरव के समक्ष वण्पारावल के पावन मिहामन पर एक विधवा महारानी बनकर उस दूषित न करे, हमने यह भेद आपके समक्ष प्रकट कर दिया।’

“उस अपराध का दंड भी आप जानते हैं, मैं जानोर की इट में इट बजा दगा।”

मौजीराम शान्त खड़ा रहा।

हम्मीर तनिय देर तक विचारता रहा। फिर उसने अनगमिह और पवन माँ को बुलाकर यह कहा।

पवनमाँ ने तनवार निवालेकर कहा, राणा जी आज्ञा है, उस पाप का दंड अशम्य है।’

अनग न भी तनवार निवान नी, मुझ तब से उस रहस्य का पता लगा है तब तम तब अनगमारी दुर्गाचारी राजा ही गदन घट में अनग



यह शब्द पवन वेग की भाँति यत्र-तत्र-सर्वत्र फैल गया ।

तभी हम्मीर के कानो में देवी माँ वरवडी के शब्द गूँज उठे, “विरोध प्रतिरोध की चिंता किए बिना ही आप उस लडकी को वर लाएँ, उसका आगमन ही आपकी विजय का आघार होगा ।”

हम्मीर में देवी माँ के वचनों को टालने का साहस न हुआ । वह बहुत देर तक अपने विचारों को अपने कंठ में दबाए खड़ा रहा फिर उसने पवन सी और अनग को कहा, “मैं विधवा से ही विवाह करूँगा ।”

“यह क्या ?” सबके मुँह से ये दो शब्द निकले ।

“हाँ, इस विवाह में विरोध का उत्पन्न होना ही हमारे अकल्याण के लिए पर्याप्त है ।”

‘यह आप क्या कर रहे हैं ? मुझे युद्ध करने दो ।’ अनगसिंह ने कहा ।

“मैं ठीक कर रहा हूँ । देवी माँ वरवडी का आदेश है कि कौसी भी लडकी क्यों न हो, उसे तुम्हें व्याहता है ।”

युद्ध-पिपासु अनग इसे सहन नहीं कर सका । चित्तौड़ से पावन सिंहासन पर विधवा महाराणी बन कर आमीन हो, यह समस्त मेवाड भू पतियों के लिए अपमान की बात थी । वह नेत्रों में ज्वाला सी भडका कर कर्कश-स्वर में बोला, “ऐसा नहीं हो सकता राणाजी, पुण्य भूमि मेवाड के सिंहासन पर निष्कलक और निर्दोष आत्मा ही महाराणी बन कर उसकी शोभा बढ़ा सकती है । जिस नारी की माँग का सिन्दूर परमात्मा द्वारा पोछ लिया गया है, उसे मनुष्य वह अधिकार देकर कभी सुख का भागी नहीं हो सकता ।” उसने अपने स्वर को बदल दिया, “राणाजी, कौटुम्बिक मर्यादा को देखते हुए भी विधवा से विवाह कैसे कर सकते हैं । आपको इस दुराचारी को अपनी करनी का दंड देने के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिए । मैं कहता हूँ कि युद्ध की घोषणा कर दीजिए ।”

राणा का मुख क्षण भर के लिए पीत-वर्ण का हो गया । उस की दृढ़ता पतझड़ के पीले पात की तरह हरहरा कर गिरने लगी । वह विधवा

को चित्तीड के मूयवशीय ब्रप्पारावल के सिहामन पर कैमे विठाएगा ? यह मवथा पाप कम है और यह कृत उसे जन-जन में अप्रियता दिलाएगा ।

एकने भयभीत स्वर में कहा, “विधवा चित्तीडके राज्यसिहामन ।”

“कैसे बैठ सकती है राणा जी ?” अनगमिह बीच में ही बोला ।

“पवनमी तुम्हारा क्या विचार है ?” महमते हुए हम्मीर ने पूछा ।

“विधवा विवाह हमारे धर्म के विरुद्ध है । ऐसा करने वाले राजपूत बड़े निम्नकोटि की दृष्टि में देखे जाते हैं । उन्हें नातरायत राजपूत कहते हैं । जो हमारे महेश सम्मान-प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त कर सकते, किन्तु मुझे कबल आपकी आज्ञा ही चाहिए ।”

हम्मीर का मन विपुल मत्स्य के मत्स्य भवर में फंसी तरंगों की तरह चले रहा था । यह विवाह चित्तीड की मुक्ति का आधार होगा, फिर धर्म विरुद्ध कैसे ? लेकिन अनग का कहना भी अनुचित नहीं है कि उसमें उसे अप्रियता प्राप्त हो सकती है ? फिर ? फिर ?

हम्मीर विचारों के उत्थान पतन के बीच मन अटक खड़ा रहा । धीरे-धीरे उसका मन बदलन लगा । तभी देवी मा बरबड़ी के वचन उस स्मरण हो उठे साथ ही उसके मन में नया विचार आया कि यदि वह इस को प्रस्वीकार करता है तो राज्य उसके विरोध में न हो जाए, क्योंकि राज्य अपनी मा की वाणी को ही वाक्य में कम महत्व नहीं देता ।

सारी स्थिति पर गभीरता से विचार कर हम्मीर ने निश्चय लिया कि वह विवाह करेगा और उसमें अपनी स्वीकृति अनग को मिला देगी ।

अनग ने झुट्टि बक्र करके पूछा, “आप युद्ध नहीं करेंगे, राणाजी आप युद्ध नहीं लड़ेंगे ?” तब वह यह वाक्य कह रहा था तब उसका स्वर खराब हो गया था ।

‘ हा अनग, इस विवाह में ही हमारा उद्धार है ।’

कनक

राज्य हमारी मेना का नायक बना होगा है और उसकी मा न

इस विवाह मे ही चित्तौड़ की विजय बताई है । वरवडी देवी माँ कहलाती है । यह दया और सत्य की ज्योति है और हमारे लिए वरदान से कम शुभ नहीं । ऐसी विपमता मे विवाह का विरोध हमारे विनाश का कारण हो जाएगा ।”

अनगसिंह आग बबूला हो उठा, “मैं अपनी शक्ति से उमको समाप्त कर दूंगा । एक चारण के बेटे के भय मे आप एक विधवा से गठबन्धन जोड़ लेंगे ?”

“अनग तुम विवेक से काम लेना नहीं जानत । बात-बात मे अधीर हो जाते हो । केवल युद्ध ही विजय का सत्य नहीं, राजनीति का मेरु दंड नहीं । राजनीति का सत्य है, नीति चातुर्य, समझे ।”

“लेकिन विधवा ।”

हम्मीर का हठ फिर जाग गया । उसने तुरन्त कहा, “विधवा अपवित्र नहीं होनी । शैशव काल मे पति-अस्पृश्या अपवित्र कैसे हो सकती है ? यदि पिता का पितृत्व स्नेह की धारा मे अपना कौटुम्बिक गौरव विस्मृत करके अपनी विधवा बेटी का लगन भेज सकता है तब हम्मीर उमे ग्रहण क्यों नहीं कर सकता ? फिर देवी माँ के वचनो का पालन होना ही चाहिए । उसकी कृपा से हम एक दिन अवश्य चित्तौड़ को प्राप्त करेंगे ।”

“ब्राह्मण-वर्ग ?”

“मैं ब्राह्मणो की नहीं, पुरोहितो की नहीं, आपकी चिन्ता करता हूँ ।”

अनगसिंह मौन हो गया ।

पवनसी को को हम्मीर ने अपना मन्तव्य सुनाने को कह दिया । वह भोजीराम जी के समीप गया और कहा, “कामदार जी, यह विवाह अवश्य होगा ।”

भोजीराम का रोम-रोम सिहर उठा ।

उसने हम्मीर को समझाने की चेष्टा की पर हम्मीर ने तुरन्त कहा,

“धर्म इतना दुर्बल नहीं कि ऐसी घटनाओं से कलकित हो जाए और सूर्यवशियो की तपस्या इतनी निर्धूल नहीं कि वह एक निर्दोष विधवा का भार भी वहन न कर सके।”

&lt;

X

X

कोमल करो मे मेहदी के मयूरो का चित्राकन देखकर दुल्हन हर्षोन्माद में भर उठी। उसके अन्तराल की निभरिणी में प्रेम का मुक्त मधुर स्रोत एक-एक कर उसकी भाव-लहरियों को प्रेम सिंचित करने लगा। उसका नीरजात आनन रेशमी अवगुठन में अत्यन्त आकषक प्रतीत हो रहा था। वह दपण में स्वयं के रूप को उतार कर मुग्ध हो गई।

शहनाई का स्वर बजा।

मंगल गीत स्त्रियों ने गाए।

पवित्र अग्नि के समक्ष महामंत्रों के साथ मालदेव ने अपनी पुत्री का कन्यादान कर दिया।

विवाह के तुरन्त बाद हम्मीर ने दृष्टा प्रकट की कि वह कल ही यहा से विदा लेगा तथा वह तुरन्त अपनी पत्नी से एकान्त में मिलना चाहता है।

उसकी आना का तत्काल गानन किया गया।

वह गोतगर रानी में गया।

मानगर रानी के मुख पर जान मुख की प्रभा की मह्य तालिमा थी। उगत मुख का आदरग उद्भापित शार भनी-नाति आश्रित या फिर भी गोतगर रानी का राज्या मुख गायन की दीप्ति-काति लिए उस गायन में अप्रतिम शक्ति हो रहा था।

रानी मानगर उस अतिशय अप्रतिम आदर का दृग्गता रहा। रानी का मन उतावला हो फिर उठा। उसने अपने मन अवगुण को अपना गानी में समुपा किया।

‘‘गानी या, यह भाति मुझे आपस नहीं मिलना चाहिए फिर भी परिस्थिति का मैं क्या कर रहा हूँ। आप जानती हैं कि आपका पिता

विवाह नहीं, एक दाँव है। राजनैतिक सिद्धि है।”

चकित मृग-शावक की भाँति सोनगर रानी की आँखों में आश्चर्य नाच उठा। वह विचार उठी, प्रथम मिलन पर राजनीतिक दाँव-पेंच। वह आशका से काँप उठी।

वह सक्षेप में बोली, “मैं नहीं समझी राणा जी।”

“वात भी सकेतो में बताने की नहीं है राणी सा, आप के पिता श्री की राज्य-लिप्सा इतनी तीव्र हो उठी कि उन्होंने जीवन के परम सत्य सन्निय-धर्म को त्याग दिया। अपनी राजनीति को सफल बनाने के लिए उन्होंने प्रत्येक वस्तु की गौरव मान रखा है। वह वस्तु चाहे पत्नी-पुत्र और पुत्री ही क्यों न हो? किन्तु हम भी सजग हैं। राजनीति के उतार-चढ़ाव को पहचानते हैं, अतः इस बार आपके पिता का दाँव नहीं चला, फलस्वरूप उनसे एक भयकर पाप हो गया।”

“पाप।” इतना कह नववधू काष्ठ-प्रतिमा की भाँति स्तब्ध हो गई।

“हाँ भयकर पाप, जिसका प्रायश्चित्त आपका बाप युग-युगान्तर तक नहीं कर सकेगा। परलोक में भी उसकी आत्मा पल भर के लिए भी सुख की साँस नहीं ले सकेगी। ऐसा अधर्म गौरवाभिभूत मनुष्य नहीं करते, घोर पापिष्ठ ही कर सकते हैं।”

“मैं कुछ भी नहीं समझी। आप मुझे समझाइये।” नववधू के श्वासोच्छ्वास तीव्र हो उठे। मुख-पद्म के मधु की टोह में उन्मत्त भ्रमर-अलकें जड़िया को प्राप्त कर गई थी। कुछ कहना चाहा पर व्यर्थ। शब्द कंठ में ही अटक कर रह गए।

“पहले वचन दो कि सुनकर तुम मेरा ही कहना मानोगी।” गहरा अपनत्व उसके स्वर में था, जिसने ‘आप’ की मर्यादा को तोड़ डाला।

“आप मेरे नर्वस्व हैं, प्रभु, मोक्ष, सुख और जीवन। आपकी आज्ञा के अतिरिक्त अब मेरी कोई साव-अभिलाषा नहीं।”

“तुम वचन देती हो?”

“हाँ।”

“तुम्हारा निर्दोष चेहरा तेजस्वी नारी-सा प्रभावशाली और अग्नि-शिखा-सा अस्पृश्य है। तो भी अपरिवर्तित पापाण-पक्ति-सा विधि के विधान ने हमारे जीवन को अवरुद्ध कर रखा है। उस पर से जाते हुए हमारी यह दुर्बल आत्मा सिंह के समक्ष शावक की स्थिति जैसी हो जाती है। हमारी प्रत्येक भावना उसका उल्लंघन करती हुई भयभीत हो जाती है। सुना है, विधि-विधान की हम सहजता से अवज्ञा नहीं कर सकते, किन्तु तुम्हारे बाप ने हम्मीर को यमलोक पहुँचाने के लिए उसको धूल की साधारण रेखा समझ कर मिटा दिया है।”

“आपको यमलोक पहुँचाने ?”

“हाँ देवी, आदमी के मन की लिप्सा ज्वालामुखी-सी प्रचंड होती है। उसकी शान्ति के लिए उसे छल द्वेष और कपट के कई हवन करने पड़ते हैं और उसमें कई स्वजनो एव परिजनो की आहुतियाँ भी देनी पड़ती हैं।”

“बेटी के माँग के सिन्दूर को मिटाने वाला बाप नहीं हो सकता।” नववधू का स्वर कोमल हो गया, “आपको मिथ्या सन्देह हो गया है।”

“न।” हम्मीर हड़ता से बोला, “आदमी के मन की लीला अपरम्पार है। वह क्या सोचता है और क्या करेगा, यह हम सहजता से नहीं समझ सकते। उसके विचारों पर अनेकानेक भाव मघप करते रहते हैं। उसका अन्तर-मागर विभिन्न वीथियों का क्रीडा-स्थल है। रागी, तुम भोली हो। अभी मेरी बात सुनोगी और अभी तुम एक सामान्य नारी-सी वरण ऋद्धन कर उठोगी। तुम्हारा मन-प्राण-आत्मा सभी बुद्ध चीन्कार कर उठेगा और तुम्हें मृष्टि की प्रत्येक वस्तु सत्यानाशिनी लगगी।”

वातावरण गम्भीर हो गया। पन भर के त्रिण निम्नगता गम्भी छाई रही जैसे काँच त्रिभुज निज्जन है।

“राणा जी मैं आपके पाव पडती हूँ और सबक भी करती हूँ कि मैं आपके वचना के विरुद्ध अपनी साम तक नहीं नूगी।”

“तुम्हारे वचनों की दृढ़ता पर मुझे विश्वास आ रहा है।”

हम्मीर ने दीर्घ निश्वास लिया। फिर सम्मलकर पुनः बोला, “राणी, मैं तुम अपने जीवन की सारी घटनाओं-दुर्घटनाओं से परिचित हूँ।”

“मेरा जीवन राजकुमारी का जीवन रहा है। मर्यादित एवं सुखी।”

“वचन में तुम्हारा किसी के साथ विवाह हुआ था?”

वाक्य समाप्त होने के साथ नववधू के नेत्रों में अश्रुति का सागर उफन पड़ा। उसे लगा कि चराचर में प्रचंड भूकम्प आ गया है और उसके आस-पास के सुन्दर भवन खण्ड-खण्ड हो रहे हैं। उसके तन और मन में अग्नि-शिखाएँ प्रज्वलित होकर उसे दारुण दुःख देने लगी हैं।

उसने हम्मीर की ओर जलती-दृष्टि से देखा। क्रोध में उसकी वाणी अवरुद्ध-सी रही। हम्मीर ने उसकी ओर कठोरता से देखा और फिर मृदु-तिरस्कार के साथ कहा, “उस समय तुम अवोध थी। तुम्हें स्वयं का ज्ञान नहीं था। तब तुम्हारे पिता ने एक भट्टवशीय राजकुमार के साथ तुम्हारा विवाह कर दिया। दुर्भाग्य से वह अति शीघ्र समर-भूमि में काम आ गया और तुम विधवा हो गई। यह कटु सत्य है, विषाक्त यथार्थ।”

रानी के अघर काँपने लगे। काँपते-काँपते उसके मुख से भयानक चीख निकली, “यह सब झूठ है, झूठ है।”

हम्मीर का स्वर अत्यन्त कोमल एवं मधुर हो गया, “यह सत्य है राणी। मैंने तुम्हारे समक्ष जो निवेदन किया है, वह तुम्हारे पिता का कहा हुआ है। इसमें जरा भी इतिवृत्त नहीं है। उन्होंने पितृ-स्नेह वश ऐसा किया। वे तुम्हें विधवा के हृदय-विदारक वेप में नहीं देखना चाहते थे। तुम्हारी माँ ममता के अटूट बन्धनों में इतनी निर्वल हो गई कि वह भी इस बात का विरोध नहीं कर सकी।”

वह पुनः उन्मादग्रस्त नारी-सी चिल्लाई, “यह सब झूठ है, झूठ ! मेरा धर्म विगाड़कर मेरे प्रति कोई स्नेह नहीं दिखा सकता।”

हम्मीर के अघरों पर कुटिल मुस्कान थिरक उठी, “तुम ठीक कहती

हो। तुम युवती हो। तुम्हारे अग-अग में विलास का प्रभाव आच्छ है। फिर क्या कारण था कि तुम्हारे बाप ने तुम्हारा विवाह आज नहीं किया ?”

नववधू के बोझिल लोचनों में जिज्ञासा चमक उठी।

“फिर किया तो अपने शत्रु से, अर्थात् मुझसे ? जानती हो तुम राजा मालदेव के रक्त का प्यासा हूँ। उसके प्राणों का घातक हूँ, उस विष्वस का इच्छुक हूँ। रागी ! यह सत्य है कि तुम बाल विधवा हो

“ ।” नववधू का पुडरीक-मुख चिन्ताओं से धूल-धूम्रित प्रतीत हुआ। बोझिल लोचनों की जिज्ञासा लुप्त हो गई। उसकी में न भाव था और न विभाव। एक शून्यता थी, अथहीन शून्यता।

‘वस्तुतः मुझे यहाँ विवाह के लिए नहीं बुलाया गया था। विवाह वहाना मात्र था। वास्तविकता यह है कि यह एक पडयत्र था जिसे द्वारा मैं यमलोक पहुँचाया जाने वाला था। पर मैं इस बात के पहले से ही सावधान था, अतः उसका परिणाम आशा के विपर निपला।’

नववधू एक चन्दन-काष्ठ निर्मित चाकी पर टूटी-सी बैठ गई।

हम्मीर का कथन जारी था, “रानी, मैंने तुमसे विवाह जान प्रसन्न किया। देवी के वचनों के आधार पर किया। यह विवाह मेरा अनामगल का सोपान है, वह पावन गंगा है जिसके स्पर्श से उन्मत्त के दुर्ग दूर हो जायेंगे।

भाव-प्रधान शब्दों पर नववधू ने ध्यान नहीं दिया। वह अपने असे बोली, ‘तभी मुझे विवाह की पूँज सूचना नहीं मिली, तभी महाराज प्रारम्भिक उत्सव-आयोजन नहीं हुए। शोच ! यह ममता ! यह मेरे जीवन के प्रति अभावना ! मैं मैं !” उसने अपनी हाथ व चूड़ियाँ जो दीवार में टकराना चाहा, पर हम्मीर ने उन रक्त-रक्त वह अपने सम्मानपुत्र शब्दों में नववधू से पाता, ‘अपने पुनः प्रदान है। फिर प्रतिशोध का आधार आम-दहन नहीं, कुछ शोध ही है



‘नहीं राणाजी, एक विधवा क्षत्राणी के लिए मंगल-सूत्र पहनने से बड़ा दुष्कर्म और कोई नहीं। यह तन केवल अग्नि माँ के योग्य है।’

“आप धैर्य से सोचिये। देवी माँ का यह आशीर्वाद है। फिर शास्त्रों, मे भी अज्ञान में दिया हुआ पाप, पाप की सजा नहीं होता।”

“नहीं, नहीं, मैं यह सब नहीं जानती। मुझे यह विवाह स्वीकार नहीं। मैं विधवा हूँ, विधवा।”

वह बाहर की ओर जाने लगी। हम्मीर ने उसका हाथ पकड़ लिया। नववधू विगलित कण्ठ से बोली, ‘मुझ पापिन को स्पर्श मत कीजिये, माँ की अखण्ड भक्तता और पिता के नेत्रहीन अगाध स्नेह ने मुझे कलकित कर दिया है। मैं यह सुन भी नहीं सकती कि मैं विधवा हूँ। उफ! यह जानने के पहले मैं मर जाती तो अच्छा होता।’

नववधू के भस्मा-विलोडित नेत्रों से अश्रुओं की धारा वह पड़ी। हम्मीर के मन पर आघात-सा लगा। उसने बधू को आलिंगन में लेकर कहा, “तुम्हारे जैसी विधवा अपवित्र नहीं होती। तुम निर्दोष हो, भोले गिशु की भाँति अज्ञान। धिक् उस लोभी और निर्दयी पिता को दो, जेसने तुम जैसी धर्म-प्रिया नारी को दाँव पर लगा दिया। क्या ऐसे नवमीं बाप के कुकर्मों का यही दण्ड है? क्या किसी नारी की आत्मा से जलने वाले पामर पुरुष के कुकृत्यों का यही प्रतिशोध है कि तुम स्वयं तो समाप्त कर दो। राणी! मेरे अन्तराल के आलोक में तुम्हारा धिग्वंश में कलकित मुख उस मोती की भाँति दीप्त होगा जो अल्पश्रम में प्राप्त करती आई हैं। किंतु इतना याद रखना, हम्मीर की किमि दृष्टि का एक सकेत यहाँ सर्वनाश का ताडव प्रारम्भ कर देगा।”

नववधू का मुख रक्तहीन हो गया। उसकी कोमल भुज-लताएँ झकिल होकर अपने घुटनों पर पड़ गईं।

“यह सब क्यों?” आपके कीर्तिमान सिंहासन पर एक विधवा का कितना आदर-सत्कार क्यों?” वह चिढ़ गई।

“क्योंकि देवी मां वरवडी का आदेश है। क्योंकि अमंगलकारी विधवा का चरण-स्पर्श चित्तोड की मुक्ति का सूत्रधार होगा।”

“हाय !” एक आह-सी निकली नववधू के मुख से।

“राणी ! तुम्हारे मुख पर उज्ज्वलता का पावन आलोक है। उस आलोक में चित्तोड की भाग्य-श्री विजय-श्री की अवतारणा होने वाली है। मैं तुम्हें अपने क्षत्रिय-धर्म का विश्वास देता हूँ कि यदि तुमने अपने जीवन से खेलने का प्रयास नहीं किया तो मैं तुम्हारे वचनों को कभी भग नहीं करूँगा।”

“ठीक है। राणा जी, मैं वचनबद्ध हूँ। इस अक्षय आत्मा की शपथ साती हूँ कि मैं आत्महत्या नहीं करूँगी, प्रतिशोध लूँगी।”

हम्मीर के अघरों पर वही कुटिल मुस्कान थिरक उठी। उस कुटिल मुस्कान में हम्मीर के अन्तर्मन के भाव स्वरूप होकर नाच उठे जैसे उसके मुख के भाव रह रह हैं, तुम युग-युगों से शापित नारी हो जिसका उपयोग सदा स्वाय के हतु होता आ रहा है। मुझे नारी-मौन्द्य गौर नारी पवित्रता का सम्मोह नहीं, मेरे समक्ष विपत्ति और कुमारी का प्रश्न नहीं। विलास की मुझे उत्कंठा नहीं, मुझे भोग की लालसा नहीं। मेरी दृष्टि और ध्येय है—चित्तोड की मुक्ति, उसकी प्राप्ति, उसकी स्वतन्त्रता।

हम्मीर आगे बढ़ा।

नववधू की अन्तर्मन में पून टानना चाहता, पर उसने ऐसा नहीं करने दिया। उसने कहा—“मैं अभी आती हूँ राणा जी।”

“कहा जाती हो ?”

“चिन्ता न रीतिग, आपके वचन को भग नहीं करूँगी।”

उसने जाने ही हम्मीर के अपनी तन्त्रार की मूठ पर हाथ रख कर अपने आपसे कहा, “नारी प्रतिहिंसा की आग में तन उठी है।”

नववधू उस वक्त में राज्य निरन्तर पर अपनी माँ की आर द्रुताति से चली।

पथ के मध्य उसकी दो खाम महिनियाँ मिल गईं। वे महिनियाँ उसी

के प्रसंग की बातचीत कर रही थी ।

सहोदरा ने बरजी से कहा, “सुना वहिन, ऐसा अनर्थ हमने कभी नहीं देखा ।”

“ऐसे वाप का मुँह काला कर देना चाहिए ।”

“सुन री, एक विधवा के हाथ पीले करते हुए उसकी आत्मा कांपी तक नहीं ।”

“मजे की बात यह है कि आज तक इस बात का पता तक नहीं होने दिया ।”

नववधू के तन मे रोप की चिनगारियाँ जल उठी ।

थोड़ी ही दूर पर बुढ़िया दासी मेनका मिली ।

नववधू अश्रुपूरित नेत्रों से उसके गले के समीप का आँचल का छोर पकड़ कर पूछा, “दादी क्या यह सत्य है ?”

“दादी पल भर के लिए शांत रही । रुकती-रुकती बोली, “हाँ ।”

उसके जाते ही दादी ने कहा, “महाराज की ऐसी आज्ञा है ।”

अब उसके अग-अग मे शूल-चुमन की पीड़ा का सचरण होने लगा वह उन्मत्त-सी, आहत साँपिन-सी अपनी माँ के पास पहुँची ।

“माँ, क्या यह सब सत्य है ।” नववधू ने जाते ही पूछा ।

मालदेव की वापस आज्ञा नहीं आई थी कि इस झूठ को अब छिपाकर न रखा जाय, अतः रानी ने महाराज की आज्ञानुसार भयभीत स्वर मे कहा, “हाँ, यह सब सत्य है ।”

पहाड़-सा द्रुत पड़ा नववधू पर, “माँ, क्या मैं विधवा हूँ ?” वह चीख पड़ी । उसका अग कांपने लगा ।

“हाँ बेटो ।”

“तुमने यह पाप क्यों किया, माँ ? एक विधवा को विधवा क्यों नहीं कहा । इस भेद को आज तक क्यों छुपाया ?” उसका स्वर व्यथा से काँप रहा था ।

“मेरे ममत्व ने ऐसा नहीं होने दिया ।”

“वह ममत्व ममत्व नहीं कहला सकता, जो आत्मा को पतनोन्म करता है, शास्त्रो और मर्यादाओ का उल्लंघन करता हो।”

“तुम माँ के हृदय को क्या समझो। माँ का हृदय अपने ब्रह्म के सु के लिए शास्त्र क्या, प्रभु तक की अवज्ञा कर सकता है।”

“अच्छा।” वह मिहनी की भाँति फुत्कारनी हुई वापस आ गई।  
दुख, विपाद और आसु नवबधू के चेहरे पर छा रहे थे।

×

×

×

मालदेव ने ज्यो ही अग्रकाश पाया त्यो ही वह रावले में आया। राग का चिंतातुर मुख देखकर वह सहज ही पृथ्वी बैठा, “स्या बात है राणी

“बुद्ध नहीं।” वह अनमनी सी बोली।

मालदेव ने एक दीर्घ निश्वास लिया, “उम ब्राह्म राणा न हमें गह पराजय दी है। हमारी राजनीति एकदम असफल हुई।”

“हाँ, और कुमारी के मन में क्या ही मन्देह हो गया कि वह वा विधवा है।”

विस्मित नयी स मानदेव अपनी रानी की आरक्षण लगा। अतः दृष्टि में जलता जाता हुआ वह बोला, “जय पामा ही हमारे मित्र प गया, फिर उस भूट की आभ्युपगता क्या थी?”

मैन देवा आपसी आज्ञा का पालन किया।

“राजाज्ञा पत्न्य की नवीर नहीं होती। यह हर बात प्रत्यक्ष रहती है। जय राणा जी मित्रता में ही मित्राह वरुन का तत्पर हो ग फिर उस भूट को प्रथम दूर तुमने पटी का व्यव ही दुःख दिया।”

“मित्रता को समीक्षा अति चतुर नहीं कहा है।” रानी ने म्य स्वभाव की व्याख्या कर दी, “यह तनिक भी दुर्दर्शी नहीं होती।”

मानदेव ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। उसने परिचरिका से आज्ञा दी कि वह राजकुमारी का पुत्रा कर जाए।

नवबधू का चरित्र विलान और रक्तहीन था। दृष्टि में त्रासक स्पष्ट चित्तगारिया चमक रही थी।

मालदेव ने क्षीण-श्रात कठ से कहा, "बेटी, हम से एक बड़ी भारी भूल हो गई है।"

नववधू ने शांत भाव से कहा, "भूल राजनीतिज्ञों से नहीं होती। वह अवसर की प्रतीक्षा करते हैं और अवसर आते ही सब कुछ दांव पर लगा देते हैं।"

"नही नही, ऐसी बात नहीं है। बात यह है कि ।"

बीच में ही नववधू अमर्ष से लाल हो उठी। तिक्त स्वर में वह बोली, "बात यही है कि अब मैं फिर विधवा नहीं हूँ।"

"हां, हां" नेत्रों में विस्मय लाकर मालदेव बोला, "तुम सचमुच विधवा नहीं हो। यह विधवा का कथन एक राजनीतिक चाल थी, हम्मीर को बहकाने का बहाना था।"

"हर व्यक्ति दूसरो के धोखा देने के लिए ऐसा ही कहा करता है।" वह एक दम चिढ़ गई "आपको यह भली-भांति विदित है कि सत्य तो आधारहीन नहीं होता? वह प्रतिबन्ध मुक्त होते ही प्रत्येक जिह्वा पर आ विराजता है। मनुष्य ही नहीं, घरती का कण-कण और अणु-अणु उसका उद्धोष करता है और वह प्राणियों के अन्तराल की गहगई में पूर्णरूप से स्थापित हो जाता है।"

बेटी के तनिक दीर्घ भाषण पर मालदेव भट्ला पड़ा। वह रोपपूर्वक बोला, "तुम अपना ही कहोगी या कुछ हमारा भी मुनोगी?"

"मैं अब आपका कुछ भी सुनने को तैयार नहीं हूँ। मैंने आप का विश्वास करना छोड़ दिया है। आप पापी ही नहीं, नराधम हैं।" वह भावावेश में भर आई। फिर उनकी मुद्रा 'स्व' पर केन्द्रीभूत हो गई। शनैः शनैः जो कहा, वह ऐसा लगा जैसे वह अपने आपको ही कह रही हो। वह बोली, "आप मानवीय सवेदनाओं के परे केवल राजनीति के चतुर-निराधर्मी और पापाण प्राणी हैं, आपका कोई अपना नहीं और कोई पराया नहीं। आप विवाह भी रचाते हैं तो किसी की हत्या करने के लिए और आप अर्थी का जुलूम भी निकालते हैं तो किसी के प्राण

लेने के लिए । आपका हर कार्य स्वार्थ-मिद्धि का प्रतीक होता है । आप राजनीति के स्वार्थ-लोलुप आवतन में रहते-रहते दूसरों की लालसा-अभिलाषा को एक खेल समझने लगे हैं । आपका एक ही वस्तु में प्रेम है, वह है आपकी महत्वाकांक्षा ।”

पेटी को इतनी भावुकता में देखकर मालदेव उसके मन्त्रिकट आया । अब वह बहुत गंभीर था । उसके मन्त्रिकट में अपनी बेटी के सदेह जनित आवेश को लेकर मधुप का झुंझ-सा उठ गया । उसने अपनी बेटी पर हाथ फेरना चाहा, किन्तु राजकुमारी ने ऐसा नहीं करने दिया । वह दूर हट कर खड़ी हो गई ।

मालदेव का हृदय भर-सा आया । विगलित स्वर में बोला, “मैं तुम से भूठ नहीं बोलता । शत्रु के विनाश के लिए रचा गया पटयन्त्र विफल हो जान के बाद मुझे तुम्हारा विवाह अपने शत्रु के साथ करना पड़ा । यह विधवा सम्वादन भी उसी पटयन्त्र का एक अंग है ।”

“और अब मुझे वापस मुहागिन कहना, क्या नया पटयन्त्र नहीं हो सकता ? पिताजी, मनुष्य बार-बार मृत नहीं बनाया जा सकता ।”

मालदेव को अपनी बेटी पर क्रोध आ गया । वह फकार कर बोला, “तुम्हें मुझ पर भरोसा नहीं, तुम समझती हो कि मैं सदा भूठ बोलता हूँ ?” मालदेव स्वयं कुछ आवेश में आ गया ।

हा ।”

पेटी । गज चीख सी निकल पड़ी मालदेव के मुख में ।

‘जो आप अपनी पून सी पेटी को शत्रु के हाथों में दागना दुःख भोगने के लिए भेज सकता है, वह क्या नहीं कर सकता । आज मांग का पारा राजा मुझ तक कर घुंघना में डूब रहा है, क्यों ? जेबन इमरान में चिरा है । पिताजी, विधवा नन्ही का चिराह आपने सोचिम्बि गारव में अनुभूत नहीं, मुझ जैसी नन्ही के समानुसार नहीं, दर, जो नाग में चिरा है, उसे भोगना ही पड़ता । तो हा गया है, उसके लिए पश्चात्ताप ही शेष रह गया है ।”

मालदेव को बेटी के हठ पर क्रोध आ गया। उस क्षण अपने धैर्य को खो बैठा। उसकी बेटी उसकी बात का विश्वास क्यों नहीं करती, यह सोचकर वह उद्विग्न हो उठा और क्रोध में लाल-पीला होकर बोला, “यदि तुम्हें मेरी बात पर विश्वास नहीं आता तो जा, तू विधवा है, विधवा।”

रानी ने बीच में अवरोध उत्पन्न किया। “आपको धैर्य रखना चाहिए।”

“धैर्य।” मालदेव बड़बड़ाया, “मैं धैर्य कैसे रखूँ ? तुम्हारी लाडली मेरी कुछ सुनती ही नहीं। कह दिया कि यह एक समय का खेल है पर यह मानती ही नहीं।”

राजकुमारी ने कुछ नहीं कहा। वह कक्ष से बाहर हो गई। उसने जाते-जाते अपने पिता की आवाज को सुना—“जाती है तो जाने दे, उसके जाने से कौन हमारी ध्वजा हट जायगी।”

राजकुमारी एक पल के लिए रुकी, फिर हवा की तरह भागकर उन दोनों की आँखों से दूर हो गई।

×

×

×

राजमहल में प्रदीप जल उठे। ढोलनियों के संगीत-नृत्य के बाद हम्मीर ने उस कक्ष में प्रवेश किया जिसमें नववधू सोलह शृंगार करके भी निरन्तर अश्रु-वर्षा कर रही थी। उस के समीप लघु-प्रदीप जल रहा था जिसका हल्का प्रकाश उसके चाँद से सुन्दर मुख पर पड़ रहा था। मखमली शय्या पर चम्पा चमेली और गुलाब के फूल बिखरे हुए थे जिनकी सौरभ से कक्ष महक रहा था।

हम्मीर के चरणों की ध्वनि सुनते ही नववधू संभल गई। उस ने अपने घूँघट का आवरण अपने मुख पर डाल लिया। उसने अपने अश्रु पोंछे और आँचल को ठीक किया।

हम्मीर ने खँखारा।

नववधू सकपकाई ।

हम्मीर ने समीप आकर उसके घूँघट को उठाना चाहा । नववधू कोमल स्वर में बोली, “जरा रुकिए ।”

“क्यों ?”

“मुझे एक बात का सच्चा और सही उत्तर दीजिये कि क्या मैं विधवा हूँ ?” नववधू ने स्वतः ही कुछ घूँघट उठा लिया था ।

“हाँ ?” हम्मीर ने बड़े विश्वास के साथ कहा, हालांकि वह उस समय ऐसा भी कह कर उसे सात्वना दे सकता था कि वह विधवा नहीं है, पर उसने ऐसा नहीं किया । वह इस सत्य को और मजबूत करना चाहता था ताकि उसके मन में अपने बाप के प्रति प्रतिहिंसा उत्पन्न हो जाय ।

“और आपने यह जानकर मुझमें विवाह क्यों किया ?”

“यह तैव-योग है । देवी मा वरवटी की आज्ञा का पालन है । फिर ?” हम्मीर ने अश्रु-भरी दृष्टि से नववधू को देखा ।

“आप कहते-कहते स्व क्यों गए ?”

फिर सभी तुम्हारे रूप यौवन की पशमा करते थे । मैं भी चाहता था कि मेरी राणी अतुल्य रूप की देवी हो । उसके सी-दय पर मुझे गर्व हो । राणी ! वैभव बोटे एता मतन नहीं ह जिमे अमिट कहा जाय । वह साधारण पाप है ।”

“साधारण पाप ?” नववधू के मुख में हठान् निरन्ता ।

“हाँ, यह साधारण पाप है । तुम्हारा विवाह उस समय हुआ जब तुम नाना भी । वह अज्ञानता तुम्हारे महापाप दो साधारण पाप कर देती है और उसका पादचिह्न तुम आसानी में पत्र सकती हो ।”

“तब ?”

“तुम उस समय जानती थी कि तम अपना चित्नीट मित जाण । तुम्हारा आगमन तभी मगना-चिह्न हो सकता है जब तम अपना ग्योदा चित्नीट मित जाण ।”

“यह तब कैसे होगा ?”



“सोचो कि उस वाप के पाप का दंड उसे कैसे मिलेगा जो तुम्हारे धर्म से खेल चुका है।”

नववधू का मन ईर्ष्या और प्रतिहिंसा से भरा हुआ था। उसने कहा “मैं सोचूंगी।”

हम्मीर के अघरो पर वही कुटिल मुस्कान थिरक उठी जिसमें उसके राजनीति के दाव-पेंच भरे थे।

नववधू ने तब गहरा मौन धारण कर लिया। हम्मीर ने उसे स्पर्श करना चाहा, पर उसने ऐसा नहीं करने दिया। वह शय्या पर गभीरता धारण करके चुपचाप बैठ गई।

हम्मीर हवा से कांपते हुए दीपक की लौ को देख रहा था। मोच रहा था—वह एक विधवा को चित्तांड के राज्य-सिंहासन पर बिठा कर कोई अनर्थ तो नहीं कर रहा है।

तभी उसे बरबडी के वचनों की याद हो आई और उसने विधवा विशेषण पर विचारना ही छोड़ दिया।

वह शय्या पर लेट गया। नववधू के बड़े-बड़े नयनों में सधष की रग-विरगी लपटें जल रही थीं।

अप्रत्यादिक्ष वह बोली, “आपका कुल-देवता शिव हैं। परम देव शिव से दो तत्व प्रकट हुए, शिव और शक्ति। मैं शक्ति हूँ, निषेध रूपा। वह निषेध तत्व ही नारी है। जो अपने आपको उत्सर्ग और बलिदान करने की भावना रखती हो, वही नारी है। जो अपने अस्तित्व को विस्मृत करके दूसरे की रचना की तन्मय हो, वही नारी होती है। जो स्वयं को कचकित करके दूसरों को पाप से मुक्ति दिलाने में रत हो, वही नारी है। जो अपने रोम-रोम को बन्दी बनवा कर दूसरे के पोषण की प्रबल इच्छुक हो, वही नारी है। उस नारी की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं आपकी हूँ, सम्पूर्ण रूप से आपकी हूँ। वस इतनी सी विनती है कि आप भी मुझे पिता की भाँति राजनीति का हथियार न बनाइए।”

हम्मीर ने उसे अपने आनिगन में लेते हुए कहा, “नहीं-नहीं, तुम्हें

ऐसा नहीं विचारना चाहिए । यह देवी की आज्ञा से हुआ है । यह विधि का विधान है जिसे होना ही था ।”

“फिर आप रक्तपात का विचार छोड़ दीजिए । मैं नहीं चाहती कि मेरे विवाह पर युद्ध के वाजे बजे और मनुष्यों की लाशों से नगर पट जाए । यह मुझे विप्रवा के लिए अत्यन्त पीड़ा-जनक होगा ।” उसकी बागी में अमीम कोमलता थी । उसकी दृष्टि अत्यन्त नारी-मुलभ मान-वीर्यता से भरी हुई थी । उसका प्रभाव हम्मीर पर गहरा पड़ा । नव-वधू की आँख आँसुओं से भरी हुई थी । हम्मीर ने उसके हाथ को अपने हाथ में ले लिया और उसके निर्दोष, मधुर मुख को देखता रहा ।

“मैंने सुना है कि अपने गढ़ को चारों ओर से घेर लिया है ।” वह पुन बोली, ‘आपके पास अजेय शक्ति है जिसके द्वारा आप इस नगर को क्षयशून्य बनाना चाहते हैं, पर ऐसा करना परिस्थिति-अनुकूल न कहला कर यही भ्रम पैदा करेगा कि एक विधवा के विवाह पर इसके अतिरिक्त और क्या हो सकता है ?”

हम्मीर द्रवित हो उठा । बोला “राणी ! मैं तुम्हें समस्त हृदय से प्यार करता हूँ जहाँ तक युद्ध और विनाश का प्रश्न है, तुम निश्चक रहो । शेष के लिए मैं विवश हूँ । मैं तुम्हारे पिता को उसकी करनी का दंड जरूर दगा । उसने मुझे मारन का नाटक रचा फिर मैं उसे कैसे क्षमा कर सकता हूँ ।”

“देविण ! मैं आप से एक बार नहीं त्नातर बार विनती की कि अभी आप शरण न कीजिए, ऐसा करना मनुष्य मेरे लिए मनुष्य का कारण ही जानगा । उदाचित्त मैं आत्म-व्या ही करूँ ।”

‘राणी !’ इसी क्षण निजनी हम्मीर के मुख से ।

‘आपकी देवी मा भविष्यन्ता हूँ वह भविष्य के प्रकाशमान और अप्रसार दोना पता को जानती हूँ पर मैं जानती ही जानती हूँ कि मैं क्षम्य हूँ । परा गुरु स्थान में चरण रखना ही अमंगलकारी होता है । फिर कोई अनिष्ट एक ही वान का मनेन करेगा कि मैं अनुभू हूँ ।”

“लेकिन चित्तौड़ की मुक्ति ?”

“मैं चित्तौड़ को मुक्त कराऊँगी। आप विश्वास रखें कि आपको अपना चित्तौड़ मिलेगा।”

“पर कैसे ?

“पिताजी आपको दहेज देंगे। आपसी वैमनस्य के कारण वे आपको केवल सम्पत्ति देना चाहेंगे, पर आप सम्पत्ति के साथ-साथ यहाँ के अत्यन्त चतुर, राजनीति में निपुण कामदार मौजीराम को भी माँग लें।”

“इससे ?”

“आपको अपना चित्तौड़ मिल जाएगा।”

हम्मीर ने नववधू के कपोल का चुम्बन ले लिया। नववधू के नेत्र गंगा-यमुना से भर आए। वह दीपक की लौ को छेड़ती हुई भर्राए स्वर में बोली, “मुझे थोड़ा अपनी आत्मा की पापान्नि में जलने दो। यह सौन्दर्य दिव्य और मोहक अवश्य है पर वर्तमान के अनुसार उसकी दिव्यता पर कलक की छायाएँ मँडरा रही हैं। मुझे घोर एकान्त की अनुभूति में उसे विस्मृत करने दो। आप चाहे तो मैं पृथक वक्ष में चली जाऊँ। जहाँ निर्जीव मौन है, जहाँ पापाण-प्राचीर का उन्मत्त सगीत है।

हम्मीर ने उसे आज्ञा दे दी।

नववधू तत्क्षण दूसरे कक्ष में चली गई।

×

×

×

प्रभात होते ही कई दास-दासियों के साथ राजा मालदेव ने भयवश हम्मीर को विदा करना चाहा। हम्मीर को प्रथा के अनुसार राजा मालदेव ने आठ जिले मगरा, सेरानला, गिरवा, गोडवाड, वाराठ, श्यालपट्टी, मेरवाडा और घाटे का चोखला दहेज में दिए।

इसी समय हम्मीर ने नि मकोच होकर दहेज में कामदार मौजीराम को माँग लिया।

दामाद को इसके लिए रुष्ट करना नहीं चाहा । उसने तुरन्त हम्मीर की माँग को मान लिया ।

राणा मालदेव ने हम्मीर को एकान्त में ले लिया और विनीत स्वर में कहा, “मेरी बेटी विधवा नहीं है ।”

हम्मीर ने तुरन्त कहा, “कैसा भी हो महाराज, अब वह मेरी पत्नी है । मैं उमका सम्मान एक महारानी-मा ही करूँगा । आप चिंता न करें ।”

हम्मीर अपने दल के साथ चलने को उद्यत हुआ । सारा कार्य सम्पन्न हो चुका था । माँ ने अपनी बेटी को अपनी ओर में विदाई दे दी थी । माँ ने अपनी बेटी को दहेज में अनेक दास-दामियाँ और धन दिया । वह अपनी बेटी को सच्चे मन से आशीर्वाद देना चाहती थी, पर नववधू ने उसके आशीर्वाद को सुनना नहीं चाहा ।

उसने जाते-जाते अपनी माँ से कहा, “तुम समझ लेना मैं अपने हाथ से अपनी बेटी को मार दिया है ।”

माँ के नेत्र भर आए पर उसने अपने हृदय का उफान हृदय में ही रहन दिया । बेटी के कथन पर न जाकर उसने मा के क्तव्य का पालन किया । उसने धीगा-धीगी बेटी को गले से लगाया और अश्रु भरी विदाई दे दी ।

द्वार विदाई का कार्यक्रम हो रहा था और उधर अनर्गमिह राणा हम्मीर को द्वार-द्वार कह रहा था कि अब जाते-जाते जालौर को विनष्ट कर दिया जाय । शत्रु पर दया और उदारता दिगाने का मतलब है अपने आपका निग्रह करना है ।

हम्मीर ने अनर्गमिह का शत्रु शब्दों में विरोध किया, ‘मैं गमान दीय कृत्य करने को तैयार नहीं हूँ । मैं जानाँस पर रक्त की एत एत भी नहीं बहने दगा ।’

अनर्गमिह क्रोधित हो गया, ‘आप मरना राजपूनी दम आर आन दान में ऐसे काम कर देने हैं जो राज्य के लिए घातक सिद्ध होते हैं ।

“राजपूतो के पराक्रम का इतिहास भी तभी तक जिन्दा है जब तक उनमें यह उदारता और शत्रु को वार-वार छोड़ने का साहस है। हमारा धर्म सबसे पहले दया करना ही सिखाता है।”

अनगसिंह का मन इस कथन के खोखलेपन से जल उठा। वह सब्यग बोला, “आपका कोई धर्म नहीं, आपका कोई कर्म नहीं। आपका अपना कुछ है तो अपना हठ, अपनी निरकुशता।”

पवनमी को अनगसिंह का यह कथन अशिष्ट लगा। वह तुनक कर बोला, “राणाजी के सामने शिष्टता का उल्लघन असह्य हो सकता है। कही तुम्हें इस अशिष्टता का दंड न मिल जाए।”

मेरा ने भी उसे डाटा।

हम्मीर ने उसे समझाया। अनगसिंह नहीं माना।

उसके जाते ही पवनसी ने सिर झुका कर कहा, “राणाजी, यह तलवार को ही जीवन की सफलता, उत्थान और सम्राट मानता है। मेरी यह राय है कि इसे किसी जंगली जानवर के सामने फेंक दिया जाय।”

“जंगली जानवर ?”

“हाँ-हाँ, किसी नौहत्ये युवक के समक्ष जो इसके अग-प्रत्यग को चूर्ण-विचूर्ण कर दे और इसकी युद्ध-पिपासा सदा सदा के लिए शांत हो जाए, अन्यथा यह कभी न कभी हमें बहुत हानि पहुँचाएगा।”

हम्मीर को पवनसी के कथन में सत्य का आभास हुआ, फिर भी वह तत्काल शांत रहा। अभी राजनैतिक परिस्थितियाँ ठीक नहीं थी, अतः किसी भी सामन्त या सरदार को रूष्ट करना उनके लिए अहित का कारण बन सकता था। हम्मीर ने सभी सामन्तों को शांत कर दिया।

वारू ने हम्मीर की आज्ञा से अपना घेरा उठा लिया। जालोर की प्रजा में छाया हुआ आतंक मिट गया। प्रजा को जब विवाह के रहस्य का ज्ञान हुआ तब यह हर्षोत्फुल होकर खुशियाँ मनाने लगी। उन्होंने भूलो और मंगल-गीतों से हम्मीर का स्वागत किया।

बेटी अपनी ससुराल चल पड़ी ।

स्त्रियो ने व्यथा भरे कठ-स्वर से विदाई गीत गाया । रानी का मन अवसाद से भर उठा, पर नववधू के ललाट पर भृकृतियाँ तनी हुई थी । उसकी बकिम-दृष्टि में रोप था, प्रतिहिंसा थी ।

जब जालोर की सीमा समाप्त होने लगी तभी एक गुप्तचर ने पवन-सी को समाचार दिया कि अनगसिंह जाता-जाता एक सामन्त की हत्या कर गया और उसकी बेटी का अपहरण कर भाग गया ।

## १५

चैत्र का नया वष लगा । नवीन वर्ष के आगमन से कैलवाडा में सघपरत राजकीय सामन्त और भील प्रजा में नए जोश और इतिहास की भावक दिखाने दी । लोग क्षण भर के लिए जीवन की सभी विपमनाओं को निस्मृत करके कुल-देवता एकलिंगेश्वर से प्रार्थना करने लगे कि यह वष हमारे लिए मंगलदायक हो ।

स्त्रियो में इस माह के आगमन पर पृथक हर्ष था । उनकी गणगौर आने वाली थी । वे भीने-रंग-विरंगे वस्त्र पहनकर पाँवों की भाँभरा को भनभनाती उधर-उधर गणगौर के उत्सव की चर्चा करने में निमग्न जान पड़ती थी ।

राजनैतिक स्थिति भी सुग्री हुई थी । युद्ध की विभीषिका का भय कम हो चला था । हर लोग हृदय को ननाने वाली आग बुझ ठंडी पड़ गई थी । साम्राज्य जनता का विद्वान्ताम था कि राजा मालदेव ने अपनी बेटी गगानी को ग्याही दे, अतः अब वे उनके साथ घात नहीं कर सकते । उनको अविनाश नग नहीं कर सकते ।

वर्षों में आन ननान प्रजा में नव-नव उत्ताम की उर्मिया का आवि-भाव हुआ । शान्तगिरि उत्पीडन का मुग की नहर मिनी । रक्त-म्यान में

आकठ हूवा जीवन क्षितिज-सागर से प्रत्युष-वेला में उदित होते भास्कर भगवान की भाँति उन्मादित और प्रमुदित होने लगा । सामान्य प्रजा ने युद्ध रूपी अजगर की विषाक्त फुत्कारों से दूषित पवन-वीचियों में अपरि-सीम सतोष की साँस ली ।

आनन्द, उत्साह और सन्तोष ।

राज्य-ज्योतिषी ने नूतन वस्त्र धारण करके राणाजी को नया पचाग भेंट करते हुए कहा—“यह वर्ष आपके लिए अति लाभदायक और शुभ होगा ।”

हम्मीर ने ज्योतिषी को दक्षिणा दी । उपस्थिति ने राणाजी की जय-जयकार की । हम्मीर ने सभी सामन्तों एवं सरदारों को पुरस्कार बाँटे । पवनसी, मेरा, अनगसिंह और कामदार मौजीराम । मौजीराम को पुरस्कार देते हुए हम्मीर ने उससे चेतावनी के स्वर में कहा, “कामदार जी, आज से इतना ही याद रखें कि अब से आप चित्तौड़ के रक्षक और हितैषी हैं । अब आप राजा मालदेव के नहीं, राणा हम्मीर के चाकर हैं । अभी से आप का कर्म-क्षेत्र होगा—चित्तौड़ की स्वाधीनता ।

मौजीराम ने अपनी तलवार की शपथ खाकर कहा, “राणाजी निश्चित रहे, इस दास का प्रत्येक पल आपके उत्थान और निर्माण में ही व्यतीत होगा । मैं वह प्राणी हूँ जो केवल अपने स्वामी का हुक्म मानना ही अपने जीवन का परम धर्म मानता है । चाहे मेरे स्वामी सदा ही क्यों न बदलते रहे ।”

तत्पश्चात् हम्मीर रानी सोनगर के कक्ष में गया । कक्ष के अग्र-प्रकोष्ठ में रानी सूर्य-देवता के समक्ष केसरिया रेशमी पावन वस्त्रों से सज्जित अर्चना-वन्दना कर रही थी । उसके घने काले दीर्घ कुन्तल कटि-प्रदेश पर फैले हुए थे । उसके सुकुमार मुख पर ओज था ।

हम्मीर विचारहीन-ता इसे कुछ देर तक देखता रहा । रानी पूजन समाप्त करके राणा के पास आई । उनकी पादुका-रज लेकर अपने ललाट पर लगाई और पूछा, “हुक्म ?”

“नया वर्ष है, यह स्वर्णभूषण भेंट करना चाहता हूँ ।”

रानी के मुख पर सूखी-बुझी मुस्कान थिरक उठी ।

हम्मीर का मस्तिष्क उसके मानस का मर्म समझ गया । रानी हीन-भावना और सस्कारों के विपुल सघर्ष में अपने आपको अत्यन्त पीड़ित कर रही है । अतः हम्मीर स्नेहसिक्त स्वर में बोला, “तुम्हें अपने अतीत को विलकुल भूल जाना चाहिए । और एक वृक्ष की नूतन कली की तरह नए जीवन में अपने आपको विस्मृत कर देना चाहिए ।”

“अपनी कायाकल्प करने की चेष्टा प्रचेष्टा मैं बहुत करती हूँ । सोचती हूँ, उस स्वामी के महान चरणों में अपना जीवन उत्सर्ग कर दूँ, उसके एक-एक पल में सावन की मस्ती भर दूँ, पर मुझसे ऐसा नहीं होता । मुझे हर घड़ी अपनी आत्मा प्रतारणा देती है । यह याद दिलाती है कि तुमने क्षत्राणी का गौरव विस्मृत करके अपने को पाप के पविल में फँसा दिया । आखिर मैं पुनः विवाहिता हूँ ।”

“तो क्या हुआ ?”

“ऐसा मैं नहीं सोच सकती ।”

“तू बड़ी भोली है ।” शगाध प्रेम से रानी को अपनी बाहुओं में ले कर हम्मीर धीरे-धीरे बोला, “तेरी आत्मा बड़ी निमल और शुद्ध है । उस पर पाप और कपट की अस्पष्ट छायाएँ तक नहीं हैं । फिर भी तुम इतनी चिन्तातुर और दुखी हो रही हो, ऐसी बात नहीं है । अपने शास्त्रों में स्त्री का दुःख विवाह होने के बाद में होता था । व्यास की मातृवती का विवाह एक बार नहीं दो बार हुआ । ऋग्वेद में भी ऐसा उल्लेख है ।—मोम ने सबसे प्रथम तुम्हें पत्नी के रूप में प्राप्त किया । तुम्हारे दमरे पति गन्धर्व हुए और तीसरे अग्नि । मनुष्य राजा तुम्हारे चौथे पति है ।—यह हमारे पावन शास्त्रों का अर्थ है । रानी ! तुम्हारा विवाह अज्ञान में हुआ है । अतः तुम सबका निर्दोष हो ।”

रानी मोनगर निम्नर रही ।

हम्मीर ने वह अनकार रानी के गले में पटना दिया ।



विस्तृत शैल-मालाओं की ओट से मरीची प्रभु ऊपर उठ आए थे । कोई भील अपना लोक-गीत गुनगुनाता हुआ मस्ती से जा रहा था । पवनसी बाहर बैठक में हम्मीर की प्रतीक्षा कर रहा था । अनगसिंह से उस का वैर वैध गया था । एक जलन होती थी अनगसिंह को देखकर । दोनों ही जाति के गौरवान्वित सामन्त । परिवारिक विद्वेष के कारण पीढ़ी-दर-पीढ़ी का वैमनस्य था ही । हम्मीर के कठोर स्वभाव के कारण दोनों बोलते नहीं थे फिर भी एक-दूसरे को नीचा दिखाने के लिए प्रयत्नशील रहते थे । चाहते थे कि दोनों में एक की समाप्ति हो जाय । पवनसी हम्मीर के हुक्म पर सर्वस्व निछावर करना चाहता था और अनग कभी-कभार हम्मीर की आज्ञा की अवज्ञा भी कर देता था । वस्तुतः उमें युद्ध में आनंद आता था । युद्ध युद्ध युद्ध । उसके मस्तिष्क में साधारण योद्धा के विपरीत युद्ध का उन्माद छा गया था । हर घड़ी और हर पल वह युद्ध के अतिरिक्त किसी की भी चर्चा नहीं करता था । जीवन में अनेक कार्य कर्तव्य थे पर अनग को किसी में कोई वास्ता नहीं । उसे केवल युद्ध की बीमत्स वार्ताओं को सुनने की इच्छा रहती थी । उसकी प्रवृत्ति में हिंसात्मक द्रोह की वृत्ति आती थी ।

उसका ज्येष्ठ पुत्र तथा पत्नी भी उससे आतंकित रहने लगी थी और वह पवनसी को देखकर उत्तेजित हो जाता था । तब वह सामंती मर्यादाओं का उल्लंघन करके पवनसी को कट्टर शत्रु की भाँति ललकारने लगता था और उसे अपमान-सूचक नामों से सम्बोधित करता था । बात-बात पर वह म्यान से अपनी तलवार निकाल लेता था और प्रहार करने को तत्पर हो जाता था । पवनसी ने कई बार उमें समझाया, उसके प्रयोजन-हीन उग्र मनोवृत्ति में परिवर्तित कराया, किन्तु अनग को बस एक ही बात की लगन थी कि पवनसी अपने धैर्य को लेकर उससे द्वन्द्व युद्ध कर ले ।

विवश हो, पवनसी ने हम्मीर के सम्मुख सभी स्थिति को रखना चाहा । कल रात्रि के समय सामंत चेतसिंह के डेरे पर पातुरों के नृत्य में अनगसिंह ने पवनसी का अपमान कर दिया । जब वह पातुर

को कुछ सिक्के देने लगा तब अनगसिंह ने उसे मना कर दिया । वह वेचारी अनगसिंह की विकराल आकृति देखकर चुप हो गई । पवनसी विष का घूट पीकर रह गया । क्रोध उसे भी बहुत आया, पर श्रेष्ठ आयोजन में व्यर्थ का रक्तपात न हो, अतः मौन रहा । लेकिन उसे समस्त रात्रि निद्रा नहीं आई । वह विचलित-सा एक-एक क्षण व्यतीत करने लगा । मनो-द्वेगों की तीव्रता के मारे कभी-कभी उसके चरण इतने शिथिल हो जाते थे जैसे उनमें जरा भी शक्ति नहीं ।

प्रभात हुआ और वह हम्मीर की सेवा में उपस्थित हुआ ।

प्रहरी द्वारा उसके आगमन के समाचार पाकर हम्मीर ने त्वरापूर्वक उसे भेट करने का आश्वासन दिया ।

मागतिक बेला में हम्मीर के कुछ कात अचना वदना में व्यतीत होते थे । वह सय देवता की प्रथम पूजा करता था और तत्पश्चात् कुल-देवता की । इन सब कामों से निवृत्त होकर वह पवनसी के पास आया ।

पवनसी न उठ कर उसके अभिवादन किया ।

हम्मीर ने गभीर मुस्कान में उसका स्वागत किया और मधुर स्वर में बोला, “आगमन का कारण ठाणुग सा ?”

पवनसी कुठ नहीं खोता । उसका मस्तक नत हो गया और नेत्रों में अवसाद की डायोण तर उठी ।

“आप चुप क्यों हैं ?”

“निवेदन है कि मैं आपके अनेक अनुग्रहों में उपरुत हूँ । आपने इस बड़े पवनसी को पवनसी का पद प्रदान कराया है । मन्त्रु आपने इस गान्धाारी और स्वामिभक्त चाकर से कहीं अनुरोध, हमारे पुत्र यह आपका प्रत्यक्ष वास्तविकता में भिन्न करना चाहता है ।” पवनसी एक पल के लिए रुका और पुनः खोता, “अनगसिंह का कारण मैं अत्यन्त पश्चित हूँ । बार-बार अपमानित पाठित होकर कहीं भी नाशिय जीवित नहीं रहा है । वस्तुतः निष्कार के विषाक्त ज्ञानावरण में वह माग जैन का आदी नहीं होता । फिर मैं कैसे यह सब सहन कर सकता हूँ कि अनगसिंह मरा

बार-बार अपमान करे और मैं मौन बैठा रहूँ ? प्रत्येक गतिविधि की एक पाराकाष्ठा होती है । आखिर मैं भी क्षत्रिय हूँ ।”

हम्मीर ने विनम्रता पूर्वक कहा, “आपका कथन औचित्य-पूर्ण है है किन्तु जो उद्भ्रात है, उसका क्या उपाय हो सकता है ?”

“यदि वह उद्भ्रात है तो उसे किसी कक्ष में बन्द कर देना चाहिए । उन्मादग्रस्त, उद्भ्रात तथा उद्दीप्त स्वभाव वाले प्राणियों को साधारण जन-जीवन में रहने का अधिकार क्यों दिया जाता है ? क्या वे जन-जीवन को आपदा में नहीं ढकेल सकते ?”

“लेकिन पवनसी आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि अभी हमारी ऐसी स्थिति नहीं है कि हम किसी सामन्त को रूढ़ करें । ऐसा करना हमारे लिए घातक सिद्ध हो सकता है ।” अपने शब्दों पर जोर देकर वह पुनः बोला, “अभी हमें वैयक्तिक रूप से न विचार कर समस्त जन्म-भूमि को लेकर सोचना चाहिए । कही ऐसा न हो कि गृह-दाह में मातृभूमि की मुक्ति ही विलीन हो जाय ।”

“मातृभूमि के लिए मैं अपने प्राण भी उत्सर्ग कर सकता हूँ राणा जी । गौरवमयी मृत्यु महाजीवन होती है । लेकिन अपमानित जीवन मृत्यु सदृश होता है और क्षत्रिय अनाहत जीवन से समादृत मृत्यु अधिक पसंद करेगा ।”

हम्मीर क्षण भर के लिए पवनसी के तमतमाए मुख को देखता रहा । उसके नेत्रों में स्फुलिंग की चमक थी । आन्तरिक व्यथा उसके युगल नेत्रों में स्पष्ट लक्षित हो रही थी ।

हम्मीर ने पवनसी को आश्वासन दिया, “भविष्य में अनर्गसिंह तुम्हें कुछ भी नहीं कहेगा ।”

पवनसी अभिवादन करके लौट आया ।

हम्मीर का आगमन या मौजीराम को ।

अपने धार्मिक अनुष्ठान से निवृत्त होकर मौजीराम ने हम्मीर के मन्त्र-गणपट्ट मे प्रवेश किया । हम्मीर अभी गपने कर्ण की स्वर्ण-वालियों को निष्प्रयोजन ही स्पष्ट तर रहा था । मौजीराम ने अभिवादन किया और हम्मीर के चिरायु होने और उसके पृथ्वी विजयी होने की कामना की ।

हम्मीर का सकेत पाकर मौजीराम कलापूरण प्रस्तर-पीठिका पर बैठ गया और हम्मीर के हृदय की पत्तीक्षा करने लगा ।

हम्मीर ने एक दीर्घ श्वास छोड़ कर कहा, “तुम अब हमारे सर्वोत्तम हो । अमात्य ही नहीं महामात्य भी तुम हो । मैं एकलिंगेश्वर का दीवाना हूँ और तुम मेरे । मुझे यह भी विश्वास है कि तुम एक स्वामि-भक्त और सच्चे भृत्य के कृत्यों में भलि-भाति परिचित होगे । नीति कहती है भृत्य वही सच्चा भृत्य है जो अपने स्वामी की अत्यन्त निष्ठा से आज्ञा पालन करे, चाहे उसके स्वामी सदा परिवर्तित क्यों न होते रहे पर भृत्य का धर्म स्वामी के प्रति शुद्ध हृदय में सेवाभाव रखना ही है ।”

मौजीराम व्यग-मिश्रित मुस्कान अपने अवरो पर विखेरता हुआ शनैः शनैः स्वर में बोला, “मैं अपने कर्तव्य और धर्म को खूब समझता हूँ । मुझ कर्तव्य विमुक्त हो कर जीवित रहने में आनन्द नहीं है । मैं यह भी जानता हूँ — मुझ चिन्ताओं को आपने हाथों सापना है । अवसर की प्रतीक्षा है । आनन्द की प्राप्ति पर चिन्ता की मुक्ति अवश्यम्भावी है ।

‘तुम्हारी गन्तव्य हममें भी अडिग भावना भरती है । लेकिन यह सब चरम तक जागा । विजया रानी के आगमन पर नीलोदिया बगल में भी क्षणिक गम-मुद्रा है । उन्हें यह कदापि पसन्द नहीं कि एक विधवा राज-कन्या उनका पालन और दय-पद तुम्हें निहासन पर विराजे । मित्तु केवल मरतम आगमन पर व नव गान है कि यह सब दबी मा बरपड़ी क

आदेशानुसार हो रहा है। देवी माँ की अवज्ञा का तात्पर्य यह है कि हमारा विनाश। और देवी माँ ने हमें पाँच सौ अश्वों की सहायता देकर हमारे सभी सरदारों को उपकृत भी कर दिया है।

मौजीराम अल्पकाल तक मौन बैठ रहा। वह हम्मीर की उद्विग्न आकृति को ध्यानपूर्वक अध्ययन कर रहा था। एक बार उमने यह भी सोचा कि वह हम्मीर के सम्मुख रानी से सम्बन्धित समस्त तथ्यों का उद्घाटन कर दे। उन्हें यह विश्वास दिला दे कि रानी विधवा नहीं है। यह केवल राजनैतिक चाल-मात्र थी। इस चाल का सूत्रधार भी स्वयं वह ही है। किंतु मौजीराम हर कर्म की प्रतिक्रिया से पूर्व परिचित रहता था। अपनी तीक्ष्ण मेधा के बल पर वह हर घटना के तुरन्त और बहुतेर से प्राप्त प्रतिफल को जान लेता था। वह यह भी समझता था कि वीर लोगो का विवेक आवेशपूर्ण और व्यग्र होता है। अविश्वास की हल्की छाया उनके विवेक पर हर घड़ी नाचती रहती है। अगर वह उन्हें कहेगा भी कि यह राजनैतिक चाल है तो भी हम्मीर उस पर विश्वास नहीं करेगा। उसकी इस बात को नई चाल ही समझेगा। सोचेगा कि उसकी राजकुमारी उपेक्षित व विस्मृत जीवन व्यतीत न करें, यह सब उसके लिए है। दूसरा, हम्मीर की मालदेव के प्रति घृणा और प्रतिशोध की भावना भी कम हो जायगी।

अभी इस कुकृत्य से यहाँ का वच्चा-वच्चा मालदेव से गहरी घृणा करता है। और तो और, स्वयं रानी जी अपने पिता से भीषण प्रतिशोध लेने के लिए तत्पर हैं। फिर इस सत्य के उद्घाटन से क्या लाभ? क्या पता कि इसी बात को लेकर कोई नई समस्या उपस्थित हो जाय।

उसका मौन हम्मीर के लिए अमह्य हो गया। हम्मीर ने ध्यान मग्न मौजीराम को कहा, “आपने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया।”

“प्रश्न का उत्तर ही सोच रहा हूँ।” राजाजी, मेरा अनुरोध है कि इस समय हमारी स्थिति सुदृढ़ नहीं है। मालदेव जालोर से विपुल नम्पत्ति चित्तौड़ भेज रहा है। चित्तौड़वासियों द्वारा असहयोग की भावना बहुत

सफल सिद्ध हुई है। भविष्य में यह आदोलन हिंसाहीन-युद्ध में अत्यन्त काम आएगा और क्रांति का अमोघ वस्त्र बन जायगा। इससे एक बात का स्पष्ट पता चलता है कि धीरे-धीरे चौहानों की शक्ति क्षीण ही होगी।”

“प्रतीक्षा की एक सीमा होती है। आखिर हम लोग कब तक पहाड़ी चूहों का जीवन व्यतीत करेंगे। इस कैंलवाडा में बैठकर हम अपने जीवन के महनी ध्येय तक नहीं पहुँच सकते।”

“मैं जानता हूँ पर इससे मुट्ठ सुरक्षा और कहाँ हो सकती है? यहाँ हमें अपनी रक्षा की चिंता नहीं। चिंता है—चित्तौड़ की मुक्ति की।” मौजीराम देर तक विचारता रहा। उसकी बड़ी-बड़ी गहरी आँखों में अतस का गभीर स्पष्टतया झलक रहा था।

“तुम क्या सोच रहे हो?” हम्मीर ने प्रश्न किया।

“चित्तौड़ की मुक्ति अब शक्ति से नहीं, नीति से ही हो सकती है। मेरा ऐसा विचार है कि कोई ऐसा अवसर आए जब हम अप्रत्याशित चित्तौड़ पर आक्रमण कर दें।”

“लेकिन चित्तौड़ के मुट्ठ द्वारों को कौन खोलेगा। गढ़ की प्राचीरों को सहजना से नहीं लाघा जा सकता है। फिर गढ़ पर्वत पर है। उसके कई द्वार हैं। निम्न पर हम चित्तौड़ के भीतरी भाग से भी परिचित नहीं हैं।

“इसकी चिन्ता आप छोड़ दीजिए।”

“क्यों?”

कृतिल मुश्किल धिक्क गई मौजीराम के अग्र पर, “आप यह जानते हैं कि मैं हर माह चित्तौड़ बहा के मैनिवा के लिए उनकी तन्मवाह कर जाता हूँ। बहा का हर अधिकारी मुझे परिचित है और मेरा गतिविधि विज्ञान भी करने है। बहाचित्त मुझे दखकर वे सब विज्ञान कर रहे हैं।

“लेकिन अब वे सभी यह जानते हैं कि आप हमारे चाकर हैं। भना

मालदेव का बेटा जैसा आपका क्यों विश्वास करने लगेगा ?”

“जैसा मेरा अविश्वास नहीं कर सकता । फिर जो व्यक्ति आजकल उनके लिए तनख्वाह लेकर आता होगा, मैं उसी को अपना बना लूंगा । अगर अवसर मिल गया तो हम उसकी हत्या भी कर सकते हैं और राजा मालदेव का प्रवेश का आज्ञा-पत्र भी प्राप्त कर सकते हैं ।”

“खूब, मौजीराम खूब । यह काम बड़ी सहजता से किया जा सकता है ।”

“शीघ्रता की आवश्यकता नहीं । आप चित्तौड़ तक पहुँचेंगे कैसे ? मुझे वहाँ तक पहुँचने का कारण चाहिए ।”

“कारण क्या हो सकता है ?”

“विचारणीय है ।”

दोनों मौन हो गए ।

सूर्य देवता शृंग-श्रेणियों को स्पर्श करके वातायन द्वारा उन दोनों के मन्त्रिकट अठखेलियाँ करने लग गया था । सूर्य के पूर्वी ओर मेघ का बड़ा खण्ड अपनी काया को विस्तृत कर रहा था । लगता था कि बूँदा-बूँदी न हो जाय ।

रसोई से एक दासी आई । हम्मीर के दुग्धपान का समय हो गया था । हम्मीर दासी के आगमन का हेतु समझ गया । उसको जाने का संकेत करके वह बोला, “हाँ मैं अभी आ रहा हूँ ।”

दासी चली गई ।

हम्मीर ने कहा, “एक समस्या का और समाधान चाहता हूँ ।”

“फरमाइये महाराज ।”

“इस अनर्गसिंह ने सबको तग कर रखा है । उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह यह युद्ध-युद्ध चिल्लाता रहता है । उसे अपनी शक्ति पर इतना अभिमान हो गया है कि वह प्रत्येक सरदार का अपमान कर देता है । यह अक्षम्य और अशांति का प्रतीक है । हम उसे स्पष्ट कहना भी नहीं चाहते और उसे उचित पथ पर लाना भी चाहते हैं ।”

“यह साधारण बात है।”

“कैसे ?”

“इसे थोड़े से सैनिक देकर कह दिया जाय कि वह शत्रुओं के साथी एवं समयों को लूटना आरम्भ कर दे। वह उन सामन्तों से छुप कर लड़े जो आपकी आधीनता स्वीकार नहीं करते हैं। ऐसा करने से उसकी शक्ति का सही रूप से उपभोग हो जायगा तथा आपकी हर घड़ी की चिन्ता भी मिट जायगी।”

मौजीराम भी यह बात हम्मीर को बहुत पसन्द आई। उसने तुरन्त एक प्रहरी को अनगमिह के घर भेजा। मौजीराम चला गया था। हम्मीर अपने काम में चिन्तानुरव अवशायित था। चाचा की अतिम इच्छा उसे क्षण भर के लिए मृत्यु की साँस नहीं लेने देती थी। हर घड़ी उसके रक्षक चित्तौड़ की मुक्ति का प्रश्न नाचा करता था।

दासी ने शायर उसे सूचना दी कि ठाकुर अनगमिह जी मन्त्रणाश्रम में आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम्मीर तुरन्त वहाँ गया। ठाकुर ने अपने स्वामी का आदर सहित अभिवादन किया। पूछा, “हुकम राणाजी ?”

हम्मीर आदवस्त होकर बैठ गया। उसे भी बैठने का मकेत मिला। अनगमिह की विज्ञाप देते उस प्रस्तर पीठिका में नहीं समा सकी जिस पर मौजीराम बैठा था। अतः अनगमिह एक पाषाण चाकी पर बैठ गया।

तुम्हें युद्ध में आनन्द आता है। तुम्हारे जीवन का सर्वोपरि मूल्य युद्ध है। तुम चाहते हो कि मैं युद्ध के गरव और निनादा के मध्य लो जाऊँ ? या तो मैं जीवन व्यतीत करने जाऊँ तुम्हारी शक्ति में का पुष्प हानि है। अतः मैं तुम्हें एक निम्नवाणी माप रहा हूँ।”

तुम्हें जीवन मापनी की ?”

तुम यह प्रश्न तब तक समझते हो कि धन के विना क्या मानी शक्ति को मुक्त रूप में उपयोग करने में सक्षम समझते हो रहे ?।



चौहानों के निरंकुश सैनिक हमारी प्रजा पर अत्याचार करते हैं, इसलिए हमने यह निश्चय किया है कि तुम्हें कुछ सैनिकों का नेता बनाकर शत्रुओं से लोहा लेने के लिए भेज दें। इससे तुम्हारी युद्ध पिपासा को शमन मिलेगा तथा तुम्हारी क्षीण होती शक्ति को सही पथ मिलेगा।”

अनर्गसिंह ने विचित्र भाव-भंगिमा से निर्जीव प्राचीर को देखा। हम्मीर उसकी इस विचित्र दृष्टि का तात्पर्य नहीं समझ सका। इसके अतिरिक्त जब अनर्गसिंह के अवरो पर अर्थ-भरी मुस्कान देखी तब उसके मन की जिज्ञासा बढ़ गई।

“तुमने उत्तर नहीं दिया।”

“राणा जी आपका हुक्म सिर-आँखों पर। किन्तु इतना निवेदन है कि आप मेरी शक्ति को युद्ध में व्यस्त करके क्षीण करना चाहते हैं सो वह क्षीण नहीं होगी। वह युद्ध में और उन्मत्त होगी, और सबल होगी, और निश्चक होगी। जिस व्यक्ति को युद्ध में आनन्द, मृत्यु में हर्ष और चीत्कारों में संगीत की स्वर लहरी सुनाई पड़ती है, उस व्यक्ति को आप इस तरह क्षीण और दुर्बल नहीं कर सकते। उसे वस्तुतः आप क्षीण करना चाहते हैं तो किसी काल-कोठरी में बन्द कर दीजिए। घोर एकांत और नीरवता मुझे स्वतः ही क्षीण कर देगी।” अनर्गसिंह के स्वर में तनिक व्यथा का समावेश हो गया, “अगर आपने मेरे बल को क्षीण करने के लिए यह प्रपञ्च रचा है तो मुझे हार्दिक सताप है। अगर राणा जी को मेरी युद्ध की प्रवृत्ति से किसी तरह की शका है तो मैं अपने हर्षोल्लास को समाप्त करके उनके चरणों में अपना जीवन अर्पण कर दूँगा। राणा जी मुझे पतित न समझें। पवनमी से मेरी कोई शत्रुता नहीं है, फिर भी न जाने क्यों मेरा विवेक उसे देखकर वाचाल हो जाता है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि वह मेरा प्रतिद्वन्द्वी है। एक अनावश्यक जलन है उसके प्रति मेरे मन में। किन्तु इसका अर्थ आप यह नहीं लगा सकते कि मैं मेवाड़ का अहित चाहता हूँ। मैं राणा जी की वेदना से अनभिज्ञ नहीं हूँ। स्वभावजनित दुर्गुणों के कारण मैं आपको

पीडित अवश्य करता हूँ किन्तु जहाँ देश की मुक्ति का प्रश्न है वहाँ अनगसिंह अपने सिर को हथेली पर रखे हुए रहता है।”

हम्मीर भावविभूत हो गया। अपनी दुर्भावना उसे तडपा गई। वह अनगसिंह के विशाल पुष्ट कन्धों को मजबूती से पकड़ता हुआ बोला, “नहीं ठाकुर, नहीं। ऐसा हीन विचार मेरे मन में नहीं आ सकता। पूर्व कथन में मेरी दुरभावना नहीं थी। शब्द का रूढ़ अर्थ मत लगाओ। मैंने तुम्हें शत्रुओं के दमन हेतु ही यह काय भार सौंपा है। मैं चाहता हूँ कि तुम अजातशत्रु बन जाओ। अपनी अजेय शक्ति से चौहानों के दाँत खट्टे कर दो। इतना परेशान कर दो कि वे विचलित हो उठें।”

“ऐसा ही होगा। आपकी आज्ञा को शिरोधार्य मान कर मैं शत्रुओं को छल-बल और कौशल में आघात पर आघात पहुँचाता जाऊँगा।”

“ठाकुर! तुम चित्तौड़ के वीर-शिरोमणि हो। तुम्हारे ही बल बूते पर हम राणा बने हुए हैं। क्या अच्छा होता कि तुम में युद्ध की प्रवृत्ति कुछ कम होती और तुम शांति से, नीति से, किसी समस्या का समाधान ढूँढ़ते।”

‘हर मनुष्य की अपनी पृथक् मान्यता होती है। मान्यता के विपरीत चलना उसकी अडिगता और व्यक्तित्व की निबन्धता सूचित करती है, अतः हमने तब तक मुझे विवश न करें। मैं शुभ-मुहूर्त में चुन हुए वीरों को तब तक यत्न-तन्त्र-मन्त्र नहीं जाऊँगा।’

अप्रत्यागित किसी नारी का रुठ स्वर मुनाई पड़ा—

आन धरे माम् कहे, हरख अचाणन काय  
नह ननवा हुन, पत मगवा जाय

तुम मरिषा हिन देख, हार्यो ननु मना  
मा नह हार्यो ननमद, ननरी हार्यो आन ।

घरती के गीतो को । यहाँ की नारी-जाति की महानता को । सास कह रही है कि आज मुझे अचानक हर्ष क्यों हो गया । क्योंकि आज उसकी पुत्र वधू सती होने को तत्पर हो रही है और उसका वेटा समर-भूमि में लड़ने को जा रहा है । वेटा देश के लिए मर मिटा, कुल में, समाज में आनन्द मनाया जा रहा है । और माँ ! कुछ न पूछो, वह पुत्र को उत्पन्न करके इतनी प्रसन्न नहीं हुई जितनी उसकी मृत्यु पर हुई है । और आपके इस सेवक ने जीवन में मृत्यु के आर्लिगन के गीत भी सुने हैं । समर के तूर्यनाद और मारू राग का उसने जीवन भर रसास्वादन किया है । उसके अग-अग में जूझने की मनोकामना बस गई है । अब उसे कुछ भी कहना व्यर्थ है । इसके लिए मैं आपसे क्षमा भी चाहता हूँ ।”

हम्मीर ने पश्चाताप भरे स्वर में कहा, “मुझे दुख है कि मैंने तुमारे हृदय पर आघात पहुँचाया । अब तुम जा सकते हो । मैं शीघ्र ही तुम्हारे प्रस्थान का प्रबन्ध करूँगा ।”

हम्मीर अपने विश्रामगृह में आया ।

अनग पर निराधार आक्षेप लगा कर उसने ठीक नहीं किया, किन्तु इससे एक बात स्पष्ट हो गई कि अनग के मन में किसी प्रकार की दुर्भावना नहीं है । उसके मन की गहराइयों के सत्यासत्यो से वह परिचित हो गया । इस वार्तालाप से यह स्पष्ट हो गया कि उसके मन में कोई कलुष नहीं है । अपनी वीरता का उसे तनिक भी दम नहीं । वह सगठन की भावना से परे व्यक्ति की महानता को ही मानता है और उसमें ही निमग्न रहता है । वह प्राण प्रण से उसका तावेदार है ।

पायलिया गीत गाती हुई राणी उसके वक्ष में आई ।

हम्मीर ने अपने गम्भीर नयन उठाए ।

नेत्राम्बु से रक्तिम हुए कपोल, उन्मत्त मुख और उस पर उन्मत्त यौवन का आकर्षण । पाषाण-प्रतिमा सी वह खड़ी हो गई ।

“क्या बात है राणी ?”

“कुछ नहीं ।”

“तुम उदास होकर मेरी व्यथा को बढ़ा देती हो । क्यों नहीं तुम उत्फुल पारिजात की सदृश हास्य विखेरती । सर्वांग सुन्दरी सिसौदिया-कुल महिमा गरिमा तुम अपनी रोनी सूरत से मुझे निरुत्साहित करती रही तो फिर चित्तौड़ की मुक्ति अन्वरे में जुगुन की तरह क्षणिक आभा दिखाएगी और लुप्त हो जायगी । मैं तुम्हारी वेदना में अपनी समस्त प्रेरणाओं को समाप्त कर दूँगा । क्योंकि मुझे तुम्हारे मुख पर मधुर मुस्कान और दृष्टि में नवजीवन का आह्वान चाहिए ।

महाराणी ने हम्मीर के चरण स्पश करके कहा, “दासी को क्षमा कीजिए नाथ । आज मैं मोलह शृगार कर रही थी । समीप खड़ी थी विधवा दासी जमना । सूना ललाट और सूनी माग । पता नहीं, मेरी भावना क्यों बदल गई । दपण में अपना मुख देख रही थी । अपने अपरिसीम यौवनाभिमुख रूप पर स्वयं मुग्ध थी । सम्मोहनमयी सी, स्तब्ध सी खड़ी थी । अप्रत्याशित अपने रूप को विरूप होते देखा । लगा कि यह शृगार और मज्जा एक आवरण मात्र है । मूल सत्य है—वैधव्य । जमना का भेष । वस मैं आवाक् हो गई । विस्मृति के गह्वर में सुसप्त स्मृतियाँ मजग हो उठी और एक काल्पनिक मन्त्रिण क्या मेरे मानस पटल पर घूम गई । एक छोटी सी गुटिया है, उसमें खेल चन्द्र आदमी मन उहाना है, आमोद-प्रमोद के लिए वे उसका विवाह कर देते हैं और उचारी गुटिया मदा-मदा के लिए पराई हो जाती है । फिर उसका गुला भर जाता है । गुटिया का अशेष मन मृत्यु के रहस्य को नहीं समझ पाता । धीरे-धीरे वह मर कुद भूत जाती है । उसका विवाह फिर हो जाता है । नाथ ! इसमें उस गुटिया का क्या अपराध है ?”

राणी । असल मन में सभी गमाओं को निकाल दो । मैं तुम्हें उतनी ही पवित्र मानता हूँ, जितनी अग्नि है । व्यर्थ में दुःखामनाओं द्वारा आत्मपीडन का नाम देना ठीक नहीं है ।”

मन की नाव चेष्टा करती है । लेकिन आपने आनिर्गत में

आवद्ध होते ऐसा प्रतीत होता है कि मैं कोई पाप कर रही हूँ ।”

“छि-छि, यह वचन है । यह सब निरर्थक विचार हैं ।” हम्मीर ने उसको अपनी बाहुओं में आवेष्टित करके कहा, “तुम मंगलमुखी हो । तुम्हारा आगमन यहाँ के लिए शुभ होगा । अरे, आज मैं तुम्हारे लिए हिरन मारकर लाऊँगा । हिरन का मांस बड़ा स्वादिष्ट होता है ।”

राणी ने रोमांचित दृष्टि से हम्मीर को देखा ।

“मुस्कराओगी नहीं, रानी ! विधाता का सौन्दर्य भण्डार विराट है । उस भण्डार का शेष आता ही नहीं । फिर भी उस भण्डार की जो अपूर्व सौन्दर्य-राशि थी, उस राशि से तुम्हारी रचना हुई है । तुम्हारे सामीप्य भाग से मेरे हृदय में असयम का अहर्निश ताण्डव होने लगता है और तुम्हारी ईषत मुस्कान के लिए मेरे प्राण उत्सर्ग होने के लिए व्याकुल हो जाते हैं ।” उसका स्वर बदल गया, “मैं मिथ्या भाषण नहीं करता । मैं शत-शत जन्मों में भी तुम्हारी कामना करूँगा । तुम्हारे पावन मुखरित यौवन को अपने प्रेम का आदर्श मानकर जीवन को सार्थक करूँगा ।”

राणी अनिमेष नयनों से साभिलाष होकर हम्मीर को देख रही थी । निश्चय ही वह उसे दुर्वार भावना से प्रेम करता है । उसकी कामना में एक तारुण्य की उत्तेजना और तीव्रता है । वह चित्र लिखित-सी हम्मीर की अकशायिनी होने लगी । उसका समस्त गात चंचल हो उठा ।

हम्मीर ने स्नेहिल स्वर में कहा, “राणी ! अतीत की सम्पूर्ण रूप से विस्मृति ही नवीन की आधार-शिला है । व्यतीत से आक्रांत होकर प्रकृति जनित सुखों की उपलब्धि न करना और अथहीन आत्म-पीडा में जलना तनिक भी श्रेयस्कर नहीं । केवल आत्म-वचना है । केवल स्वयं से छल है । फिर हम आस्तिक हैं । हम किसी कृत्य को ईश्वर के सकेत द्वारा पूर्ण होना मानते हैं । हम कण-कण और अणु-अणु को उसी विधाता की शक्ति स्वीकार करते हैं । जब मेरा और तुम्हारा गठवधन ईश्वरीय इच्छा से हुआ है तब हमें उसके लिए चिन्ता नहीं करनी

चाहिए ।”

राणी ने सजल नेत्रों से हम्मीर को देखा । उसकी मुखाकृति की उदासी कम होती गई । धीरे-धीरे वह हम्मीर की बातों में खो गई ।

---

१७

इत्र के दीपक के समीप शलभ मँडरा रहा था । पवन का मथर मन्यर भोका दीप की तौ को विकम्पित करके राणी के मन में कम्पित उद्वग की सजना कर रहा था । अप्रत्याशित शरत्कालीन शुभ्र मेघों में साँदामिनी रूपी हँसी बिखरी । राणी ने उठकर बाहर की ओर भागा । घोर तिमिर का भयंकर आवरण छाय़ा हुआ था । उस तिमिर को और भी गाम्भीर्य प्रदान कर रहा था वहाँ का सन्नाटा ।

राणी ने अपनी दामी को पुकारा । नतमस्तक दामी खड़ी हो गई ।

‘दीवाने जी कब पधारेंगे ?’

“मुझे पता नहीं राणी सा ।”

‘भीत्र पता लगाकर आओ ।’

“दामी चली । त्वरा से पुन लौटी ।

‘दीवाने जी पधार रहे हैं ।’

हीरक और नक्कासीदार हार । पाँवों में नूपुर । अघरो पर ताम्बुल की मनोहारी अरुणिमा । खजन से नयनों में अजन का आकर्षण । भाल पर चन्द्र-विन्दु और सीमन्त-रेख में सिन्दूर ।

हम्मीर ने शयन-कक्ष में प्रवेश किया ।

“ओह, यह रूप !”

राणी सकोच से सिहर उठी । उसने अपने युग्म कर कमलों में अपने मुख-मधुप को आच्छन्न कर लिया ।

अपने अन्तस के विपुल वेग को सयत करके हम्मीर ने क्षीण स्वर में कहा, “बदली का चन्द्र अधिक सुन्दर और उन्मादक होता है ।”

राणी लाड और सकोच से अपने आप में सिमट कर होलिए (पलग) के एक कोने में बैठ गई । नूपुर मद-मद भन-भन कर झकृत कर उठे । हम्मीर मादक मुस्कान लेकर उमकी ओर अग्रसर हुए ।

धूँधट में रानी ने अपनी पलकें उठाई और फिर वन्द कर ली । हम्मीर ने मुस्करा कर कहा, “राणी ! हमें ताम्बुल नहीं खिलाओगी ।”

कह कर हम्मीर ने समीप रखे रजत दीवट पर रखे दीपक को और ज्वलित कर दिया । सारी शय्या दुग्ध धवल प्रच्छदपट (चादर) से आच्छादित थी । राणी का मुख ज्वलित आभा-सा मुखर हो उठा ।

“सकोच और लज्जा में तुम्हारा रूप और निखर उठा है । सचमुच सकोच सौन्दर्य को वृद्ध करता है और उसकी श्री का अलंकार बन जाता है । चलो हमें ताम्बुल दो ।”

राणी ने लघु रजत थाल पर ताम्बुल रखकर हम्मीर को दिए । ताम्बुल को चवाकर हम्मीर बोला, “राणी ! आज क्या बात है ! आज तुम सगेवर में खिली कमलिनी की सदृश लग रही हो ?”

राणी ने पतद्ग्रह (पीकदान) हम्मीर के समीप रख दिया । उसने शयदान लेकर हम्मीर के वस्त्रों को सुगन्धित किया ।

हम्मीर ने उसे अपने सन्निकट खींच कर कहा, “तुम आज सचमुच चर्वंसी बन गई हो । सच-सच कहो राणी, क्या बात है ?”

राणी विमुग्ध-सी अनै-अनै बोली । वह अपने घूँघट-पट को आहिस्ते आहिस्ते उठा रही थी, मानो घटा से आछन्न चंद्रमा बाहर निकल रहा हो और उसकी प्रभा से जिस तरह मसार आलोकित होता है, उसी तरह राणी के आलोकित रूप से विकीर्ण अदृश्य रश्मियों से वह कक्ष जगमगा उठा ।

“आप जानते हैं । बहुत पुरानी कथा है । धरित्री के कलुषित भाग पर एक उपेक्षित और अभागी राजकुमारी रहती थी । विधाता के प्रकोप से वह शैशव से ही अभिशप्त थी । उसका जीवन हर पल जलने वाला अगारा था । आश्चर्य की बात इस पर यह थी कि वह यह भी नहीं जानती थी कि आखिर उसका दोष क्या है ? वह अन्य युवतियों के साथ सम्मिलित होकर आमोद-प्रमोद में तन्मय रहती थी । उसका स्वाभाविक कायिक विकास हुआ । तब उसका प्रेम एक अपरिचित साथवाह से हो गया है । वह सार्थवाह के लिए हर घड़ी बेचैन रहा करती थी । हाट के पूर्वी ओर एक लघु वीथिका थी, उस वीथिका के पास एक प्राचीन खँडहर था । वह सडहर उनके अभिसार का स्थान हो गया । वह वियोगिनी-सी उन्मत्त और सतप्त होकर उसके चंद घड़ी का वियोग सहती थी । उन घटियों में उसका मुख मुरभाए फूल की तरह अनामपक और रम्य-सा पीतवर्ण हो जाता था । लेकिन ज्यों ही वह अपने प्रेमी को देखती न्या ही उसके अग अग में विद्युत्-सी चपल चंचल स्फूर्ति नाच उठती थी । उसकी आँखें आनंद में प्रदीप्त हो जाती थी । चित्र प्रमत्तता की अनिरेक में गद्-गद् हो उठता था । वे दोनों



कूल आचरण करके महोपाप किया है और साथ में उससे उम रहस्य को छिपा रख कर उसने उसके मन के शेष स्नेह को भी समाप्त कर दिया है। अब बेचारी वह हतभागिनी उन्मादित हो गई। वह उस आघात को नहीं सह सकी। विक्षिप्ता-सी भटकने लगी और एक दिन ममस्त सृष्टि की घृणा, उपेक्षा और दुत्कारों ने उसे आत्महत्या के लिए विवश कर दिया। उसने अपनी इह-लीला समाप्त कर दी। सार्थवाह ने सात्वना की साँस ली। समाज ने गौरव में मस्तक ऊँचा किया और धर्म नृत्य के भेप में उल्लसित हो गया। लेकिन क्या वह दोषी थी? उसका अज्ञान क्षम्य नहीं था ?”

हम्मीर ने कहा, ‘मैं वह सार्थवाह होता तो मैं उस प्रेमोन्मत युवती को अपने हृदय-सिंहासन पर बिठाता। यदि राजकुल इसे राज्य नियम के विरुद्ध बनाते तो मैं उसके लिए राज्य-सिंहासन और राज-मुकुट को सह्य त्याग देता और उसे अपनी पलकों में बिठाकर सुदूर किसी ऐसे प्रदेश में चला जाता, जहाँ वह और हम शांति और सुख से रहते। वहाँ मैं उसकी और अपनी सन्तान को पाल कर उसे एक महान ओजस्वी और मेधावी घोड़ा बनाता।”

राणी के मुख पर उज्ज्वल कमनीयता दीप्त हो उठी। उसकी दृष्टि में भक्ति-जनित पावन श्रद्धा ने जन्म लिया। वह हम्मीर के पार्श्व में शायित होकर हल्के स्वर में बोली, “चित्तौड़ की मुक्ति मेरे जीवन का उद्देश्य है।”

“तुम चिन्ता क्यों करती हो? वरवही देवी माँ के कथन के अनुसार तुम्हारा आगमन दुःख है।”

“दीवानी जी ?”

“क्या है ?”

“कुछ नहीं ?” मधुर स्मिति थिरक उठी रानी के अधरो पर।

“स्मित रेखा कह रही है कि कोई रहस्य है।”

मादक अँगड़ाई के साथ राणी ने करवट बदली। उसका उत्तरीय

कटिप्रदेश को स्पर्श करता हुआ एक ओर हो गया ।

“क्या बात है राणी ?”

“बात, बात कुछ भी नहीं ।”

हम्मीर ने गंभीर होकर पूछा, “नारी-सुलभ स्वभाव गोपनीयता का आदी नहीं है । क्यों मुझे अवश करती हो ?”

राणी की मृणाल मय मृदुल उँगलियाँ हम्मीर के अस्त-व्यस्त कुन्तलो में उलझने लगी । उसने पुनः भेद-भरी मन्द स्मित के साथ देखा ।

“तुम्हारा अन्तर्जगत अत्यन्त निमल है । वह पर पीडन से सदा विरुद्ध है फिर मुझे जिज्ञासा के गोपन को जानने की पीडा क्यों ? सीमाहीन अधीरता भी पीडा-दायक बन जाती है ।”

“स्त्री की रचना विविध तरह से हुई है । वह आनन्द का शुभ सवाद भी सकोच के कारण नहीं सुना सकती । मच मुझे लाज आती है ।”

‘ फिर कोई कहानी कह दो ।’

हाँ हाँ यह ठीक है ।’ चपलता से राणी बैठ गई ।

बोली, ‘नवोदित दयन श्री श्री भाति एक अपरिचित वन बग्या ने किसी हठीले राजकुमार के प्रणय निवेदन में प्रत्यक्ष उममें परिणय कर उस अवयवी राजकुमार के साथ अपनी समुत्पन्न गार्द । उमरा ममार मधुमय हो गया । वह उषा पात्र प्रेम में गायुत्री मुक्त समीर की तरह विचरने लगती है । उस हर क्षण का जीवन होता जाता है उसके अन्तरात्मा में समाहित हो जाता है । उसके अन्तरात्मा में गया प्रेमी के प्रति एक उत्तम भावना है । जिसने जान लिया है कि साहस भी कुछ बदल नहीं पाता । जिसने पण्य उमरा ने ही कारण हो जाता । उमरा ने । और मुक्ति पुनः हो गई । अब, वह प्रेमी की भाति गाते और विचरने लगती है ।

हम्मीर आश्चर्य में कुछ सोच नहीं पाता । उस अन्तर्जगत की भावना आनन्द की अतिरिक्तता के कारण राणी का रूप कारण बनने में समर्थ होती है । उसने ही कहा था “वह मेरी है”

राणी का आह्लादकारक मुख लाल आभा से आभासित हो उठा । नेत्र नत हो गए और उसने अपने मुख पर धूँघट डाल कर इतना ही कहा, “यह कहानी है नाथ, यह कहानी है ।”

सगीत भक्त होकर शाश्वत सुख की सर्जना करता है, ठीक उसी प्रकार हम्मीर ने अत्यन्त सुकुमारता से कहा, “कौन तुम्हें अमंगल-सूचक कहता है ? तुम महादेवी की तरह पवित्र और शुभ हो । मेवाड की राज-माता और सिमौदिया-कुल-ललना ।”

---

१८

प्रातः काल सूर्य के प्रथम दर्शन के पश्चात् हम्मीर पुनः शयनकक्ष में गए । धवल उज्ज्वल प्रच्छदपट (चादर) पर राणी सोई हुई थी । निद्रा में उसकी तन्वी अग-लता भीने वस्त्रों में बड़ी मनोहारी लग रही थी । अविकसित पलक-प्रभून अपनी प्रभा-श्री बिखेर रहे थे । स्वाभाविक सुख-मय प्राणी सी वह मुस्कुरा रही थी ।

हम्मीर ने दासी को पुकारा ।

दासी ने आकर कहा, “बडो हुक्म ।”

हम्मीर ने कहा, “राणी सा जव जागे तब हमारा उन्हें प्रणाम कह देना ।” दासी ने उन्हें अर्ध-भरी दृष्टि से देखा पर वह इस प्रभात प्रणाम का रहस्य नहीं जान पाई ।

मन्त्रणागृह में पहुँचते ही उसने मौजीराम को यह शुभ-संवाद सुनाया । मौजीराम के अधरो पर सदा की तरह वही रहस्य भरी मुस्कान धावित हो गई । अपने नेत्रों को ऊपर की ओर उठाकर वह बोला, “विजय-श्री स्वयं हमारे पास आ रही है । शुभ लक्षण शुभ लक्षण ।”

“हाँ मौजीराम, शुभ लक्षण है । लेकिन मैं जब तक मालदेव से अपने पूर्वजों का प्रतिशोध नहीं लूँगा, तब तक मुझे चैन नहीं पड़ेगा ।”

“प्रतिशोध । दीवाण जी, वह देखिए, नया सूर्य । आप समझते हैं कि क्या हम सदा यही पवत मालाओं पर पड़े रहेंगे । अब मैं एक बार फिर असहयोग आन्दोलन को समाप्त करता हूँ ?”

“क्यों ?”

“एक नई चाल चलने के लिए ।”

“मैं आपसे सहमत नहीं हूँ । मैं इस आन्दोलन को और बल दूंगा । घर-घर में शखनाद फूकूंगा कि अपने प्राण दो पर सहयोग न दो ।”

“लेकिन उममें शत्रु भावधान हो जायगा । वह सुख में प्रमादित नहीं होगा और इससे हमारी नीति असफल सिद्ध हो सकती है ।”

हम्मीर ने अपनी पेंनी दृष्टि मौजीराम पर डाली । विह्वल होकर वह बोला, ‘नहीं कामदार मैं एक बार उत्पात मचाना चाहता हूँ । असहयोग और वह अनर्गमिह द्वारा । मैं चाहूंगा कि एक बार जेमा, हरिमिह और अन्य चौहान बाँखला उठें । तब आप उनके पास जाएँ और उनसे क्षमा-याचना करके उन्हें वनराशि भेड़ करे और यह भी प्रार्थना करें कि हम्मीर को अपने दुष्कृत्या पर पश्चानाप है । और और ?”

आ रही थी ।

जीवन ने सब वस्तुओं को हम्मीर के चरणों में अर्पण करते हुए कहा, “पिताजी ने आपको अपनी यह पहली सौगात भेजी है । यह सिर देश-द्रोही महीपसिंह का है । यह गुप्तरूप से उस बात का प्रचार कर रहा था कि हम्मीर डम सिंहासन का वास्तविक अधिकारी नहीं है । वह सामन्त है । उसने एक विधवा से व्याह करके सूर्यवशियों की मान-मर्यादा को भग किया है । वह नृशंस और निरकुश है । पिताजी ने उसे द्वन्द के लिए ललकारा । बड़ा घमासान द्वन्द्व युद्ध हुआ । पिताजी को कई सख्त चोटें आईं लेकिन महीप उसके वार में नहीं बचा ।

रक्त-स्नात सिर सौगात की वस्तु की तरह हम्मीर के समक्ष पड़ा था । मौजीराम ने तीर्थंकर की अभ्यर्थना की । स्वयं हम्मीर चंद क्षण निश्चल बैठा रहा । फिर वह बोला, “उसे कहना कि दीवाणजी ने उसे रक्त-पात करने के लिए मना किया है । नहीं-नहीं, ऐसा मत कहना, उसे हमारी ओर से धन्यवाद कहना । उसे कहना कि मैं उसके कार्यों से बड़ा ही प्रसन्न हूँ ।”

जीवन चला गया ।

मौजीराम ने कहा, “राक्षसी वृत्ति मानवीयता के लिए घातक सिद्ध होती है । आप अनर्गसिंह को अधिकार में क्यों नहीं रखते । मुझे इस बात का डर है कि कहीं वहाँ विद्रोही नहीं बन जाय ।”

“यह संभव नहीं है ।”

“संभव, असंभव पर मत जाइए । मनुष्य की मनोवृत्ति को देखिए । आवश्यकता से अधिक अधिकार प्राणी को पथ-विमुख कर देते हैं । फिर व्यर्थ की हिंसा विवेक-शीलो का काम नहीं ।”

“तुम चिंता न करो । हम्मीर इतना भोला नहीं है । यह हर समस्या का समाधान भी जानता है । हमारे पास योद्धाओं का अभाव नहीं । यदि अनर्गसिंह ने कहीं भी कदम गलत उठाया तो मैं पवनसी से द्वन्द्व करा दूंगा और पवनसी अनर्गसिंह को समाप्त किए बिना नहीं रहेगा ।

पवनसी के कुशल हाथ कभी भी धोखा नहीं खाते ।”

“अगर परीणाम उसके विपरीत हो गया तो ?”

“अनर्गमिह पर दोष लगाकर उसे बन्दी बनाया जा सकता है ।”

मौजीराम के अधर पर वही रहस्य भरी मुस्कान नाच उठी ।

वह बोला, “दोपहर के विश्राम के बाद आपके समक्ष प्रजा द्वारा आल्प वचन योजना के अतगन दिया हुआ धन प्रस्तुत किया जायगा ।”

हम्मीर अपने शयनवक्ष में चला गया । तीन दासियों उसे पखा भल रही थी राणी उसके चरणों में दवा रही थी ।

हम्मीर ने कहा, अरे तुम यह क्यों कर रही हो । जाओ तुम विश्राम करो । तुम्हें अब जरा भी कष्ट नहीं उठाना चाहिए ।

“वस रहने दीजिए । वह मादक कटाक्ष से बोली ।

धीरे-धीरे हम्मीर की आँखों में नींद घुलने लगी । राणी अपने आप में तन्मय हो गई —

‘म्हानें रातया नींद नई आवैं

मुपने में म्हानें टेटे वादीलो भरतार जी

गीत की स्वर लहरी धिरजती ही रही ।

भीलो के कन्धों पर धनुष बाण भी थे ।

देखते-देखते देश भक्त प्रजा ने धन का अम्बार लगा दिया । भीलों ने अपने कठोर श्रम द्वारा प्राप्त सारा धन हम्मीर के चरणों में रखकर कहा कि आप चित्तौड़ को मुक्त कराएं । हर मेवाड़ी की यही आवाज थी । मालदेव के अत्याचारों और यवन नैनिकों की धींगा-धींगी से प्रजा आतंकित थी ।

तभी अनर्गसिंह आ गया । उसका अप्रत्याशित आगमन सब को आश्चर्य-चकित करने वाला था । वह विशाल और विचित्र वीर राणा के चरणों में नत नस्तक होकर बैठ गया ।

हम्मीर ने उसकी आवभगत की । बोला, “क्या बात है अनग ?”

“युद्ध की घोषणा कर दीजिए ।”

“समय आ चुका है ।”

“कब आक्रमण होगा ?”

“तिथि निश्चित नहीं है ।’ अभी थोड़ा धैर्य रखो ।’

“प्रजा में अभी तीव्र असंतोष है । इस तीव्र असंतोष का एक फल यही हो सकता है कि हम इन अमृतुष्ट मानवों को सभ्राम भूमि में उतार दें । ये जुझार बन जाएंगे ।”

मजीराम ने अनर्गसिंह की वार्ता में अवरोध उत्पन्न किया, “ठाकुर सा ! शाही सेना का समर्थन प्राप्त करने वालों में युद्ध होना सहज नहीं ।”

“कामदार जी, यह धन पड़ा है । ये मिक्के पत्ते हैं, इन्हें गिनिए । युद्ध की चर्चा आपको शोभा नहीं देती ।”

हम्मीर ने उत्तेजित होकर कहा, “अनर्गसिंह मर्यादा का उल्लंघन उचित नहीं । अपने आपको इतना चतुर और बलवान न समझो कि तुम्हारा प्रतिद्वन्दी जन्मा ही नहीं है । अपनी इस अग्रिमृत्ता की इनसे क्षमा-याचना करो ।”

अनर्गसिंह की लाल-लाल आँखों से अगार वरस पड़े ।

पवन सी का हाथ खडग पर चला गया ।

“हमारा हुक्म है ।”

अनर्गसिंह ने क्षमा मांगी और तुरन्त वहाँ से चला गया ।

हम्मीर ने व्यथित होकर कहा, “वीर विवेक मे दिन प्रतिदिन दूर हो रहा है ।”

“दीवाण जी, आप इसे अधिक मिर पर मत चढाइए, कभी यह हम सब के लिए घातक सिद्ध होगा ।” पवन सी ने आवेश में कहा, “यह दरवार की प्रतिष्ठा व प्रतिष्ठा है ।”

हम्मीर ने पवनसी को शांत करते हुए कहा, “अधिक आवेश हमारे विनाश का कारण बन जायगा । मेरा, तुम जाकर अनर्गसिंह को बुलाओ । उसे हमारी तलवार दिखाना और कहना कि राणाजी, तुम्हें दसी समय बुला रहा है ।”

मेरा प्रणाम करके अश्वारूढ हो गया । वह पवन-वेग से पवत के सकीण पथ पर भागा ।

हम्मीर ने पवनसी कहा, पवनसी, तुम्हारी स्वामिभक्ति, वीरता और कृतव्य-परायणता अनुकरणीय हान के साथ-साथ चित्तोड के लिए गारवमयी भी है । मैं तुम में एक प्रार्थना और करना चाहूँगा कि तुम अनर्गसिंह के स्वभाव के बारे में मान रहो । देखा, मैं तुम्हें आज्ञा नहीं देता है । मैं यह भी जानता है कि तुम उन में अन्त में निश्चय नहीं हो, किन्तु अपने चित्तों के लिए अभी हमारा मान ही अयस्कृत है ।”

आप हर बार मुझे ही बताते हैं । क्या ?” पवनसी ने कहा ।

‘मैंने का समझना दुख है और बुद्धिमान को एक सत्य ही प्रमाण होता है । प्रत्यक्ष सत्य का दावा हर माई पर नहीं । दावा भी सम्मान पर आधारित होता है । मैं तुम्हें सबप्रिय मानता हूँ, इसलिए मैं तुम्हें अधिक बताऊँगा । क्या मैं अनुचित कह रहा हूँ ?”

पवनसी गहरे हास्य से, नती दीवाणजी, आपसे सही सही बातें कहिए । आज्ञाकारी हूँ । मैं आपकी प्रत्यक्ष आज्ञा मानता हूँ ।

तबसे ही हम्मीर ने अपनी प्रजा का संसाधन दिया । यह अन्त



सन दिया कि वह शीघ्र ही आपकी जन्मभूमि को मुक्ति दिलाएगा ।

उनके चले जाने के बाद हम्मीर ने सबको जाने का आदेश दे दिया ।

हम्मीर मथुरा कक्ष में चहलकदमी कर रहा था । उद्विग्नता के कारण कभी-कभी उसके अघर अस्पष्ट शब्दों का उच्चारण कर देते थे । 'अनग वस्तुतः उन्मादग्रस्त हो गया है । उसे इस तरह वार्तालाप नहीं करना चाहिए ।' इस तरह के वाक्य उसके मस्तिष्क में घूम रहे थे ।

दूरागत पदचाप हम्मीर के कर्णकुहरो के सन्निकट आने लगी ।

हम्मीर अपने भावों को परिवर्तन करने लगा । जो उग्रता व कठोरता उसके चेहरे पर व्याप्त थी, वह दूर होने लगी । उसकी जगह सहज-सौम्यता आ विराजी । हम्मीर ने अनगसिंह का सम्मान मुस्कान के साथ किया । मेरा चला गया ।

हम्मीर ने मथुरता से, किन्तु अनग की ओर न देखकर, कहा "राज-मर्यादा के विरुद्ध कोई आचरण असह्य होता है । कभी-कभी उसका गम्भीर रूप राज-द्रोह की सजा भी ले सकता है । पर अनगसिंह से हमें ऐसी आशा नहीं थी । वह हमारा दाया हाथ है । हम अपने दाए हाथ को अपने से अलग नहीं कर सकते । लेकिन ? हाँ अनग ! अगर तुम्हारा अपना दाया हाथ विपात होकर तुम्हारे मारे शरीर को हानि पहुँचाने लगे तो तुम क्या करोगे ?"

"काट दूंगा ।" अनग ने आवेश में कहा ।

"किन्तु हम इस सिद्धान्त के विपरीत हैं । हम उसका उपचार करेंगे । अच्छे अच्छे वैद्यों को दिखायेंगे, इस पर भी वह ठीक नहीं हुआ तो हम उसे काटकर अलग कर देंगे ।"

हम्मीर का सकेत अनगसिंह समझ गया । उसका मुख तान्रवर्ण का हो गया । आन्तरिक क्रोध पर उसने बहुत आधिपत्य करना चाहा, फलस्वरूप उसके सारे शरीर में जडता व्याप्त हो गई ।

"हम तुम्हारा हार्दिक सम्मान करते हैं । वीरों में तुम्हें वीर शिरो-मणि समझते हैं । हमें यह भी विश्वास है कि तुम्हें केसरी सिंह भी

पराजित नहीं कर सकता, पर दुख इस बात का है कि तुम शिष्टता की परिधि के बाहर जाने लगे हो अनग । क्या तुम्हारी बातों के कारण समस्त मेवाड की एकता, अखंडत, अविच्छिन्नता भंग हो जाय ? वप्पा रावल द्वारा स्थापित सूर्य-वशियो का शीय समाप्त हो जाय ? हमारे जागरण की क्षति पहुँचे ? लोग तुम्हारे जैसे पराक्रमी को देशद्रोही कहे क्या तुम यह सब सह सकोगे ? चुप स्यो हो ? बोलते क्यों नहीं ?”

अनर्गमह गदन भुकाए खड़ा रहा ।

“हम तुम्हारी स्वामिभक्ति का सम्मान करने हैं । हमें तुम्हारी नीयत पर भी तनिक सन्देह नहीं है । किन्तु यह सब बात तब नितान्त गौण हो जाती है जब तुम भरी मभा में राजकुल की प्रतिष्ठा को हुंकार के सहारे उठा कर चले जाते हो । यह कहा तक उचित हो सकता है ?”

गहरा मोन छाया रहा ।

हम्मीर दूरस्थ एक मेघ-खड को निहारता रहा । वह भीसे स्वर में बोला, “तुम नहीं जानते कि मैं तुम्हें कितने गौरवशाली पद पर प्रतिष्ठापित करना चाहता हूँ । मेरी यह हादिक दृष्टि है कि तुम मेवाड के गनापति बन कर चिनीड को विजय करा । पर तुम्हारी उग्रता, प्रचरता और आक्रोश सबको मर्दिग कर देते हैं । क्या भविष्य में मैं तुम्हें सन्तुष्टि दे सकूँगा ।”

अनर्गमह व्यथित हो उठा । उसकी आश्रित की कठोरता लुप्त हो गई । पञ्चाताप की रेखाएँ उभर कर उसके चेहरे पर आ गई । वह दक्षिण स्वर में स्तब्ध स्तब्ध जाता, “य उग्र है, प्रचर है और अग्रिम नी किन्तु आगामी का मेरी विवेचना को भी ध्यान में रखना चाहिए । क्या ऐसा होगा किन्हीं का प्रवृत्त परिवर्तन योग्य होगा ? मैं आपकी प्रत्यक्ष आज्ञा मानने के लिए तैयार हूँ पर मेरी स्वाभाविक वृत्ति का मन रोक

तुम्हारी स्वानावृत्ति वृत्ति क्या मुक्त हो ?”

सकते। तुम हर घड़ी युद्ध में व्यस्त रहो, किन्तु इतना अवश्य ध्यान रहे कि वह युद्ध देश के गौरवशाली परम्पराओं को समाप्त न कर दे।”

“ऐसा ही होगा।”

“शपथ खाते हो?”

अनगसिंह शांत रहा।

“तुम्हें शपथ खाकर विश्वास देना ही होगा।”

अनगसिंह ने कहा, “शपथ की क्या आवश्यकता है? आप?”

“नहीं अनगसिंह, मुझे वीर की शपथ का भी उत्तर ही भरोसा है जितना उसकी वीरता का। तुम्हें शपथ खानी ही पड़ेगी। तुम्हें मुझे वचन देना ही पड़ेगा।

‘शपथ खाता हूँ कि भविष्य में ऐसा कोई भी कार्य नहीं करूँगा जिससे देश की मान-मर्यादा और एकता को भग होने की आशंका हो।”

“देवसिंह।” हम्मीर ने प्रहरी को पुकारा।

प्रहरी मस्तक झुका कर कहा, “बटो हुक्म राणाजी।”

“कामदार जी को बुलाकर ला।”

थोड़ी ही देर में मन्त्रणाक्ष में मौजीराम आ पहुँचा। अब कक्ष में अनग, मौजीराम और हम्मीर गभीर मन्त्रणाधरने लगे। फिर मौजीराम का मुख पीला होता हुआ जान पड़ा, मानो उसे हम्मीर की बात पनद न आई हो।

हम्मीर ने कहा, “आज हम अनगसिंह को समस्त मेवाड़ का सेनापति बनाते हैं। यह अपनी अतुल शक्ति से शत्रु के दाँत खट्टे करेगा।”

अनगसिंह को हम्मीर ने भेड़ के मूँठ की तलवार दी जिसकी म्यान मखमल और चाँदी की बनी थी। जो तलवार कई महन्त्र रूपों की थी।

तलवार को सौंपते हुए हम्मीर ने कहा, “आज से तुम मेवाड़ के सबसे जिम्मेवार थोड़ा हो गए हो। भविष्य में तुम्हारा उठाया हुआ कोई भी कदम मेवाड़ की जय क्षय का जिम्मेवार होगा।”

अप्रत्याशित हम्मीर के चेहरा का उत्साह समाप्त हो गया। वह

तुरन्त जाते हुए अनगसिंह को रोककर कहा, “बैठो अभी तुम्हारी प्रमाणिक नियुक्ति नहीं हो पाई है, पद के साथ बहुमत की भी आवश्यकता है। कामदारजी, पवनमी, मेरा, वीरसिंह, खेतमी का पुत्र गेतसी, उमराव गिरिराज आदि को बुलाया जाय।”

चंद ही घड़ियों में मारे सामन्त और उमराव आ गए। कामदार ने सबके समक्ष राणा हम्मीर का मतव्य रख दिया। पवनसी तमतमा उठा। पवनमी की भगिमा से असतोष भलक रहा था। गिरिराज आतङ्कित-सा हो गया। हम्मीर ने सबके चेहरे के भावों को पढ़ा। वह समझ गया, सामन्त लोग इस बात में प्रसन्न नहीं हैं। और आज सामन्त और उमरावों के वत-वृत्ते पर मेरा शासन चल रहा है। यदि ये सब लोग मृष्ट हो गए तो परिणाम बुरा ही होगा। तब ?

हम्मीर काफी देर तक विचार-मग्न बैठा रहा।

उपस्थिति में कानाफूसी चल रही थी।

हम्मीर तुरन्त उठा। उसने मन्त्रालय में पवनमी को बुलाया और मन्त्रणाक्ष के पार्श्व में एक अन्य लघु वैयक्तिक मन्त्रणाक्ष था, उसमें वे दोनों गए। आनन्द होकर बैठे।

हम्मीर ने भोनेपन में कहा, मैं तुम्हारे मुख के भावों को अच्छी तरह पढ़ चुका हूँ। तुम अनग का महासेनापति प्रान्त में मृष्ट भी हो, पर मेरा समर्थ समझे दान का प्रण है। दान के पत्र में मैं व्यक्ति का प्रति-

अनुसार मैं आपकी आज्ञा ही मान सकता हूँ ।”

“तुमने हृदय का वोभ हल्का कर दिया । अन्ध्रा तुम जरा मेरा को मेरे पास भेज दो ।”

थोड़ी देर में मेरा आया ।

वह उदास था और हम्मीर को वह रोष-भरी दृष्टि से देख रहा था । हम्मीर ने उसके कन्धे को सहलाया और कहा, “अनगसिंह का महासेनापति बना देना तुम्हें भी सह्य नहीं ?” -

“नहीं ।”

“क्यों ?”

“क्योंकि जो व्यक्ति पल-पल में धैर्य खोते हैं, वे देश का हित कैसे कर सकते हैं । फिर अनगसिंह में क्षत्रिय जाति का झूठा दम और अभिमान है । वह अपने को असाधारण मानता है तथा वह भील-भीगा इत्यादि लोगों को हेय और नीच समझता है । उनके साथ जरा भी भाई-चारा नहीं रखता । उनको वह केवल दास समझता है । राणा जी, वह हम गरीबों का जीना ही दूबर कर देगा ।”

“नहीं, मेरा, नहीं ! तुम उसे गलत समझे हो । फिर तुम मेरी चाल को नहीं समझे । मैं चाहता हूँ कि इसे सेनापति बनाकर तलहटी की ओर भेज दूँ । वहाँ अनगसिंह लूटपाट और धन मग्नह करता रहेगा । तुम विश्वास रखो कि वह तुम्हारी जाति के लोगों को जरा भी कष्ट नहीं देने पाएगा ।” हम्मीर सँभल कर बोला, “फिर यह राज्य के नियमानुसार सेनापति थोड़े ही बनाया जा रहा है । जब तक चित्तौड़ का गड अपने अधिकार में नहीं आ जाता और मैं, विधिवत् राणा नहीं बन जाता तब तक वह नाममात्र का सेनापति ही कहलाएगा । इस निगूढ़ बात को वह नहीं समझ सकेगा । पद के प्रलोभन और धान में वह मतवाला बना खूब जी-जान से काम करेगा और इसमें हमें लाभ ही होगा । देखो मेरा ! अभी हमें वैयक्तिक वंशमनस्य और द्वेषता को विस्मृत करके अपने देश के उत्थान और उसकी स्वाधीनता के बारे में

सोचना चाहिए ।”

“कही ऐमा न हो कि पासा उल्टा पड जाए ।”

“नही, ऐमा नही हो सकता । हम्मीर बौद्धिक मार नहीं खा सकता । वह भी अपने पूर्वजों की तरह दूरदर्शी है । अनागत विपत्ता और आपदा को वह पहले दूर करके ही कदम उठाता है ।”

मेरा ने उसकी बात को मानते हुए कहा, “फिर जैसी आपकी मर्जी ।”

“केवल मेरी मर्जी नहीं हो सकती । मैं अपने सारे मित्रों को रूष्ट करके किसी एक व्यक्ति विशेष को प्रसन्न करना नहीं चाहता । तुम्हारा परामर्श चाहता हूँ । यदि वह नाम-मात्र का सेनापति बना भी रहे तो क्या हर्ज है ?”

‘मुझे कोई आपत्ति नहीं ।’

“वस मैं यही सुनना चाहता था ।”

हम्मीर बाहर आ गया । उसने समस्त सरदारों व उमरावों को सम्बोधित करके कहा, “समय और शक्ति देखते हुए ठाकुर अनंगसिंह जी हमारे सेनापति बनाए जाते हैं । उनका शौय और स्वामि-भक्ति से सभी परिचित हैं । मुझे आशा है, आप सब भी इसे स्वीकार करेंगे । किसी को भी किसी प्रकार की आपत्ति हो तो निमकोच होकर कहे । मेरा नय खान की कोई आवश्यकता नहीं । क्योंकि मैं भी आपकी तरह चित्तोड का नेवक हूँ, एक्किगेश्वर का दीवाण हूँ । मुझ में आप में इतना ही अन्तर है कि मैं उनकी सेवाओं के निये एक जिम्मेवार चाकर हूँ और

अनगसिंह ने एकलिंगेश्वर की जय-जयकार की और वाद में हम्मीर के प्रति उसने अपनी कृतज्ञता ज्ञापन की तथा उसने समस्त सरदारों को विश्वास दिलाया कि वह अपने देश और देश के लोगों के प्रति सदा ईमानदार रहेगा ।”

---

## १६

रानी शयनागार में अर्धशायित थी । गाव तकिए का सम्बल था उनवी पीठ को । अपराह्न काल ।

हल्का-हल्का शीत आरम्भ हो गया था ।

राणी नवागत शिशु की सुखद-स्मृति में विगत की हीनता विस्मृत कर चुकी थी । लेकिन जब कभी पुरानी दासियाँ छिपे-छिपे उसके तथाकथित कलुष जीवन के पृष्ठ खोलकर कहतीं कि ऐसी कलकिनी महाराणी के कारण चित्तौड़ में कभी भी सुख आनन्द नहीं हो सकता । मगल श्री यहाँ आ ही नहीं सकती । हमारे यहाँ महान पवित्र देवी पद्मिनी हुईं थी जो धर्म की रक्षा हेतु जौहर में जल उठी । और यह अशुभ है, अमंगलकारी है । तब उसका मन वेदना से भर उठता था । राणी पीड़ा से अवश होकर उन दासियों की बाणी काटने को आतुर हो जाती पर फिर वह शांत हो जाती । यथार्थता कहीं तक छिप सकती है । उसे कहीं तक रोका जा सकता है । लेकिन तब उसके मन में अपने पिता के प्रति घृणा का सागर लहरा उठता और अपने भाइयों के प्रति उसके मन में द्रोह जाग उठता ।

तब वह कामदार को बुलाकर अनुनय विनय करती । उसे चित्तौड़ को तुरन्त विजित करने के आदेश दे देती, हालांकि वह जानती थी कि चित्तौड़-विजय सहज नहीं है और उसमें उसके आदेशों की जरा भी कीमत नहीं है ।

कल पता नहीं, क्यों हम्मीर उसे प्यार करता करता रह गया !  
हल्का-हल्का शीत और उन्मादित करने वाली ऋतु ।

हम्मीर राणी से आमोद-प्रमोद की चर्चा कर रहा था ।

राणी हम्मीर की अकशायिनी थी और हम्मीर उसे अपने चित्तौड़ की राणियों की त्याग की कथाएँ सुना रहा था । हठात् हम्मीर उठ खड़ा हुआ और यह कह कर वह शयनकक्ष से बाहर निकल गया कि यह सुख व्यर्थ है । यह भोग अनुचित है । यह विलास पीडादायक है । जब तक चित्तौड़ की मुक्ति नहीं, कुछ नहीं । कुछ नहीं ।”

राणी ने हम्मीर को रोकना चाहा, पर हम्मीर नहीं रुका । वह सीधा प्रतोली से दूसरे कक्ष में चला गया । दासी को आज्ञा दे दी कि वह किसी भी को भीतर न आने दे ।

राणी गई भी, किन्तु दासी ने विवशता प्रकट कर दी । राणी ने अधिक हठ नहीं किया । वह जानती थी कि हम्मीर का क्रोध आकाश-पाताल को एक कर देता है ।

लेकिन इससे राणी को रात भर निद्रा नहीं आई ।

वह अवश-सी शय्या पर करबटे बदलती रही । गानम-पटन पर तिरस्कृता का अभिशाप्त जीवन नाच उठा जो महलों में राजनैतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए लाई जाती है और सम्पूर्ण जीवन भर उसे प्रभव-विलास में युक्त कक्ष में व्यतीत करना पड़ता है, किन्तु उसकी और उसके पति की भागिगी प्रति भी नहीं पड़ती थी । दानादि हम्मीर सम्पूर्ण रूप से उस प्यार करता था, फिर भी वह हीनता राणी के मन में थी, वह उसे हम्मीर की मायावश्या उपराध साक्षात् करती थी, तब वह अपने मन में अनेक दुःखनाशाँ का जन्म देती थी, तब वह आत्मपीडा में



के मुख पर वही भेद-भरी शात मुस्कान खेल रही थी। वह राणी के मनोवेगों को बड़ी तटस्थता से सुन रहा था। जब राणी ने सब कुछ उगल दिया तब कामदार ने कहा, “मैं आपके दुख को समझता हूँ। लेकिन चित्तौड़-विजय सहज नहीं है।”

“फिर आपको यहाँ लाने से लाभ क्या है?” राणी ने आवेश में कहा।

“मैं अपना काम सम्पूर्ण निष्ठा से कर रहा हूँ अभी अवसर की प्रतीक्षा है। अवसर आते ही मैं अपना कार्य आरम्भ कर दूंगा।”

“तब तक मैं मर जाऊंगी।”

“ऐसा न कहिए राणी सा, आप चित्तौड़ के भावी राणा की राज-माता हो, आपके मुख से ऐसे अणूते (अनुचित) बोल शोभा नहीं देते। आपको अखंड धैर्य रखना चाहिए। आप इस तरह उद्विग्न होगी फिर, हो गयी कर्तव्य की पूर्ति? अब आपको मेरे साथ होना पड़ेगा। यह मूल जाना पड़ेगा कि मेरे कोई भाई है, मेरा कोई बाप भी है। आप चित्तौड़ की विधवा महिषी हैं। यदि चित्तौड़ विजय नहीं हुआ तो सारा दोष आपके माथे मढ़ा जायगा। सभी यही कहेंगे कि यह अपशकुनी हैं। इस लिए अब आपको मेरा साथ देना होगा।”

“मैं आपको वचन देती हूँ कि मैं आपका तन-मन से साथ दूंगी। आप जैसा कहेंगे, वैसा करूंगी।”

“तब सुनो रानी, हम शीघ्र ही चित्तौड़ जाएंगे।”

“लेकिन मैं ऐसी दशा में कैसे जा सकती हूँ।”

“मैं राणाजी से अनुरोध करूंगा। यदि राणाजी मेरे अनुरोध के मर्म को समझ गए तब आप और मैं वहाँ चलेंगे।”

“पर प्रयोजन क्या होगा?”

“हमारा प्रयोजन है चित्तौड़-विजय। चित्तौड़ विजय होने के पश्चात् एक विधवा के प्रति जो लौकिक धारणाएँ होती हैं, उनको निर्मूल करना एवं मेवाडवासियों को आपके प्रति श्रद्धेय बनाना। आप नहीं जानतीं

कि परिस्थिति-वश यहाँ के सरदार चुप बैठे हैं, वरना वे इस प्रश्न को अभी भयकर समस्या बना देते और न मालूम ये रुढ़िग्रस्त, अध-परम्परावादी वीर आपके जीवन को क्या परिणाम देते ? आन्तरिक विरोध अब भी देखने को मिलता है ।”

“ओह ! कौन से जन्म का पाप है जो अब मुझे मिल रहा है । मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि वह मुझे मृत्यु क्यों नहीं देता ।” वह विचलित स्वर में बोली, “आप नहीं जानते कामदार जी ! राणाजी, हँसते-हँसते एकदम विपाद में डूब जाते हैं । लगता है, उन्हें भी मेरे कारण सच्चा सुख नहीं ।”

“आप निश्चित रहिए, ईश्वर की कृपा हुई और भाग्य ने साथ दिया तो आप यहाँ की प्रतिष्ठित महाराणी होगी । अच्छा, मैं चलता हूँ, रात को गुप्तचर समाचार लाया था कि अनगमिह ने शत्रुओं के एक पूरे साथ को रोक कर लूट लिया । यह भी सुनने में आया है कि अनग ने तीस व्यक्तियों को मौन के घाट उतार दिया । सचमुच यह पूरा जन्म में कोई राक्षस था ।”

मौजीराम वहाँ से सीधा हम्मीर के पास गया ।

हम्मीर पूजा-गृह में अचना वन्दना कर रहे थे । मौजीराम सेवक को यह कह कर चला गया कि जब राणाजी निवृत्त हो जाय तब मुझे सूचना दे देना ।

लगभग एक घण्टा के बाद हम्मीर पुनः से निवृत्त हुआ ।

जीवन्महत गंगा दा-दार्द नाम गण्डो को लेकर आया हुआ था । अनगमिह नीचा और सीढ़ी का गढ़न गण्डो का विश्वास जितान के

“मुहम्मद तुगलक का कोई सिपहसालार था। मालूम हुआ था कि यवन-सेना के लिए यह ले जाया जा रहा था।”

“अच्छी बात है। तुम जा सकते हो?”

जीवनसिंह इधर गया और उधर मौजीराम ने प्रवेश किया।

प्रणाम करके उसने निवेदन किया, “आपसे मैं विशेष मन्त्रणा करने को आया हूँ।”

“कहिए कामदार जी।”

“इन दिनों की घटनाओं के कारण मालदेव चौहान व उनका पुत्र जैसा एकदम परेशान हो उठे होंगे। निरन्तर असहयोग और छुप-छुपकर युद्ध की नीति ने उनकी शक्ति क्षीणतर होती गई है। तब मैं और महाराणी-सा चित्तौड़ जाकर उन्हें अपनत्व का भरपूर दिलाते हैं। और यह धन उन्हें वापस कर आते हैं। उनसे प्रार्थना करते हैं कि भविष्य में हम आपको किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचायेंगे।”

“इससे क्या होगा?”

“यह होगा कि अप्रत्याशित आक्रमण के समय हमें चित्तौड़-प्रवेश में किसी तरह की विपमता का सामना नहीं करना पड़ेगा। आप नहीं जानते कि वह दुर्ग कितना सुरक्षित है। शत्रु को विजय करने में अपना सारा बल लगा देना पड़ता है। वह समुद्र की सतह से बहुत ऊँचा है और उसका परकोटा अत्यन्त मजबूत है। इसके अतिरिक्त पाडलपोल, मैरोपोल, हनुमानपोल, गणेशपोल, जोडलापोल, लक्ष्मणपोल, रामपोल के भीपण लौह व पाषाण के द्वार और भवन तथा चौहानों के वीर सिपाहियों का पहरा, इन सभी को सहजता से नहीं हटा सकते। इसके लिए छल की आवश्यकता है।”

“वीर-त्राकुरे राजपूत क्या धर्म-युद्ध नहीं कर सकते?”

“धर्म राजनीति का सहोदर नहीं बन सकता। अलाउद्दीन की बात का विश्वास कर आपके पूर्वजों ने चित्तौड़ को श्मशान कर दिया था। उस जैसा शक्तिशाली बादशाह भी चित्तौड़ के लिए छ माह घेरा डाले

पड़ा रहा और अन्त में उसे छल-कौशल का ही सम्बल लेना पड़ा।”

“लेकिन हमारे राजपूत इसे स्वीकार नहीं करेंगे।”

“उसकी आवश्यकता ही क्या है ?”

“पर मैं राणी सा को नहीं भेज सकता। आप जाना चाहते हैं, अकेले जाइये।”

“आपको वहाँ भेजने में आपत्ति क्या है ?”

हम्मीर ने तनिक विहँस कर कहा, “अभी तुमने कहा था कि धर्म राजनीति का सहोदर नहीं हो सकता ? और जो नीति धर्महीन होती है, उसका कोई विश्वास नहीं कर सकता। मैं तुमको इतना ही अधिकार दे सकता हूँ कि तुम चितोड़ जा सकते हो।”

“जैसा आपका हुक्म ?”

“किन्तु ?” हम्मीर की भृकुटिया तन गई।

“क्या है राणाजी, कोई सन्देह ?”

‘तुम कभी कभी एसी बातें कह देते हैं, जिससे मनुष्य को अपने आप पर भी विश्वास नहीं होता। तुम भी कूटनीतिज्ञ हो। कहीं तुम हमारे रहस्यों का उद्घाटन करने के लिए तो चित्तोड़ नहीं जा रहे हो ? तुम्हें स्पष्ट नहीं होना चाहिए, अपनी शक्ति को तुम्हारे समक्ष स्पष्ट रूप में रख रहा हूँ, उसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं तुम्हारा विश्वास खो बैठा हूँ। मैं तो केवल गया रख रहा हूँ।”

कामदार के मन में चला भी कचुप नहीं था, किन्तु इस अप्रत्याशित आरोप ने कामदार का मुख पीना पड़ गया। वह हसनाता हुआ बोला, “राणाजी, मैं जिन दिन दहलू में आपका दिया गया था, उसी दिन मैंने अपने आपको आपका दाम स्वीकार कर लिया था। मैं उसी का ही तात्पर्य और वफादार हूँ जिसकी यादगी माता है। कब आप मुझे किसी और को दीजेंगे, मैं उसका वफादार हो जाऊंगा। मन्चा दाग वहीं होता है जहाँ अपने स्वामी की आग मानना है। दाम के लिए कब के स्वामी का जोर महत्त्व नहीं होता। अगर आपका मुँह पर गया है

तो लाइये अपनी हथेली में आग रखकर आपको विश्वास दिलाऊंगा। हथेली जलती रहेगी और मैं तब तक उस अगारे को अपनी हथेली से नहीं गिराऊंगा जब तक आप यह नहीं कहेंगे कि मुझे तुम पर विश्वास है। राणाजी, आपने अपने हृदय में यह शका उत्पन्न करके अच्छा नहीं किया। मौजीराम चित्तौड़ को मुक्त कराने के लिए आया है।”

मौजीराम की आँखों से अश्रु छलक आए।

हम्मीर को अपनी भूल का पछतावा आया। वह अपनी बात को सँवारता हुआ बोला, “तुम उत्तेजित हो गए हो? मेरे कथन का इतना गम्भीर रूप लेकर तुमने अच्छा नहीं किया। मैंने तुम्हें एक अर्थभरी बात कही थी। तुम्हारे पर दुर्भावना से कोई भी आक्षेप लगाने की मेरी मनसा नहीं थी।”

मौजीराम ने अपने दुपट्टे से अपने आँसू पोंछे। वह अत्यन्त व्यथित स्वर में बोला, “क्षमा चाहता हूँ, पर राणाजी आप अपनी चतुराई को सीमाहीन करने लगे हैं। कथन है—ज्यादा हुशियारी में कभी-न-कभी किरकिर पड़ती है।”

हम्मीर नत-दृष्टि करके बोला, “हम्मीर तुमसे क्षमा चाहता है।”

“मुझे व्यर्थ मे अपराधी बयो बनाते हैं? मैं आपके चरणों की धूल हूँ। चाकर हूँ। वस भविष्य में मन को पीड़ा देने वाली बात मत कहिएगा, ऐसा अनुरोध करता हूँ।”

हम्मीर ने बात को बदलना ठीक समझा। वह चौंक कर बोला, “तुम चित्तौड़ कब जा रहे हो?”

“आज ही।”

“यह सारा धन साथ ले जाओगे?”

“हाँ।”

“तुम कहो तो मैं एक क्षमा-पत्र लिख दूँ?”

“अवश्य। यह बात और ही ठीक रहेगी।”

“तुम तैयार हो जाओ। मैं अभी पत्र लिखा कर देता हूँ।”

मौजीराम चलने लगा । हम्मीर ने उसे रोकते हुए कहा, “एक बात और है कामदार ?”

“क्या राणाजी ?”

“चित्तौड़ के द्वारपाल से मित्रता कर लेना । उसे समझा देना कि हम जब कभी आएँ तब तुम हमें द्वार खोल देना ।”

“जो हुक्म ?”

मौजीराज के जाने के बाद ही चारण अमरदान के आगमन की सूचना मिली । अमरदान कई दिनों के बाद आया था । हम्मीर उसे देख कर उल्लाम से भर उठा । सम्मान आमन दिया चारण को । अमरदान न उसकी प्रशंसा में एक कवित्त पढ़ा ।

“बहुत दिनों के बाद दशन दिण चारणजी ?”

“अब दूदा हो चला है । आना-जाना होता ही नहीं । घुटना में बड़ी पीर रहती है ।”

“राजपूँय को क्यों नहीं दिखलाते ? आज मैं उन्हें आपके घर भेज दगा । आपने बिना हमारे म पौष्प को कीन जगाएगा ।”

अमरदान ने क्षण भर हम्मीर के मुख को देखा, फिर बोला, “चारण केवल कविता नहीं करता है । वह कविता के साथ खड्ग भी चलाता है । और मृभम खड्ग चलाने की शक्ति नहीं है । फिर मुझे अब युद्ध में घृणा ज्ञान नहीं है । व्यथ की हिमा ही उपादयना मुद्र नहीं । म पूज्यनीय माता मा की बात को मानना है—ग्रहिमा का युद्ध । म उनसे भी आगे सावना ? कि हिमा का प्रतिगौर भी हिमा म नहीं लिया जाय । जोर दुष्ट और आतनामी किसी भद्र पुष्प पर आक्रमण कर ना उसे उसका अस्त्राव हिमा पे नी करना चाहिए, वर उन निमनता म पड़ रि साविर यह मन उन पर क्या आक्रमण किया ? म समन्ता , उसका प्रेय और उसकी गाँव हिमर का अस्त्र दुष्ट पर सावत के लिए बाँट कर दी ।

‘आपका यह विचार अभी सज्ज नहीं हो सकता । पर यह ठीक

एक सूत्र मे सगठित नही हो जाता, तब तक यह मंत्र व्यर्थ है ? प्रजा की एकता ही इसका आधार है । क्योंकि जब तक प्रजा के वीर छोटी-छोटी दुकडियाँ बना-बना कर भगडा करते रहेगे तब तक सामूहिक विरोध समभव नही । व्यक्ति को आत्मा की रक्षा भी आवश्यक है ।”

हम्मीर ने कहा, “मैं आपके विचारों का स्वागत करता हूँ । चारण जी ! यह अहिंसा का युद्ध या उद्घोष इस काल के लिए उपयुक्त है । आप मेरे एक प्रश्न का उत्तर दीजिए—एक सज्जन पुरुष जा रहा है । उसके शत्रु ने उस पर आक्रमण किया । समझ लीजिए, वह बच गया । उस समय वह क्या करेगा ? अपने शत्रु से कहेगा कि मुझ पर एक प्रहार और कर । यह परम्परा वैयवितक नपुसकता को ही जगा देगी ।”

अमरदान ने गभीर स्वरमें कहा, “तब घाती दूसरा प्रहार कर ही नहीं सकेगा । मनुष्य मे करुणा होती है और वह स्वतः जाग जाती है । एक रक्त-रजित मानव तुम्हारे सामने खडा है । वह करुणा-प्लावित स्वर मे ललकार रहा है, ‘मुझे और मारो, मुझे और मारो’—क्या तुम उसे मार सकोगे ? मुझे विश्वास है कि तुम ऐसा नहीं कर सकोगे ? मानवीय निवेदनाओ से युक्त जीवात्मा ऐसा क्रूर कार्य नहीं कर सकती । यह दुष्कृत्य क्रूर वृत्ति वाले प्राणियों से ही हो सकते हैं ।”

समय आने पर आपके विचारों पर प्रजा अवश्य गौर करेगी ।” इतना कह कर हम्मीर ने चारण से निवेदन किया, “आप आ गए हैं तो एक पत्र लिख दीजिए ।”

चारण ने पत्र लिखा ।

मौजीराम वह पत्र लेकर चित्तौड के लिए रवाना हो गया । वह भकेला ही गया था ।

सूर्य आकाश के मध्य में आया था । प्रखर किरणों मे हम्मीर भोजन करके घूम रहा था । तभी अनगसिंह अश्व पर आरुढ़ होकर पवन-वेग मे आया । अपने अश्व को भील के कगार पर छोडकर वह सीधा ‘खास महल’ की ओर आया । हम्मीर ने उसे मन्त्रणा वक्ष मे बैठने को कहा ।

थोड़ी देर में अनग सिंह उकता गया। उसने क्रोध में अपनी मूछों पर दो तीन बार ताव दिया और उसने ज्यों ही हम्मीर को देखा त्यों ही वह प्रणाम करके बोला, “मेवाड़ के योद्धाओं के साथ यह खेल उचित नहीं है। हम चौहानों के समक्ष कभी झुकने को तैयार नहीं हैं। आपने वह सम्पत्ति और पत्र भेजकर समस्त मेवाड़ियों का अपमान किया है।”

हम्मीर ने कनखी से अनगसिंह को देखा और फिर मुस्करा कर बोला, “तुम प्रचण्ड हो। क्षण-क्षण में उग्र हो जाते हो। बात पर बिना विचार किए कुछ न कुछ कह डालते हो।”

अनगसिंह ने तुरन्त कहा, “मैंने उस पत्र को अपनी आँखों से देखा है।”

“शक्य देखा होगा किन्तु मेरे हाथ का लिखा हुआ नहीं है। वह चारण जी व हाथ का लिखा हुआ है। हस्ताक्षर भी चारण जी के ही हैं।”

“ओह !”

“मेरे वीर मेनापति यह नीति-युद्ध है। तुम्हें इसमें पीड़ा होगी, पर इस बार फिर रक्त-हीन युद्ध करने की मनसा है।”

“तुम ही युद्ध को। इससे मेरा यह काय ही अच्छा।” वह कर अनग वापस लमा माँग कर चला गया।

हम्मीर बिहँस पड़ा और शनै-शनै निद्रा देरी की गोद में सो गया।

रामदास मार्चारास चित्ता पत्रा ।

रामदास नदी के तट पर पत्रा कर बट पत्र नर गया । पत्रा साथ पत्रा सी था । र मीर सा पत्रा वरम था कि वर रामदास र पत्रा पर री चन । र पत्रा पत्रासी पत्रा र पत्रा था, पर पत्रा री र वरम



की भ्रवहेलना वह नहीं कर सकता था। इस के अतिरिक्त कई सैनिक और थे।

मौजीराम पाडलपोल के पास पहुँचे। पहरेदार ने उनकी सूचना जेसा को पहुँचाई। सूचना पहुँचाने और लाने में लगभग दो घटिका लगी। जेसा का छोटा भाई हरिसिंह स्वयं उसकी अगवानी करने आया। पवन-सी का भी मौजीराम ने उन सब से परिचय कराया। प्रारम्भिक कार्य से निवृत्त होकर पवनसी और मौजीराम जेसा के दरवार में पहुँचे। जेसा चित्तौड़ के राज्य-सिंहासन पर बैठा था। पवनसी की रग-रग में आग लग गई। उसके मन में सहसा विचार उठा कि वह अभी इस दुष्ट का खून करके चित्तौड़ पर अधिकार कर ले।

कामदार पवनसी की आन्तरिक स्थिति समझ गया। उसने तुरन्त पवनसी से कहा, “एकलिंगेश्वर जी के दीवारण का पत्र आपको दीजिए। पवनसी ने पत्र को जेसा के हाथ में दिया। जेसा ने हाथ में पत्र लेकर पढ़ा और पढ़ते-पढ़ते उसकी प्रसन्नता की बाँछें खिल गईं।

“मौजीराम ने नत मस्तक होकर कहा, “आपका सारा कोश आपके सामने प्रस्तुत है। राणा जी ने क्षमा मांगी है और भविष्य में यह आश्वासन दिया है कि आपकी प्रजा और दासों को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाई जायगी ?”

जेसा ने मौजीराम को एकांत में ले जाकर बात-चीत की। वाद में बड़ा ही मुदित मन बाहर आया और पवनमी को सम्बोधित करके बोला, “खेद है ठाकुर मा कि हम चित्तौड़ आपको नहीं दे सकते। इसके अतिरिक्त आप हमारा सर्वस्व ले सकते हैं।”

पवन सी ने त्योरी बदल कर कुछ कहना चाहा, लेकिन तुरन्त मौजीराम ने बीच में ही कहा, “चित्तौड़ आपका ही समझिए। वीर जहाँ भी जाते हैं, वहाँ नया नगर बसा लेते हैं। मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि भविष्य में हमारी मित्रता बनी रहे।”

“मित्रता खण्डित कभी नहीं हो सकती।”

“वस इसी उद्देश्य को लेकर मैं यहाँ आया हूँ।”

इसके बाद मौजीराम और पवन सी लगभग एक सप्ताह भर वहीं रहे। वहाँ पर उनका राजसी सम्मान हुआ।

×

×

×

जेमा ने कई बार अनगमिह की शिकायत की। उसने उसके चार सैनिकों की हत्या भी कर दी। जिसका विरोध-पत्र भी जेमा ने हम्मीर को भेजा। हम्मीर ने उसका उत्तर विनम्र शब्दों में चारण से लिखाकर भेज दिया, ताकि जेमा उसे कुछ कहे भी तो वह अस्वीकार कर जाए। उसने पत्र में शीघ्र ही अनगमिह पर कठोर कार्रवाई करने का आश्वासन दिया था।

--

२१

समय अपने पाँव पर उठा।

आज प्रभात के प्रथम पहर में ही समस्त केनवाड़ा के महाम्या प्राणी तीव्र उत्पटा में शुभ सवाद की प्रतीक्षा कर रहे थे। राणी-प्रमद पीठा में कराए रखी थी। हम्मीर पवन सी, मौजीराम, अनगमिह, मेरा व अन्य ठाकुर-उमराव सभी के सभा प्रतीक्षा गृह में बैठे थे। राज-ज्योतिषी की मुद्रा अत्यन्त प्रफुल्लित थी। जमा भविष्यवाणी की भी नि राणा जी के पुत्र ही होगा।

पञ्च त्रिगुण आत्मन के पुत्र ही स्वर्ग-चर्यन हाउ का भूता का जन्मा था। या इस व सदा परीव ज्ञानि के पाण राण, ती म माता-पिता जन्म के त्रिगुण वड व। म दरे न दक्षिण मयाज्जराण दा। र त पता की भाव-वामन का रह व। अनर व निर-प्रतुपता म उडि हा मर व। योवतिर मनारयन क तात के हत कती म थो री म नन दात रही थी।

हम्मीर अपने निजी कक्ष में चहल-कदमी कर रहा था। वह धोती पहने हुए था और उसका सभी अंग एक ढीले अंगरखे से समावृत था। उसके चेहरे पर वेचनी थी परन्तु आँखों में आत्सुक्य झलक रहा था। कभी-कभी उसके मुख पर उल्लास की वीचि घावत हो जाती थी।

एकाएक वरही दासी दौड़ी-दौड़ी आई। उसके मुख पर अनगिनत प्रफुल्ल लहरियाँ नाच रही थी। वह आनन्द गद्-गद् स्वर में बोली, "राणा जी की जय, राणा जी की जय, आपके कुँवर हुआ है।"

"कुँवर!" हम्मीर प्रसन्नता के मारे पूरा बोल भी नहीं पाया। वह अवरुद्ध कंठ से रुकते-रुकते बोला, "खुशियाँ मनाओ।"

वरही की बड़ी-बड़ी काली आँखें चमक उठी। उसकी दृष्टि हम्मीर के कंठहार पर थी। कंठहार के मोती छोटे छोटे जुगनुओं की भाँति चमक रहे थे।

"राणा जी मेरी बधाई!"

'लो बधाई', और उसने अपने हाथ के स्वर्ण-ककण वरही को दे दिए। वरही हर्षोन्मत्त-सी चिल्ला पड़ी, "जुग-जुग जिओ राजकुमार, चिर-जीवी हो कुँवर, जय राणा जी की।"

तत्पश्चात् यह शुभ समाचार सर्वत्र फैल गया। केलवाडा के निवासियों में नवीन स्फूर्ति का संचार हो गया। अन्तःपुर के भीतर और बाहर शैलनियों की ढोलनियाँ व पुत्र जन्म के गीत गूँजने लगे। हम्मीर की आज्ञा से प्रजा को घन वाँटा गया। लगता था—सारा सत्ताप दूर होकर इन स्वाधीनता के मतवाले मेवाड़ियों में केवल आनन्द ही आनन्द रह गया है।

वह दिन आनन्दोत्सव में ही व्यतीत हुआ।

अब हम्मीर रात-दिवस एक ही चिन्ता में लगा रहता था कि किसी भी तरह चित्तौड़ को प्राप्त किया जाय। उसने वरही को बुलाया। उससे निवेदन किया कि वह मेरी ओर से देवी माँ को विनय करें कि वह हमें और सहायता करें। बारू भी उसी दिन अपनी माँ के घर की ओर



समव होगा ।”

“और तब ?” राणी के नेत्रों में प्रश्न नाच उठा ।

हम्मीर ने भीति पर अंकित नृत्य-चित्र पर दृष्टि जमाकर कहा, “वहाँ तुम्हें और कामदार मौजीराम को मुख्य-मुख्य द्वारपालों को उत्कोच देकर अपने पक्ष में करना होगा । वहाँ की स्थिति को देखकर हमें गुप्तचर द्वारा समाचार पहुँचाने होंगे । तब हम अवसर पाकर चित्तौड़ पर आक्रमण करेंगे । राणी ! यदि तुमने इस कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न कर लिया तो जानती हो कि तुम्हारी प्रतिष्ठा यहाँ महाराणी पद्मिनी के समकक्ष हो जायगी । चित्तौड़ का हर व्यक्ति तुम्हारे चरणों में मस्तक झुकाएगा । तुम्हारे माथे पर लगा वैद्यव्य का कलक धुल कर तुम मंगलकारी देवी बन जाओगी । ”

राणी पर्यवेक्षक की दृष्टि से हम्मीर को देखती रही । हम्मीर उस दृष्टि को अधिक नहीं सह सका । जाने को उद्यत होता हुआ बोला, “राणी कार्य बड़ा कठिन और महत्वपूर्ण है । वही बाप और भाई के मोह में विस्मृत न कर देना ।”

“नहीं राणा जी, नहीं ।”

हम्मीर ने झपट कर राणी को आलिंगन में आवद्ध कर लिया ।

दूसरे ही दिन एक सदेशवाहक चित्तौड़ इस आशय का पत्र लेकर गया । हम्मीर और मौजीराम को पूरा विश्वास था कि जैसा इस बात को अस्वीकार नहीं करेगा । वे सभी लोग प्रजा में चित्तौड़ पर आक्रमण करने का प्रचार-प्रसार करने लगे । अनगसिंह इन दिनों अत्यन्त उन्मत्त हुआ घूमता था । शस्त्रों का निर्माण घर-घर जारी था । मेरा अपने भीलों को मगठिन कर रहा था । जो गयेती उसका सहयोग नहीं करते थे, उन पर देशद्रोह का अपराध लगा दिया जाता था और तब उसका शक्ति से दमन किया जाता था । चारों ओर मेवाड़ी वीरों में उत्साह नजर आ रहा था । वरवही ने पाच सौ घोड़ों की हम्मीर को और सहायता दी ।

जैसा ने वहिन का अनुरोध स्वीकार कर लिया ।

राणी ने विदाई ली ।

हम्मीर ने अन्तिम बार राणी को एकान्त में ले जाकर कहा, "राणी ! यह चाल हमारी अन्तिम और अत्यन्त महत्वपूर्ण चाल है । यह विपरीत पड़ गई तो तुम्हारा सारा सम्मान और मान समाप्त हो जायगा । चित्तौड़ की प्रजा तुम्हें कलकिनी और अपवित्र कहेगी ।" हम्मीर के अघरों पर कुटिल मुस्कान नाच उठी, "पवन मी कह रहा था कि राणी कहीं भाइयों के स्नेह में दुर्बल न हो जाय और हमारी योजना का रहस्योद्घाटन न कर दे । देखो राणी, यदि तुम्हारे मन में यह विचार भी आया तो समझ लेना कि तुम्हारा इस समार में कोई भी नहीं है । जिस हम्मीर ने समस्त मेवाड़ का विरोध सह कर तुम्हें अपने हृदय की साम्राज्ञी बनाए रखा, वह हम्मीर तुम्हारे रक्त का प्यासा हो जायगा । क्योंकि हम्मीर अपने वैयक्तिक सुख में अधिक देश को समझता है । अपने प्राणों से अधिक उसे सारी प्रजा के प्राणों की चिन्ता है ।"

राणी ने सिमक कर कहा, "आखिरी साँम तक मैं आपकी हूँ, चित्तौड़ की हूँ ।"

"मुझे तुमसे प्यारी ही आशा थी । मैं यह भी जानता हूँ कि तुम उन भाइयों की तनिक भी चिन्ता नहीं कर सकती, जो तुम्हें रानीनी का एक अन्ध्र समझते हैं । तुम्हारा हृदय में उ । बाप के लिए निश्चित भी आदर नहीं है, जो तुम्हें अपनी विपत्ति की पूर्णता का मायन मान कर चलाता है ।"

विदाई के सार्थ ने प्रस्थान किया ।

अन्तिम बार मौजीराम ने हम्मीर से फिर गुप्त मन्त्रणा की ।

लगता था कामदार इस यात्रा से आवश्यकता से अधिक चंचल हो  
उठा है ।

आगे-आगे घोड़े ।

घोड़ों पर शस्त्र-सज्जित सैनिक ।

बीच में राणी की डोली ।

स्वामिभक्त भील कहारों की श्रम से उत्पन्न सगीतात्मक हुंकार ।

पीछे से फिर सैनिक ।

एक ओर अपना पृथक अस्तित्व बताता हुआ मौजीराम का घोड़ा ।

कुछ दासियाँ और दास ।

धीरे-धीरे यह सार्थ पर्वत की वक्र-वीथियों में लोप हो गया ।

हम्मीर ने पवन सी से कहा, "हमारी सफलता निश्चित है ।"

मन्त्रणा-कक्ष में आज समस्त योद्धा एकत्रित थे ।

चित्तौड़ से सदेश वाहक आया था । यह सन्देश वाहक और कोई नहीं था । महान पराक्रमी पवनसी का पुत्र जैतसी था । उसने सारी उपस्थिति के मध्य खड़े होकर कहा, "राणी ने अत्यन्त कौशल से अपने भाइयों को अपनी ओर मिलया । उन्हें यह विश्वास दिलाया कि वह अब यहाँ से कभी नहीं जाएगी । वह सदा-सदा के लिए तुम लोगों के पास रहेगी । उसने अपने भाइयों से यह भी कहा कि हम्मीर के पास कुछ नहीं है । न रण शूरमा और न रण-आयुध । ऐसी दशा में उससे आक्रमण की आशा रखना मूर्खता है और कामदार जी ने वहाँ के नए

द्वारपालो को घनादि देकर अपनी ओर मिला लिया है। हरिसिंह अपने मुख्य सरदारों के साथ भीलों आदि के विद्रोह को दवाने लिए के गए हुए हैं। ऐसे समय में आक्रमण ठीक रहेगा। जेतसी ने यह भी बताया कि राणी अन्न जल सब की चिन्ता छोड़ कर केवल चित्तौड़ की स्वाधीनता में तन्मय हो गई है। वह अपने पीहर के विनाश की ही बात करती है।

हम्मीर यह सुन कर कुटिल मुस्कान बिखेर उठा। जैसे उसका प्रयोग राणी पर ठीक बैठता है।

हम्मीर ने उसके बैठने पर उठकर कहा, “वारू भी आ गया हैं। महासेनापति अन्नगसिंह की रणवाक्षा उद्दिग्ध हो उठी है। सारे सरदार कल ब्राह्म मूहत पर प्रयाण करना चाहेंगे।”

“हां।”

‘फिर यह घोषणा समस्त स्थानों पर करवा दो। आज से हम प्रण करत हैं कि या तो चित्तौड़ को मुक्त करा कर हम लगे अथवा उसके पक्ष में आगमन मंजूर मंजूर कर लिए जायेंगे। हम शक्तिशाली हैं। राजनीति दाव पचा हम किसी से कम नहीं है। हम अपनी रणनीति पर गव ह। अवसर की प्रतीक्षा भी समाप्त हो गई है। अब अग्र उचित नहीं। अब प्रयाण करना है, प्रयाण।”

एक सरदार ने खड़े होकर कहा, “हम राणा जी की आज्ञा को मानना मानकर चलेंगे। अब दर ठीक नहीं है।”

अन्नग ने जोग में आकर कहा ‘अभी मैं मैं साम दाम भेद नीति



किक निभयता छा गई। उसने अपनी खग की धार पर अपना अँगूठा लगाया। एक पतली रक्त-धारा वह उठी। सभी ने अपने-अपने मस्तक पर हम्मीर के खून का टीका लगाया और प्रयाण की तैयारियाँ करने लगे।

वह केलवाड़ा की अन्तिम रात्रि थी। मन्त्रणाकक्ष में तीव्र दीपक प्रज्वलित थे। हम्मीर, मेरा और अनगसिंह गभीरता पूर्वक मन्त्रणा कर रहे थे। सैन्य-संचालन कैसे किया जाय ? दो तरह की सेना थी हम्मीर के पास। छोड़े और पैदल।

इस मन्त्रणा में यह निश्चय हुआ कि कुछ गुप्तचर बराबर चित्तौड़ और हमारी प्रयाण-सेना का सम्बन्ध बनाए रहेंगे। हम दिन में प्रयाण नहीं करेंगे। दिन में प्रयाण शत्रु को सावधान कर सकता है। पहली टुकड़ी अनगसिंह के निर्देश में रहेगी, दूसरी मेरा के, तीसरी जेतमी के। हम्मीर उस टुकड़ी का संचालन करेगा जो सर्व प्रथम चित्तौड़ में प्रवेश करेगी।

ब्राह्म मुहूर्त में सेना ने प्रयाण किया।

सुषप्त योद्धा भी इस सवाद को सुनकर हम्मीर के साथ हो गए और एक रात हम्मीर ने चित्तौड़ के किले पर आक्रमण कर दिया। द्वारपाल उससे मिल चुके थे। जैसा अकेला था।

पहालपोल के समीप बड़ा घमासान युद्ध हुआ।

नर-मुह और रक्त की नदियाँ वह उठी। जैसा हालांकि तैयार नहीं था, फिर भी उसने अत्यन्त पराक्रम में सामना किया। उसका और अनग का द्वन्द्व देखने को बनता था। ऐसा लगता था कि दो मदमस्त गज परस्पर भिड़ रहे हों ? युद्ध-पिपासु अनग राक्षस की भाँति दहाड़ मार-मार कर गर्जता था। उन दोनों की तलवारें टकराती हुई ऐसी प्रतीति होती थी मानो विजलियाँ भिड़ गई हों।

उधर हम्मीर, जेतसी और मेरा ने त्वरापूर्वक गढ़ को चारों ओर से घेर लिया। जैसा के सैनिक भी सम्पूर्ण शक्ति के साथ लड़ रहे थे

सख्या मे वे बहुत कम थे पर वीरता उनकी भी दर्शनीय ही थी । ऐसा लगता था कि इस अप्रत्याशित आक्रमण से वे घबरा अवश्य गए थे, पर वे पराजय स्वीकार नहीं करेंगे । वे ठुकड़े-ठुकड़े होकर टूट जाएंगे पर झुकेंगे नहीं ।

रात बीत गई ।

दिन निकला ।

अनगसिंह और जेमा दोनों लड़ते लड़ते टूट रहे थे ।

रक्त-भूमि का भयावना दृश्य मन में घृणा का संचार कर रहा था ।

अनगसिंह की तलवार टूट गई थी । जेमा की तलवार हाथ से छूट गई थी । तब दोनों आपस में बर्बर पशु की तरह भिड़ गये । उनकी भिड़त भयकर थी । लगता — दो नर-पशु ममस्त मानवीयता का परित्याग करके लड़ रहे हों ।

अप्रत्याशित हम्मीर की जय जयकार हुई ।

जेमा उन्मादग्रस्त पाणी की तरह अनगसिंह पर टूट पड़ा । अनग इस आक्रमण को नहीं सह सका । उसके पीछे बुर्ज था, अनग बुर्ज से गिर पड़ा । तब जेमा अग्न पर आरुढ़ होकर भाग गया ।

हम्मीर तब तब उहाँ आ गया था । एक बार उसने गढ़ के रास्ते को देखा । भयकर और निरगन दृश्य था । आहतों, मृतकों और अर्द्ध-मृतकों में वह रास्ता पट गया था ।

हम्मीर ने बिलोच पर महावीर हनुमान का चिह्न अकित गान रग पा नया नहरा दिया ।

गानतिनक उसने हुआ ।

इस अवसर पर हम्मीर ने अपने सच्चे साथियों को राज-सम्मान प्रदान किया। विशेषतः मेरा, पवनसी और वारुकी तथा एक घुड़सवार बरबडी को लेने के लिए भी भेज दिया।

सिंहासन पर आरुढ़ होने के बाद कामदार मौजीराम ने उठकर कुछ कहने की आज्ञा माँगी।

हम्मीर ने उसे आज्ञा दे दी।

कामदार मौजीराम हम्मीर को प्रणाम करके बोला, “चित्तौड़ विजय हमारी सबसे बड़ी विजय है और महाराज अजर्यासिंह जी के अंतिम स्वप्न की पूर्ति भी है। मैं इस विजय का सारा धन्यवाद महाराणी सा को देता हूँ। उस महाराणी सा को जिसने सच्ची क्षत्राणी की भाँति सीसौदिया कुल-लक्ष्मी का नाम सार्थक किया। कौन इसे महाराणी पद्मिनी से कम शीलवान, पराक्रमी और तेजस्वी कहता है।”

बीच में ही राजपुरोहित उठ खड़े हुए। उनकी शिक्षा चाणक्य की तरह गो-पद जितनी थी। उनका उन्मत्त ललाट श्री से दीप्त था। वे उठ कर क्षमा याचना करके बोले, “कामदार जी, कदाचित् अतीव प्रशंसा करके कोई उच्च पद प्राप्त करना चाहते हैं, किन्तु उन्हें इतना ध्यान अवश्य रहे कि वे उपमा देने के पूर्व उस वीरागता, मर्यादा और धर्म की साक्षात् प्रतिनूर्ति महाराणी पद्मिनी के आदर्श-कृत्यों का भी मूल्यांकन कर लें। निष्कलुष देवीसा का नाम ही तारणहार है। और सोनगर राणी विधवा है।”

हम्मीर का हाथ खग पर चला गया।

राणी आर्तनाद कर उठी।

हम्मीर ने खड़े होकर कहा, “राजपुरोहित, राणी सा का अपमान कर रहे हैं। उन्हें मालूम रहना चाहिए, राणी के ही प्रताप से हमें चित्तौड़ मिला है।”

कामदार ने बीच में कहा, “महाराज शांत रहिए, इसका उत्तर मैं दूँगा। राणी को इस उपस्थिति में सबसे अधिक मैं जानता हूँ। राज-

पुरोहित जी का आक्षेप मेरे सिर आँखों पर है। किन्तु राजपुरोहित जी के पास कोई ऐसा प्रमाण है जिसके द्वारा वे कह सकते हैं, सिद्ध कर सकते हैं कि राणी का बाल्यकाल में विवाह हुआ था ?”

“प्रमाण ही नहीं, साक्षी भी है।” राजपुरोहित बोले, “विवाह मंडप में आपने श्रीर स्वयं मालदेव चौहान ने अपने मुख से यह कहा था।”

कामदार ने तनिक मुस्कराकर कहा, “यह राजनीतिक चाल भी हो सकती है।”

“क्या कहते हो मौजीराम ?” हम्मीर ने बीच में ही कहा।

मौजीराम ने पुनः प्रणाम करके कहा, “अपराध के लिए क्षमा माँगता हूँ। प्राणों की भिक्षा भी चाहता हूँ। अगर राणाजी मुझे क्षमा कर दें तो मैं आज सारे दरबार में सत्य और तथ्य प्रस्तुत कर दूँ।”

“मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ।”

राणी के बान पड़े हो गए। वह श्वास रोक कर बैठ गई।

मौजीराम ने सारी उपस्थिति पर दृष्टिपात करके कहा, “राजा मालदेव राणाजी को विवाह के बहाने जालोर बुलाकर समाप्त करना चाहते थे। उन्हें बुलाने के बाद यह एक पड़यंत्र विफल हो जान के कारण चौहान नरेश बड़े सबक में पड़े। पर तो क्या कर ? वे मेरे पास भागे-भागे आए। मामिन शब्दों में अनुयायि बनने लगे। मैंने तुरन्त सोचा और उन्हीं यह कहा कि आप कहें कि राजकुमारी विधवा है। विधवा का शांति की महाराणी नहीं बन सकती और मैं तुरन्त पूरी कहानी बना दी। उच्चपद का विवाह, यदि राजा के क्षेत्र में मर जाना और उसे रहस्य बनाकर राजकुमारी को न पताना यह सब पूरी वास्तविकता नहीं मर दुःख रहित है। इस पञ्चान परिस्थिति की विवरी कि हम राजकुमारी का पुत्र विवाह नहीं दे पाए। हालाँकि चाहाने वाली न राजकुमारी का कहानी, पर उस नामा नहीं हुआ।

और राजकुमारी को यह रहस्य नहीं पता।”

‘क्या ?’ पदवली न पड़ा।

“इसीलिए कि राणी सा की विद्रोह और प्रतिशोध की भावना कम न हो। मैं चाहता था कि राणी सा अपने पीहर वालों से गहरी द्वेषता रखें और वह हमारे साथ मिल कर हमें बल प्रदान करें। और आप सबने राणी सा का प्रतिशोध देख ही लिया।”

दरबार में सन्नाटा छा गया।

कामदार ने विश्वस्त स्वर में कहा, “मैं अपने धर्म और अपने परिवार की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि राणी सा विषवा नहीं है। वह कुमारी है। गंगा की तरह पवित्र और श्रेष्ठ।”

हम्मीर के मुख पर सहस्र सूरज चमक उठे।

दरबार में खुशियो पर खुशियाँ छा गईं।

— — —

२३

राणी दिन भर चित्तौड़ के गढ़ का अवलोकन करती रही। पद्मिनी को जौहर का स्थान। वह सुरग जो भीतर-भीतर जौहर के गौमुख-कुंड तक गई हुई थी। इसी कुंड में सभी जौहरव्रत की नारियों ने स्नान किया था। महाराणी और अन्य वीरागनाओं ने इसी गुप्त रास्ते से जाकर जौहर किया था।

महाराणी पद्मिनी का जल के मध्य स्थित महल। वह स्थान जहाँ से उमे दर्पण में पद्मिनी का प्रतिबिम्ब दिखाया गया था।

“सचमुच यह स्थान प्रशमा के योग्य है वरजी, कितना कलात्मक निर्माण है इसका। हम इस दर्पण में उसकी प्रतिछवि ही देख सकते हैं पर उसे नहीं।” राणी ने कहा।

वह नौका में बैठकर पद्मिनी के महल में गई।

उस महल में वह मग्नमुग्ध सी खड़ी रही। देखते-देखते, उसके नेत्र

अश्रुओं से भर आए। वह बरजी से बोली, “आततायी खिलजी को क्या मिला? क्या रूप और यौवन मनुष्य को इतना पागल बना सकता है?”

बरजी ने कुछ कहना चाहा। तभी गढ़ की कोई पुरानी दासी बोल उठी, “उसकी आयु साठ के लगभग थी। चेहरा भुर्रियों से भरा पड़ा था। आँखें भीतर घँस गई थी। मुँह में दाँत एक भी नहीं था।”

“राणी सा! खिलजी को यहाँ इमशान मिला। मानवी रक्त माँस से उत्पन्न विपाक्त घुआ। सच, वह भी चित्तौड़ की दुर्गति देखकर काँप उठा था।”

राणी महल को देखने लगी।

मुख्य द्वार पर हाथियों की लट्टी।

पृथक जनानी हथोड़ी।

दामियों के रहने के लिए पृथक वक्ष।

वहाँ वे बहुत देर तक रही। वापस आते हुए वे कालिका जी के मंदिर में भी गई। मंदिर भव्य-पाषाण खंडों से निर्मित था। पाषाण खंडों पर सृष्टि के चित्र अंकित थे।

उधर-उधर घूमते-घूमते मध्या हो गई।

आन चित्ताट की उमि दखते की जननी थी। सभी घरों में घी के दीए जल रहे थे। लोग जड़न मना रहे थे। नृत्य-गीत का सागर लहरा उठा। लाग बसूम्य प निमग्न थे आर हाम-परिहाम कर रह थे।

हम्मीर की राणी न ननादाय के मध्य पद्मिनी के महल में रहना पसंद किया। महल को तल्लग सज्जित किया गया। उसकी प्रतीमिकाओं से गरर प्रत्यक्ष कल का सुगमि से चित्त किया गया। उस पर मगन पनासादा की सुगोभित किया गया। जनादन आर द्वारा पर पुष्पा की सन्ना की गढ़।

राजा न अरत अग-प्रत्यग का नोर्गपिक अगगा प चित्त किया। राजा मोल्लिक कटहार एव अय अरकार नो पहन। वग्न-वृत्ताक पदरते मार्गी ललक सुय की श्री वृद्धि कर रह थे। उस के दीपा की गुप्ता।

सर्वत्र सुवास का साम्राज्य था ।

हम्मीर नौका पर सवार होकर महल आए ।

राणी अगवानी करने के लिए आगे बढ़ी ।

हम्मीर हृत्प्रभ-सा राणी के अप्रतिम रूप को देखता रहा ।

“आज का दिन कितना शुभ है राणी ! हमारे सकल मनोरथ पूर्ण हो गए ।”

“हां राणाजी, मनोरथ क्या, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मुझ पर से प्रभु का शाप उतर गया है ।”

“नहीं राणी ! यो कहो कि रुष्ट प्रभु हम पर प्रसन्न हो गए हैं ।”

हम्मीर आगे-आगे थे और रानी पीछे-पीछे । दो दासियों के अतिरिक्त वहाँ कोई नहीं था । रानी ने पेय-पदार्थ के स्विणिम-पात्र हम्मीर के समक्ष रख दिए ।

हम्मीर ने मुस्कराकर कहा, “रानी को यह विदित होना चाहिए कि हम कोई भी मादक-पेय का पान नहीं करते । हमे मादक पदार्थों से घृणा है ।”

“राणा जी, इसमे केवल दूध है । केसरिया दूध ।” कह कर राणी ने हम्मीर की ओर प्रमत्त मुख से देखा ।

हम्मीर अपना भारी अंगरखा खोलकर बैठ गया । सिर की पगड़ी को उसने एक रजत-काष्ठ निर्मित चौकी पर रखवा ।

राणी ने दासी को पुकारा, “वरजी सुनना ।”

हम्मीर ने पूछा, “दासी को क्या बुलाया है ।”

“आपके पादुका के लिए ।”

“क्यों, क्या मैं अपनी पादुका स्वयं नहीं खोल सकता । सरदार हम्मीर उन राणाओं में नहीं है जो अपने निजी कर्म को भी दूसरों के सम्बल बिना नहीं करते । मैं स्वयं किसान युवती का बेटा हूँ । प्रत्येक कार्य मैं अपने ही हाथ से करना अधिक पसंद करता हूँ । और वह व्यक्ति भी क्या जो अपने कर्म में निष्प्रयोजन ही दूसरों को कष्ट पहुँचाए । ईश्वर ने

हमें ये दो हाथ निरन्तर कुछ कम करने लिए दिए हैं। चरण चलने के लिए है। फिर हम इतने अकर्मण्य क्यों बनते हैं जिससे समय पर हमें अनुचित कष्ट उठाना पड़े। मैं तुम्हें भी परामर्श दूंगा। वीरांगनाओं की भांति विपुल विलास की वारिधि से दूर रहकर अपना काम खुद करो।”

“अगर राणाजी को मेरे कथन से कष्ट हुआ तो मैं क्षमा चाहती हूँ।”

“नहीं राणी, आज मैं तुमसे क्षमा मागता हूँ। मैंने पति होकर पति के क्तव्य को नहीं निभाया। जब मैंने देखा यह युवती युवती नहीं, राजनीति को सफल बनाने का साधन मात्र है तो मैंने भी तुम्हारे साथ एक सीमा तक वैसा ही व्यवहार किया। हालाँकि तुम्हारे सम्मुख मेरी वह भावना मर जाती थी। तुम्हारे मुख की अपूर्व अलौकिक उज्ज्वलता का अवलोकन करके मेरे मन में वह विचार हटाकर उठता कि यह नारी अग्नि में तपित कुन्दन की भांति शुद्ध है। सच, तुम्हारा मानिध्य शांति और सुख की सृष्टि करता है।”

‘राणा जी के स्पष्ट कथन ने मेरे मन में उनका सम्मान और बढ़ा दिया।’

“राणा ! आज पूज्य कामा ना जीवित होने तो कितना आनन्द



हम्मीर उन पर दृष्टि जमा कर बोला, "मौजीराम ने रहस्य का उद्घाटन करके मेरे मन के सन्देह को दूर कर दिया, पर यहाँ के सामन्त और उमरावों के मन में यह सन्देह सदा बना रहेगा। उन्हें विश्वास नहीं आएगा कि राणी विधवा नहीं है। वे मौजीराम के इस कथन को भी राजनीति चाल समझेंगे।

"समझेंगे तो समझते रहें। मैं यह जानती हूँ कि कामदार जी इतना भयानक झूठ नहीं बोल सकते। वे अपने पुत्र और परिवार की सौगन्ध नहीं खा सकते।"

"इसके उपरान्त मैंने उससे एकात में दुवारा पूछा। वह विगलित हो उठा। प्रायः जब मैं उस पर भ्रमिया सन्देह करता हूँ तब उसे बड़ी पीड़ा होती है और वह असह्य हो जाता है। इसलिए यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि तुम विधवा नहीं हो। चाहे हमारे सामन्त और मसार इसका अर्थ जो भी क्यों नहीं लगाए।"

चाँद बदली में छिप रहा था।

दीए का स्नेह घट रहा था, पर हम्मीर के हृदय में प्यार का नूतन प्रदीप प्रज्वलित हो रहा था।

२४

आदि कुल-देवता सूर्य की अर्चना में निमग्न था हम्मीर। मंदिर से घटाध्वनि और पुष्पो एव धूप नैवेद्य की सुगन्धि आ रही थी।

आकाश की अरुणिमा लुप्त हो गई थी। सूरज की उज्ज्वल किरणें गड के कंगूरों की स्पर्श करने लगी थी। हम्मीर पीताम्बर पहने हुए बाहर निकला। सूर्य को अर्घ्य चढ़ाता हुआ मन्त्रोच्चारण करने लगा—

"हे सत्कारक और अनिष्टहन्ता सूर्य! तुम जिस दीप्ति द्वारा प्राणियों के पालक बनकर जगत को देखते हो, हम उसी की प्रार्थना करते हैं।"

“अनुरूप दीप्ति युक्त सूर्य । आज उदित होकर और उन्नत गगन में चढ़ कर मेरा हृदयरोग [या मानस रोग] और हरिमाण [‘हलीमक’ रोग या शरीर] रोग दूर करो ।”

[ऋग्वेद, सूक्त ५०, प्रथम अष्टक  
अध्याय ४ ले० रामगोविंद त्रिवेद]

अचंनो से निवृत्त होकर वह विश्राम-गृह में गया ।

एक प्रहरी ने सत्वरता से आकर सूचना दी । “देवी मां बरवडी की सवारी आ रही है ।” चित्तौड़ आए काफी दिन बीत गए ।

हम्मीर ने तुरन्त राज्य वस्त्र पहने और स्वयं सदा बरवडी की अग-वानी के लिए गया । हनुमान पोल पर हम्मीर मां से मिला । मां लग-यी और उसके चेहरे पर पीताभा स्पष्ट भलक रही थी । हम्मीर उसे अनिमेष दृष्टि से देखता रहा । क्षण भर के लिए वह त्रिभु हो गया । मां कितनी वृद्धावय हो गई है ? फिर उसने आगे बढ़कर मां के चरण स्पर्श किए ।

मा न डोनी से उतर कर हम्मीर को छाती से लगा लिया । उसकी आंखों में अश्रु उमड़ना आण ।

“बेटा इतर मुझे तुम्हारी ओर (याद) पड़न आ रही थी । मोच रगी थी कि चित्तौड़ तिनय के पन्नाय कया मेरा पटा मुझे भन गया

उस दिन वरवडी के पास हम्मीर बहुत देर तक बैठा रहा । वरवडी ने उसे बताया कि अभी चित्तौड़ पूर्ण रूप से सुरक्षित नहीं है । मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि अभी चित्तौड़ पर एक भयानक आक्रमण और होगा । मेरा तुम्हें आदेश है कि तुम रात दिन शस्त्रों के निर्माण में और सेना की वृद्धि में लग जाओ ।”

“जो हुक्म ।”

“बड़े-बड़े सरदारों को हुक्म कर दो कि वे अपने ठिकानों में सेना को तैयार रखें तथा वे स्वयं चित्तौड़ में ही रहें, ताकि युद्ध के समय योद्धाओं के लिए इधर-उधर दौड़ना न पड़े । मेरी ज्योतिष विद्या कहती है कि अभी एक बार भयानक रक्तपात होगा ।”

“माँ ! चारण अमरदान जी अहिंसा की बातें करते हैं । चारण जी आजकल हिंसा और युद्ध के विरुद्ध हो गए हैं । अब उन्होंने तलवार और बीरो में उत्साह वर्धन करने वाली कविता की रचना ही छोड़ दी है । कहते हैं, हिंसा व्यर्थ है, युद्ध मनुष्य को राक्षस बना देता है ।” पवन सी ने प्रश्न किया ।

“उनका कथन भी गलत नहीं है, पर जब तक कोई राजा अपने आपको इतना महान और शक्तिशाली नहीं बना लेता कि उसका आतंक विद्रोह करने ही न दे तथा दूसरी शक्तियाँ उसका लोहा मान लें, साथ ही उसका साम्राज्य अखंड हो, तभी वह हिंसा का परित्याग कर सकता है । सम्राट अगोक इसका एक उदाहरण है । पहले वह चंड और प्रचंड था, बाद में वह प्रियदर्शी बना । लेकिन अभी हम चारण जी के महामंत्र अहिंसा को अपना लें तो चित्तौड़ और हमारा अस्तित्व सकट में पड़ जाएगा । ऐनी अहिंसा मनुष्य को अकर्मण्य बनाती है और उसका परिणाम वही होता है जो गजनवी के आक्रमण पर सोमनाथ मंदिर का हुआ था । तुम जानते हो, बौद्धों के वैक्तिक मोक्ष ने मनुष्य को उदासीन बना दिया था । उनमें दूसरे के प्रति विरक्त कर दिया । परिणाम यह निकला, विद्रोहियों और विदेशियों ने भारत पर आक्रमण करना शुरू

कर दिया। तब चाणक्य ने नये अध्याय का सूत्रपात किया।” हम्मीर ने क्षण भर रुक कर कहा, “काका सा की दो बातें बड़ी सफल सिद्ध हुईं। अल्प वचन योजना द्वारा देश की शक्ति और निर्माण के लिए धन-मग्न और असहयोग द्वारा शत्रु को निबल और दरिद्र करना। मैं भविष्य में आवश्यकतानुसार इनको प्रयोग में लूंगा।”

बरबड़ी के अधरो पर ममता भरी मुस्कान नाच उठी। उसने हम्मीर की पगड़ी पर हाथ रख कर कहा, “अब तुम्हें कोई भी पराजित नहीं कर सकता। वीरता के साथ विद्या की वृद्धि और प्राचीन घटनाओं से शिक्षा, वरस यही निपुण पुरुष के गुण होते हैं।”

मेरा ने कहा, “मुझे विश्वस्त रूप से यह पता लगा है कि जेसा बादशाह मुहम्मद तुगलक की शरण में गया है। त्याग और उत्तेजित स्वभाव का वनी तुगलक स्वयं चित्तौड़ पर आक्रमण करने आ रहा है।”

“बरबड़ी के कान खड़े हो गए। उसकी अर्ध-मुद्रित आँख चमक उठी। बोली, ‘यवन बादशाह अपनी क्या, अपने मारे मातहतों की सेनाएँ लेकर भी आ जाय तो चित्तौड़ को विजय नहीं कर सता। चित्तौड़ अब हम्मीर का ही रहगा।’

हम्मीर ने बाम्नी को अपने पाम बुनाया और उसे विद्वान-गण घोषित करके पौन का नेत्र दिया और कई गाँवों के महिन आतरी गाँव का ताम्रपत्र दिया। उस अपने हृदय में जगा कर कहा, “तुम आज से चित्तौड़ के मन्त्र चारण हो। तम्हारी रक्षा हम्मीर का जगत मदा करता

लिखा है, लेकिन हम्मीर पुरुषार्थ करना ही छोड़ दे तो भाग्य क्या करेगा ? मैं समझती हूँ रण-नीति कुशल कामदार जी को शीघ्र बुला कर कोई न कोई निश्चय कर लेना चाहिए ।

पवन सी ने कहा, "माँ ठीक कहती है ।"

हम्मीर ने कहा, "आज सध्या-वेला एक समा रख ली जाय ।"

"जैसी राणा जी की आज्ञा ।" कई स्वर एक साथ सुनाई पड़े ।

आज्ञा पाकर सब सरदार चले गए ।

हम्मीर और बरबडी दोनों रह गए ।

"मैं अभी राजवंश को आपकी सेवा में बुलाता हूँ । मेरी इच्छा है कि आपको कोई श्रेष्ठ औषधि दिलाई जाय ।"

"इस उम्र में मुझे औषधि की नहीं, ईश्वर भजन की आवश्यकता है । वेदा, अथ चंद्र ही दिनों की मेहमान हूँ । तुम एक विजय और कर लो वस, मेरी यही कामना है ।"

"माँ ! अभी मुझे तुम्हारी बहुत आवश्यकता है । हम्मीर के अच्छे दिनों में तुम नहीं रही तो हम्मीर अपने आपको बहुत भाग्यहीन समझेगा ।"

बरबडी ने स्नेहाभिमूति स्वर में कहा, "मैं ज्योतिषी हूँ । मेरा कर्तव्य है कि अपनी विद्या के चमत्कार से अपने स्वजनो में उस आत्मबल का संचार करूँ जो उनके जीवन और जगत के निर्माण में सच्चा सम्बल बने । तुम्हारे पर मैंने किसी प्रकार का उपकार नहीं किया । तुमने मुझे माँ कहा और मैंने तुम्हें ममता दी । तुम्हारे पूर्वजों का हम पर उपकार भी हो तो आश्चर्य नहीं । यह उसका प्रत्युपकार भी हो सकता है । विन्तु ऐसे समय में तुम्हें अपने उन साथियों को कभी विस्मृत नहीं करना चाहिए, जिन्होंने तुम्हें प्रारम्भिक काल में सहायता दी थी ।

"ओह !" हम्मीर चौंक पड़ा, "मैं आपके पास इतना तन्मय हो गया कि कुछ ध्यान ही नहीं रहा । अगुनायानोर का भील नेता आया हुआ है । वह मेरी वाट जोह रहा है । माँ ! इन भीलों ने उपकार का कोई चंदना नहीं । इन्होंने स्वयं रातों को अपनी आँखों में विश्राम कराया

और हमे निश्चितता की नीद दी, ये स्वयं भूखे-प्यासे रहे पर हमे अन्न दिया, ये लोग हर घड़ी, हर क्षण धनुष बाण सँभाले कैलवाडा की पहाड़ियों में घूमा करते थे। हमारा और उनका बन्धन अटूट रहेगा।

“जाओ बेटा पहले उनसे मिलो।”

प्रतीक्षागृह में अगुनायानोर का भील नेता बाका और मेरा बैठे थे। हम्मीर के आगमन की सूचना प्रतिहारी ने दी। बाका और मेरा अपने आसनो को छोड़ कर खड़े हो गए। हम्मीर ने उन्हें बैठने का संकेत किया।

भील नेता लोहे का एक अत्यन्त सुन्दर धनुष बाण लाया था। हम्मीर की भेंट करता हुआ वह बोला, “चित्तौड़-विजय के उपलक्ष्य में आपको हमारी यह भेंट है।”

हम्मीर ने बाका को हृदय से लगा कर कहा, “बाका, तुम्हारे उपकारों से सारा मेवाड़ कृतज्ञ है। चाहे इतिहास ही क्यों न बदल जाय पर मेवाड़विपति के वीर अगुनायानोर के भीलों के उपकार नहीं भूल सकते। हम तुम्हें अपनी भील सेना का सेनापति नियुक्त करते हैं और तुमसे आशा रखते हैं कि तुम सदा की तरह हमारे स्वामि-भक्त रहोगे। हमारे से तात्पर्य यह है चित्तौड़ के सिंहासन से हम तो तुम्हारे मित्र हैं। हम में और तुम में तनिक भी अन्तर नहीं है।”

“मैं आपके और आपके शासन के प्रति सदा वफादार रहूँगा।”

“फिर तुम तुरन्त अपने आदमियों को शस्त्रों से सज्जित करके यहाँ आ जाओ। मुना है, चाहान मानदेव का बेटा जेगा दिन्नी के मादगाह के पास गया है। गुनचरा की यह भी सूचना है कि मय्य मादगाह दिन्नी की तरफ चित्तौड़ का विजय करने के लिए आने की राह रखा है। ऐसी स्थिति में हमारा यह प्रथम कर्तव्य हो जाता है कि हम अश्व से शक्ति प्राप्त होकर यहाँ से जायें।”

बाका ने कहा, “हमने मदरगार में उपस्थित हो जाऊँगा।”

हम्मीर ने उसे सम्मिलित करने के हेतु एक वक्ता दी।

मन्त्रणा कक्ष में मेवाड के सभी सामन्त एकत्रित हुए। दिल्ली की अपार सेना और महान शक्ति का सामना करना था। पवन सी, मेरा, जेतसी, मौजीराम और अनेक सरदार।

मौजीराम ने सर्वप्रथम खड़े होकर कहा, "हमारा गुप्तचर ब्राह्मण वंश का उज्ज्वल नक्षत्र दीपचन्द सर्व प्रथम दिल्ली के सम्पूर्ण समाचार प्रस्तुत करेगा।

"यह दीपचन्द कौन है?" सबकी आँखों में प्रश्न नाच उठा।

मौजीराम ने कहा, "दीपचन्द हमारे राजपुरोहित का पुत्र है। जब मैंने इसके स्वभाव का अव्ययन किया और एक दिन उसे उत्सव में अपनी मर्यादा और धर्म के विपरीत रंगशाला में बनजारा बने हुए देखा तो मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि यह युवक एक चतुर गुप्तचर बन सकता है। और मैंने इसे सुयोग्य गुप्तचर की सारी बातें समझा कर दिल्ली भेजा। और यह वहाँ के सारे समाचार लेकर आ गया है।"

हम्मीर और अन्य सरदार विमूढ से मौजीराम की इस चतुराई को देखते रहे। अन्त में दीपचन्द उनके सम्मुख उपस्थित हुआ। वह बनजारे के भेष में था। राजपुरोहित भी उसे नहीं पहचान सका।

उमने राणा को एवं समस्त सामन्तों को प्रणाम करके कहा, "जैसा ने मुहम्मद तुगलक को चित्तौड़ के वैभव, सम्पत्ति और समृद्धि के बारे में बड़ी-बड़ी कथाएँ सुनाई हैं। उमने पद्मिनी की बान को पुन दोहरा कर कहा कि वहाँ अतुल धन और रूप विखरा पड़ा है। अगर जहाँपनाह शीघ्र ही चित्तौड़ पर आक्रमण कर दें तो वे अतुल धन और जन पा सकते हैं, जिससे जहाँपनाह अपना कार्य सहजता से पूर्ण कर सकते हैं।"

दीपचन्द ने क्षण भर चुप रहकर यह भी बताया, "बादशाह का मस्तिष्क सुस्थिर नहीं है। प्रचण्ड प्रजा का धनी होने के बावजूद इतना

जल्दबाज है कि उसके काम में सुप्रबन्ध का अभाव ही रहता है जिसका परिणाम सदा बुरा ही निकलता है। वह शीघ्र ही चित्तोड पर चढ़कर आने वाला है। मेरी राणा जी से प्रार्थना है कि वे शीघ्र ही तैयार होकर युद्ध भूमि में पहले ही उतर जाय।”

हम्मीर ने उठकर कहा, “हमें आज ही अपने दूत दौड़ाकर अपने सामन्तो और समर्थको को यहाँ बुला लेना चाहिए और जितने ही सहज माग हैं, उन्हें अवरोद्ध करा देना चाहिए। अगर हमने तुगलक की सेना को वीहट पथो में प्रवेश करा दिया तो हमारी विजय निश्चित है।”

पवनसी क्रोध से उन्मत्त हो उठा। उसकी आँखों में सहस्रो तलवारें एक साथ चमक उठी। वह उठा और उसने तीव्र स्वर में गजना की, “मुझे अनगसिंह जी की बातें व्यर्थ लगती थीं पर अब मुझे लग रहा है कि वह ठीक ही कहता था कि क्षत्रिय का एक ही धर्म है, एक ही कर्म है, वह है—युद्ध। उसे क्षण भर का विध्राम कहाँ? उसके जीवन में कोई भी शांति का विराम-चिह्न है? बलवान जब चाहे शांति से बंटें हुए प्राणियों पर आक्रमण करके उनकी शांति और सतोष को छीन सक्ता है। मेरी ऐसी धारणा होती जा रही है कि एक बार महान शक्ति का सच्य करके सारी पृथ्वी को रोद दे आर एक ऐसे राज्य की स्थापना कर दे जहाँ कोई किसी को अनुचित रूप से नहीं सताए।”

हम्मीर ने कहा, “पवनसी का कहना ठीक है, किन्तु अभी हमें यत्नमान स्थिति का सामना करना है।”

मेरा ने कहा, “तीव्र ही हमारी सेनाओं को प्रन्थान करा दिया



“तब ?” पवनसी ने पूछा।

“मैं समझता हूँ, हमें शीघ्र ही यहाँ से प्रस्थान कर देना चाहिए।

२१ भील, सामन्त और मीणा वीर सगठित होकर सामना करें।” हम्मीर ने कहा, “सामन्त श्री पवनसी सेनापति का पद सम्भाल लेंगे। जेतसी मेरे साथ रहेंगे, मेरा और वारूकी दाएँ-बाएँ में आक्रमण करेंगे।

“ऐसा ही ठीक रहेगा।” कामदार ने कहा।

“ठाकुर फतहसिंह का यह कार्य रहेगा कि वे कल वीम विश्वस्त सैनिकों को चारों ओर दौड़ा दें और वीरों को आह्वान कर दें।”

फतहसिंह ने उठकर कहा, “राणाजी निश्चित रहे।”

“चारण वारूकी युद्ध की घोषणा की खबर और वीरों में उत्साह भरना तुम्हारा धर्म है। तुम चित्तौड़ के घर-घर में इस बात का आह्वान कर दो कि एक बार फिर से जुझार बन जाएँ।”

“कल से हर चारण यहाँ वीरता का गीत गायेगा। उनके गीतों में वीरों में मृत्यु-से लड़ने की गूँज होगी, पर्वत से टकराने का घोष होगा।”

हम्मीर ने सभा को समाप्त कर दिया।

हम्मीर आज राणी के महल में न जाकर सीधा अपने कक्ष में चला गया। वह उद्विग्न और चिंतित था। उसके मुख पर चिंता की रेखाएँ स्पष्ट झलक रही थी। रसोई से दासी ने आकर कहा, “महाराज, थाल कहाँ लाया जाय ?”

हम्मीर की भोजन करने की इच्छा नहीं थी। अतः उसने दासी को जाने का संकेत करके कहा, “आज मेरे लिए थाल न लगाया जाय। मैं भोजन नहीं करूँगा।”

दासी गर्दन मुकाए चली गई।

अभी थोड़ा समय भी नहीं बाता था कि राणी ने कमरे में प्रवेश किया। हम्मीर तब तक शय्या पर शायित हो गया था। उनका मुख गंभीर था। राणी ने चरण-स्पर्श करके कहा, “क्षमा चाहती हूँ, बिना आज्ञा आने के लिए। महाराज, आज भोजन क्यों नहीं कर रहे हैं।”

“इच्छा नहीं है राणी।”

“क्या फिर युद्ध का घोष होने वाला है।”

“हां, तुम्हारा जेसा दिल्ली के बादशाह की अतुल शक्ति लेकर चित्तौड़ पर आक्रमण करने आ रहा है। वह पुन चित्तौड़ मुभसे छीनेगा। वह अपने हाथ से अपनी बहिन का सिन्दूर गिराएगा।” राणी ! क्या तुम उसकी सचमुच बहिन हो ? मुझे कभी-कभी ऐसा लगता है कि तुम्हारे बारे में जो कुछ सुना और कहा गया है, वह मिथ्या है। उसमें सत्य का शतांश भी नहीं। मभी कपोल-कल्पित और मनगढ़न्त ! न तुम मालदेव की बेटी हो, न तुम जेसा और हरिसिंह की बहिन हो। ऐसा लगता है कि तुम उनकी राजनीति की एक साधन वस्तु हो। आज मैं तुम्हें कुछ कहना चाहता हूं कि आखिर उसकी इतनी राजलिप्सा क्यों ? चित्तौड़ हमारा है, हमारे पूर्वजों का है फिर तुम्हारे भाई का इस पर मन क्यों ललचाता है। फिर क्या उसे अपने बहिन के सुहाग की चिंता नहीं ? चुप क्यों हो ?”

राणी का मुख श्वेत हो गया। वह कुछ भी नहीं बोल पाई। वह सिर्फ रोती रही, रोती रही।

“तुम कुछ भी हो पर चित्तौड़ की महाराणी हो। मैं तुम्हारे पद में जरा भी अन्तर नहीं आने दूंगा, पर इस बार मैं तुम्हारे भाइयों से कुछ निराश करूंगा। या अपना सवस्व विमर्जन कर दूंगा या उसका मृत्यु के हाथों सौंप दूंगा।”

राणी ने हम्मीर का चरण-स्पर्श करके रोदन भरे स्वर में कहा, “म प्रभु में प्रार्थना करूंगी कि आप मेरे सारे भाइयों को समस्तोन्न पट्टे-चान में नफ़्तन द्या, पर आप मुझे सदिव्य-दृष्टि में न देखें। राणाजी ! मुझे आपका दार्दिक प्रेम चाण्ण। मेरा धर्म और कनव्य आपसे मुग्न में है। भोजन लाऊँ ?”

‘नहीं राणी’

‘थोड़ा ना भोजन करना होगा, आपसे मेरी मीमन्त्र ।’

‘अच्छा ले आया ।’

आशा के विपरीत कोई भी कार्य नहीं हुआ ।

मुहम्मद तुगलक और जेसा की सम्मिलित सेना पूर्वी भाग से ही आई । वीहड पथ में यवन सेना घबरा उठी । बहुत से यवन सैनिक जटिल पथ को पार करते करते गए । कुछेक अकाल मृत्यु को पा गए ।

इधर हम्मीर अपनी सेना को लेकर कूच कर चुका था ।

सींगोली के पास जहाँ यवन सेना ने पड़ाव डाला था, वही पर हम्मीर की सेना और तुगलक की सेना में युद्ध हुआ ।

हम्मीर और पवन सी के नेतृत्व में यवन सेना पर सीधा आक्रमण किया गया । राजपूत मतवालों की भाँति शत्रु दल पर दूट पड़े, पर वफादार यवन सैनिक व चौहान भी कम बहादुर नहीं थे । उन्होंने भी सुहृद मोर्चा कायम रखा । हम्मीर के जीवन में इतना भयंकर युद्ध कभी नहीं हुआ था । देखते-देखते सहस्रों सैनिक आहत हो गए । खून की नदियाँ बह उठीं । दोनों ओर के सैनिक जान हथेली में लेकर लड़ रहे थे । खूँखार भैंड़ियों की तरह दोनों दल के वीर एक दूसरे पर दूट रहे थे ।

हम्मीर अपनी विकराल तलवार को लेकर यवन सेना के मध्य बढ़ रहा था । वह सैकड़ों योद्धाओं का सहारा बन रहा था । उसका अश्व निर्भय होकर बढ़ रहा था । हम्मीर की विशाल अजानुबाहो का एक-एक झटका दो-दो वीरों का प्राण हर रहा था । हर हर महादेव और अल्लाहो अकबर के नारों से आकाश गूँज उठा था ।

इस भयंकर रक्त-पात के मध्य हम्मीर की दृष्टि मालदेव के पुत्रों पर थी । अग्रत्याशित उसकी दृष्टि जेसा पर पड़ी । हम्मीर उस पर क्षुब्ध सिंह के समान दूट पड़ा । दोनों के विशाल खड्ग आपस में टकरा उठे । उनकी पाँवों के नीचे रुढ़-मुढ़ पड़े थे । शोणित की धाराएँ बह रही थीं ।

हम्मीर ने कहा, "आज मैं तुमसे निराश करने आया हूँ।"

जैसा ने कहा, "छल से चित्तौड़ हथिया कर आपने ममभा होगा, अब हम चैन की वशी बजाएँगे ? पर चित्तौड़ चौहान मालदेव का है, सो मालदेव का ही रहेगा।"

हम्मीर ने वार किया।

अप्रत्याशित कई सैनिक उनके बीच में आगए और जैसा हम्मीर की आखों से ओझल हो गया।

पवन सी ने आकर कहा, "यवन आगे बढ़ रहे हैं।"

हम्मीर ने कहा, "क्या कहते हो ?"

"हाँ राणा जी।"

हम्मीर ने पवन सी को भट से थोड़ा पीछा किया जहाँ उसके थोड़ा थे। उसके कानों में कुछ कहा। पवन सी का घोड़ा हवा से बातें करने लगा। पवन सी के घोड़े को पीछे भागते देखकर हम्मीर के सैनिक विचलित हो गए, पर हम्मीर ने तुरन्त जोर में कहा, "आगे बढ़ो वीरो, विजय हमारी है। बढ़ो आगे बढ़ो।"

सैनिकों ने हम्मीर की तलवार को देखा और वे दुगुने वेग से युद्ध करने लगे। मृतक थोड़ाओं की बाहर गिळली हुई आँखें अत्यंत बीभत्स दृश्य उत्पन्न कर रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे वे कुछ कहना चाहती हैं।

यवन सेना थोड़ी आर अग्रसर हुई।

चारण हाथ में मग निग तज मर में पीरा को तलवार रहे थे।

हम्मीर ने दाद-पाँ और की पहा-िया की शोर देखा। मेरा और बाम्बी क्या करने ना। उनके एक सैनिक को गिरा तोड़ाया और उसे कहा कि बामदार की का कहा कि यवन नना आग तलवार मर रही है पर वह एक चुकी है। मेरा और बाम्बी को मरों कि व पहाटा पर मे तीर मराने हुए तुरन्त आक्रमण करें। युद्ध का रंग बदल जायगा।"

हम्मीर तलवार में ना भिया। तलवार का भीषण मग हम्मीर के

खग से टकराया । दोनों महायोद्धा के पैतरे देखने के काबिल थे । अप्रत्याशित जैसा ने हम्मीर पर पीछे वार करना चाहा तभी पवन सी पीछे आ पहुँचा और उसने जैसा के वार को बीच में ही रोक दिया ।

जैसा ने ललकार कर कहा, “राजपूत भाग रहे हैं ।”

तभी दाएँ-बाएँ से आकाश को गुँजाने वाली जय जयकार गूँजी । हर हर महादेव, जय एकलिंगेश्वर भगवान की जय, हर हर महादेव ।”

और ऊपर से भीलों की भीषण तीर वर्षा आरम्भ हो गई ।

यवन मेना में खलवली मच गई ।

उधर वारूकी मृत्यु की तरह टूट पड़ा ।

मौजीराम पीछे से अश्वों की सेना को लेकर टूट पड़ा ।

इस भीषण तीन तरफे आक्रमण को यवन मेना नहीं सह सकी । वह बीच में धिर सी गई । साफ़ होते-होते मृतको का अम्बार लग गया । इतना भीषण नर-संहार हम्मीर ने नहीं देखा था ।

जब मालदेव का छोटा बेटा हरिसिंह उसके सम्मुख आया तो उसका खून खौल उठा । उसकी आँखों में खून उतर आया और उसका मुख आरक्त हो गया । उसने हरिसिंह को अपनी वलिष्ठ बांहों में भर लिया । उसकी भृकुटियाँ तन गईं । आँखें आग वरसाने लगीं । और दूसरे ही क्षण उसने अपनी कटार से हरिसिंह को खत्म कर दिया ।

पवन सी ने जैसा को पकड़ लिया ।

तुगलक भागा, पर हम्मीर ने उसका पीछा किया और उसे जीवित ही पकड़ लिया । हम्मीर की विजय हो गई ।

रात का पड़ाव था ।

जैसा और मुहम्मद तुगलक हम्मीर के बन्दी थे, पर हम्मीर ने तुगलक साय अत्यन्त सुन्दर व्यवहार किया । उसके सम्मान में किसी प्रकार की भी कमी न आने दी । पर उसने जैसा के माथ दुर्व्यवहार ही किया । उसे साधारण बन्दी का भोजन दिया और उसके पड़ाव में दीया तक नहीं जलने दिया ।

राणा हम्मीर ने रात्रि की भयानक नीरवता मे किसी पुरुष का कठ  
स्वर सुना जो युद्ध की वीभत्सा का वर्णन कर रहा था। हम्मीर ने उस  
आदमी को बुलाया। वह कोई नहीं था वह था चारण अमरदान।

जगली कुत्तो का भौ-भौ। सियारो का हुआ-हुआ।

अधभृत व्यक्तियों की करुण चीत्कारो ने अमरदान को विक्षिप्त सा  
कर दिया। वह रात्रि के अन्धकार मे रणभूमि मे चक्कर लगाता रहा।  
फिर वह युद्ध के विरुद्ध कविता करने लगा।

हम्मीर ने चारण पूछा “चारण जी आप यहाँ कैसे पधारे ?”

सिमोदिया-कुल-भूषण, पर-दुख-कातर, परोपकार व्रत-पालक, धम-  
प्राण एकलिंगेश्वर दीवान राणा हम्मीर जी की जय। मैं यहाँ युद्ध को  
देखने आया हूँ, उम विभीषिका को देखने आया हूँ जिमने मनुष्य से  
मनुष्यता छीन ली है। वह देखो, युद्ध के मदोन्मत्त वीरो की लाशो को,  
पानी की एक-एक बूंद के लिए तटप रही है। क्या किसी विजयी का यह  
वतव्य नहीं है कि वह इन आहत योद्धाओं की सेवा-मुश्रफा करे। यह  
भी विजेताओं का धम है। मैं सब जगह घूमकर आया हूँ। सहस्रा मैनिंगो  
का रक्त जम गया है। शोणित वह-वह कर नदी बन गया है। लगता है  
कि धरती वरुण स्वर मे रोदन कर रही है। ये क्षत-विक्षत शव उन  
आततायियों और राज्य-लिप्सा के अधिकारियों को अभिशाप दे रही ह,  
तुम्हारे स्वार्थो और तृष्णाओं ने अनक प्राणियों को मृत्यु की गाद मे  
सुला दिया। हजारो माताओं की कोख खानी कर दी। हजारो सतियों  
का मुहाग छीन लिया और हजारो बच्चा को अनाथ कर दिया। ओ  
युद्ध कीटो। तुमन रक्त-स्नान पृथ्वी का हाहाकार सुना है।” चारण  
की विह्वलता बढ़ती गई। उसकी श्मि मे ममस्न मृष्टि की करुणा तैर  
उठी। हम्मीर के विनयोमन उन्नमित योद्धा गगे हो गए, उनमे जन्ता  
आ गद। उनके मुँहो पर व्यथा तैर उठी। चारण बोला, “उम हाहाकार  
मे उन अद्धभृतका का ही ममवेत चीत्कार है। वे गता पाए पाए कर  
रो रहे हैं। अन्य भाँगे गए हैं। क्याकि उनका जीवन अभी मगा नहीं

है। उनकी साँसें अभी उनकी आत्माओं से बिलग नहीं हुई हैं ! जाओ, विजय के उन्मादित योद्धाओं, जाओ जो मनुष्यता की पुकार है, उसे सुनो ! युद्ध-परिणाम को देखो, देखो अपनी वीरता का वीभत्स सत्य !

चारण उत्तेजित हो गया। वह विक्षिप्त-सा चीखा "युद्ध वन्द करो। युद्ध वन्द करो। युद्ध मनुष्य को राक्षस बनाती है, दैत्य बनाती है।"

चारण पवन-वेग से चला गया।

हम्मीर की आँखें भर आईं। उसने स्वयं अपनी तलवार ली और कई सैनिकों के साथ वह रणभूमि की ओर पुनः चला। उसने भराए-स्वर में कहा, "आहतों की सेवा हमारा धर्म है। रण रलियों से उनके प्राणों की रक्षा हमारा प्रथम कर्तव्य है। वस्तुतः युद्ध भयकर और विनाशकारी है। वह मानवता को समाप्त करके मनुष्य को राक्षस बना देता है। चलो पवनसिंह, कुछ सैनिकों को साथ ले लो। हमे आहत वीरों की देखभाल करके उपचार करने हैं।"

२७

मुहम्मद तुगलक और जेसा को कारावास में डाल दिया गया। हम्मीर की आज्ञा पर चित्तौड़ में विजय-दीप घर-घर जलाए गए। इस अवसर पर हाथिया की लड़ाई भी दिखलाई गई। उत्सव तीन दिन तक निरन्तर चलता रहा।

अब प्रश्न यह उठा कि बादशाह के साथ कैसे व्यवहार किया जाय।

अपराह्न के समय मन्त्रणाकक्ष में उस दिन मेवाड के बड़े-बड़े थूरमा और सामन्त एकत्रित हुए। गभीर समस्या पर विचार-विमर्श था। मेवाडधिपति हिन्दू-कुल-सूर्य राणा हम्मीर जब आ गये। तब दीवाण कामदार ने उठकर कहा, "सामन्तो, उमरावो और सूरमाओ ! आज हम सब एक अत्यन्त महती प्रश्न के लिए एकत्रित हुए हैं। आप सब

युद्धोपरान्त स्थिति से परिचित हैं ही। यवन बादशाह और क्षत्रिय-कुल-कलक गद्दार जैसा हमारे कारावास में हैं। हमारे साथ दिल्लीपतियों का कैसा सम्बन्ध रहा है, आप सब जानते ही हैं। अलाउद्दीन खिलजी द्वारा चित्तौड़ के निर्दोष बच्चों और स्त्रियों का सहार और छल से चित्तौड़ को जीतना, हम कभी नहीं भूल सकते। हम यह भी नहीं भूल सकते कि उसके कारण हमारी शक्ति काफी क्षीण हो चुकी थी। किन्तु आज उसकी शानोशौकत और बराबर ओहदे का बादशाह हमारे कारावास में सट रहा है। मैं एकलिंगेश्वर दीवारण जी से विनय कहूंगा कि वह उन दोनों को मृत्यु-दंड दे। मेरी व्यक्तिगत राय यही है।”

हम्मीर ने कामदार के बैठते ही कहा, ‘सेनापति पवनसी आप अपने विचारों में अवगत कराएँ।’

पवनसी। सत्रको सम्बोधित करके कहा, “मेरे समक्ष एक ही प्रश्न गंभीर रूप प्रारण करके खड़ा है। मैं आप सत्रमें पूछता हूँ कि भारत पर शासन करने वाला बादशाह इतना भूय और गहूरदर्शी है तो वह एक दिन कोटि-कोटि जनो के लिए शांतक मिद्ध हो सकता है। वह एक दिन सहस्रो मनुष्यों को व्यर्थ ही मृत्यु के मुख में डाल सकता है। जैसा के अनुरोध पर वह शाही सेना चित्तौड़ पर आक्रमण करने आ गया, यह जितनी बड़ी मूर्खता है। और फिर क्या अप्रियार है सिमी को कि जिना गजुता के ही द्वेष उत्पन्न करें। शक्तिशाली ज्ञान का तात्पर्य यह नहीं है कि दुश्मन का दमन। मैं समझता हूँ कि जो पराई आग में जल डालता है, उसका जल बनने देना चाहिए। मैं समझता हूँ कि व्यर्थ रक्त की होखी सेवन वाले व्यक्ति को जीवित बना दिया जाय।”

मेरा उठा। वह जितना ही बोला, ‘मैं गणायी में प्राप्त करने का विचार पुनः ही उसे मार्ग का अप्रियार दे। मैं उसे तीरा में डालनी करना चाहता हूँ।’

तब गणायी ने कहा, “उसको जला करके गलपुत पर बड़ी भारी भनवेंगे। सम्राट् इस्वीगन ने महम्मद गजनवी को कई बार जला



है कि हम्मीर की बात मान लीजिए। क्योंकि भविष्य में तुगलक चित्तौड़ की ओर देख भी नहीं सकेगा।”

तब हम्मीर ने सबको सम्बोधित करके कहा, “मेरा ऐसा विचार है कि तुगलक से पचास लाख नकद और कई नगर लिए जाएँ। जब तक धन अपने पास न आजाए तब तक उसे मुक्त न किया जाय। उसे यह भी कह दिया जाय कि अगर तुमन कोई भी चाल चली तो तुम्हारा सिर घड से अलग कर दिया जायगा।”

सब ने यह तय कर लिया।

वन्दीगृह में मुहम्मद तुगलक बैठा था। हम्मीर को देखते ही उस ने आगे बढ़कर आदाब की। हम्मीर ने उत्तर में जय एकलिंगेश्वर कहा। दोनों पास-पास बैठे। पवनमी और कामदार खड़े रहे।

बादशाह को सभी तरह का आराम था वन्दीगृह में। उसे मखमली गद्दे और श्रेष्ठ भोजन मिलता था। उसके समीप इत्र का दीपक जलता था। एक दाम उसकी सेवा में रहता था, वह जाति का भील था जो कभी किसी भी मूल्य पर विश्वासघाती नहीं बन सकता था।

हम्मीर ने काष्ठ-निर्मित लघु-ग्रामन पर बैठते हुए कहा, “बादशाह को किसी तरह का कष्ट तो नहीं है।”

“नहीं मेवाडाभिपति, हमें किसी तरह की तकलीफ नहीं है, पर क्या एक बादशाह के लिए कम यह तकलीफ है कि वह दुश्मन की कैद में है।”

हम्मीर ने विह्वल कर कहा, “शिल्ली मलतनन के म्यामी शायद यह भूल गए हैं कि वे स्वयं ही मकट में पड़े। तिनकी द्वारा ध्वज चित्तौड़ में झुड़ भी नहीं गया है। चाहान स्वयं राज्य सञ्चालन के लिए जानौर म धन मागत व, फिर आसन ऐसा बदम गया उठाया?”

‘आर ? आप नहीं समझा, बादशाही हमारी आदत का गान हिम्मा है। हम उस नहीं गान समझे। फिर चाल कर जाता, ‘अर मुन हम कैद में मन रखिए मार दीजिए या ओर दीजिए।’”

‘हमारे अस्त्रधारिणों की गान है कि आपने पचास लाख नकद

और आय वाले कई नगर लेकर आपको छोड़ दिया जाय ।”

“हमें आपकी शर्त मजूर है ।”

“फिर आप शाही-फरमान द्वारा रुपये का प्रबन्ध कराइए ।”

तुगलक ने अपनी अगूठी के साथ एक पत्र लिखा और वह पत्र एक दूत के साथ उसी समय रवाना कर दिया गया ।

जैसा ने चीख कर कहा, “मैं राणाजी से मिलूंगा, राणाजी ।”

हम्मीर ने घूम कर देखा । जैसा नेत्रों में अश्रु भर कर खड़ा था उसने धर्म की सौगन्ध खाकर कहा, “मैं आपका स्वामिभक्त रहूंगा, मुझे छोड़ दीजिए । राणा जी मैं आपकी गाय हूँ ।”

राणी ने भी उसकी मुक्ति की प्रार्थना की थी ।

सबको उस पर दया आ गई । जैसा के शब्दों में सत्य का भास था । हम्मीर ने उसकी वेडियाँ कटवा दी और उससे एक प्रतिज्ञा करवाई । और उसे नीमघ, जोरणा और रतनपुर के गाँव दिए, ताकि वह सम्मान से निर्वाह कर सके । दान-पत्र देते समय हम्मीर ने उससे कहा, “तुम हमारी सेवा विश्वस्त रूप से करते रहोगे और अपने कुटुम्ब का पालन करते रहोगे । एक समय था जब कि तुम यवनो के गुलाम थे और आज तुम स्वाजातीय के दास हो । यह सत्य है कि तुम्हें पितृ राज्य जाने का क्षोभ है, किन्तु शान्ति से विचार कर देखो कि यह राज्य है किसका ? चित्तौड़ के वास्तविक अधिकारी कौन हैं । मैंने किसके राज्य पर अधिकार किया है ? यह हमारा था, इसलिए ये हमें मिल गया । जिस मेवाड के कण-कण में हमारे पूर्वजों का रक्त चमक रहा है, उस पर कौन दूसरी शक्ति अधिक दिन तक रह सकती है । आज भगवती की महती कृपा और एकलिंगेश्वर की आशीष से सब विपदाओं की समाप्ति होकर अब नए जीवन का सूर्यपात हो रहा है । तुम यह मत समझना कि मैं इस देश और लक्ष्मी को कामिनी की अर्चना में खो दूँगा । मेरा समस्त जीवन मेवाड के लिए है, देश के नव-निर्माण और सम्पूर्ण विकास के लिए है । अब खोई हुई मेवाड की श्री की पुनः स्थापना होगी । ”

हम्मीर ने देखा राजपुरोहित के साथ अन्य सरदार भी आ गए हैं ।

हम्मीर ने पुन अपनी बात को जोड़ा, “पहले मैंने चित्तौड़ की मुक्ति के लिए देशवासियों को आह्वान किया था और उन्होंने अपने देश के लिए एक-एक सिक्का बचाया था और अब उसकी नव-रचना के लिए उनसे प्रार्थना करूँगा कि वे अल्प बचत करे, वे अपने देश का नया निर्माण करें, ताकि भविष्य में कोई भी चित्तौड़ की ओर आँख उठाकर न देखे ।”

जैसा ने घरती पर से धूल उठाकर अपना तिलक किया, “मैं सीगन्ध खाता हूँ कि जहाँ मेवाड़ियों का पसीना बहगा, वहाँ मेरा खून बहेगा ।”

राजपुरोहित न विह्वल होकर कहा, “राणा हम्मीर की जय, एन-लिगेश्वर दीवाण की जय, विपम घाटी पचानन की जय ।”

और हम्मीर अपने समस्त साधियों के सहित कालिकाजी के मन्दिर की ओर चला जहाँ रक्तपात में दूर हटकर देश के नव निर्माण का महा-प्रायोजन आरम्भ करेगा ।

^

^

^

मुहम्मद तुगलक को तीन माह बारबाम में रख कर उगमे कई नगर व पंचाम लाग नवद गण लेकर छोड़ दिया । परगनी मा का देहान्त हो गया था । हम्मीर ने मा की पुण्य-स्मृति में एक मन्दिर बनाया—जो प्रतापगढ़ का मन्दिर बना । हम्मीर ने मरते मरते परगनी न यही कहा, “जो राजा जीर होता के गाथ जीर होता है, जो राजा अपने विशेष गरिमाग्नियों के शक्ति-ममस्त पता की समस्याओं में तमस रहता है, तो राजा

